Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अग्रवाल जाति का प्राचीन इतिहास

सत्यकेतु विद्यालङ्कार, डी. लिट.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इतिहास-सदन, नई दिल्ली

इस संस्था के उद्देश्य निम्नलिखित हैं---

(१) इतिहास, अर्थशास्त्र, राजनीति, भूगोल, भ्रमण, तथा समाजशास्त्र विषय की उपयोगी तथा उच्चकोटि की पुस्तकें प्रकाशित करना।

(२) भारतीय इतिहास के विविध प्रश्नों पर विचार कर नई खोज करना।

(३) देश विदेश की राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक व अन्य समस्याओं पर निष्पक्षपात तथा वैज्ञानिक दृष्टि से विचार करना और उसके परिणामों को पुस्तकों व पत्रों द्वारा प्रकाशित करना।

(४) विविध देशों की सभ्यता व संस्कृति का अनुशीलन करना, तथा इसके लिये भारत तथा अन्य देशों में यात्राओं का संगठन करना।

कोई भी सज्जन १) प्रवेश शुल्क देकर इतिहास-सदन के सदस्य बन सकते हैं। उन्हें सदन से प्रकाशित सब पुस्तकें व पत्र पौने मूल्य पर प्रदान किये जावेंगे।

शीघ्र ही इतिहास सदन के सदस्य बनकर लाभ उठाइये।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अग्रवाल जाति का प्राचीन इतिहास

लेखक
मंगलाप्रसाद पारितोषिक विजेता
प्रोफेसर सत्यकेतु विद्यालंकार, डी-लिट० (पेरिस)

(अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी अग्रवाल जातीय कोष,
बम्बई द्वारा प्रकाशित)

मिलने का पता
इतिहास-सदन
एम० १, कनाट सर्कस
नई देहली।

पहला संस्करण | सन् १९३८ | मूल्य सजिल्द ३) | साधारण २॥)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रकाशक—
अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी अग्रवाल
जातीय कोष, बम्बई ।

मुद्रक—
देहली कमर्शियल प्रेस,
चांदनी चौक, देहली ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आग्रेय गण (अग्रवाल कुल) के संस्थापक, पृथक् वंशकर्त्ता

महाराज अग्रसेन

तथा

वैश्यों के 'प्रवर', मन्त्र द्रष्टा

राजा मांकील

की पुण्य स्मृति में

For Private and Personal Use Only

तव वंशे मही सर्वा पूरिता च भविष्यति
तव वंशे जातिवर्णेषु कुलनेता भविष्यति
अद्यारभ्य कुले……तव नाम्ना प्रसिद्ध्यति
अग्रवंशीया हि प्रजाः प्रसिद्धाः भुवनत्रये
भुजि प्रसादं तव वसेत् नान्यस्मै प्रतिदापयेत् (?)
येन सा सफला सिर्द्धिर्भूयात् तव युगे युगे
मम पूजा कुले यस्य सोऽग्रवंशो भविष्यति ॥

(महालक्ष्मी का राजा अग्रसेन को आशीर्वाद)

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय सूचि

		विषय	पृष्ठ
भूमिका			७
निवेदन			१३
अध्याय	१	अग्रवाल जाति	१७
,,	२	अग्रवाल-इतिहास की सामग्री	३३
,,	३	अगरोहा और उसकी प्राचीनता	४७
,,	४	अग्रवालों की उत्पत्ति	५८
,,	५	आग्रेय गण के संस्थापक महाराज अग्रसेन	८८
,,	६	राजा अग्रसेन का वंश	१००
,,	७	अग्रसेन का काल	११०
,,	८	अग्रसेन के उत्तराधिकारी	११५
,,	९	अग्रवाल जाति का नागों से सम्बन्ध	१२०
,,	१०	अग्रवालों के गोत्र	१२५
,,	११	अगरोहा पर विदेशी आक्रमण	१४२
,,	१२	अगरोहा का पतन और अन्त	१४९
परिशिष्ट	१	महालक्ष्मी व्रत कथा	१५९
,,	२	उरु चरितम्	१८५
,,	३	भाटों के गीत	२१२
,,	४	भारतीय इतिहास के वैश्य राजा	२१९
,,	५	मध्यकाल में अग्रवाल जाति	२२८
,,	६	फुटकर टिप्पणियां	२५९
,,	७	राजा अग्रसेन का वंश वृक्ष	२७०

सहायक पुस्तकों की सूचि

शब्दानुक्रमणिका

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भूमिका

भारतवर्ष के इतिहास में जातिभेद का प्रश्न बड़ा विकट है। जातियों का यह भेद भारत में किस प्रकार विकसित हुवा, इसकी व्याख्या कर सकना बड़ा कठिन है। भारत के अतिरिक्त अन्य देशों में इस ढंग का जातिभेद नहीं है। जातिभेद का विकास भारतीय इतिहास की एक महत्वपूर्ण विशेषता है।

इस विषय पर अनेक विद्वानों ने खोज करने का प्रयत्न किया है। श्रीयुत इब्बट्सन, श्रीयुत नेस्फील्ड, श्रीयुत सेनार, श्रीयुत रिसले, श्रीयुत क्रुक, श्रीयुत इलियट और श्रीयुत एन्थोवन इनमें मुख्य हैं। इन विद्वानों ने भारत की विविध जातियों को श्रेणिबद्ध करने, उनके विविध रीति रिवाजों को संगृहीत करने तथा उनमें प्रचलित विविध अनुश्रुतियों और दन्तकथाओं को उल्लिखित करने के सम्बन्ध में बड़ा उपयोगी कार्य किया है। साथ ही, जातिभेद के विकास के क्या कारण थे, इस पर भी उन्होंने विशद-रूप से विचार किया है। पर अभी इस सम्बन्ध में बहुत कार्य की गुञ्जाइश है। यह विषय इतना विस्तृत और जटिल है, कि अभी इस पर बहुत अधिक कार्य की आवश्यकता है।

जातिभेद की समस्या पर विचार करने का एक बहुत अच्छा ढंग यह है, कि हम एक एक जाति को पृथक् रूप से लें, उनमें जो किम्वदन्तियां व अनुश्रुतियां प्रचलित हैं, उनका संग्रह करें। अन्य ऐतिहासिक सामग्री का भी उपयोग कर उस एक जाति की उत्पत्ति तथा विकास के विषय को स्पष्ट करने का प्रयत्न करें। इस पद्धति से कुछ जातियों के इतिहास लिखे भी गये हैं। पर जब तक भारत की अधिकांश जातियों के इतिहास इस पद्धति से तैयार न कर लिये जायेंगे, जातिभेद का प्रश्न हल न हो सकेगा।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इस पुस्तक में मैंने अग्रवाल जाति को लिया है, उसके सम्बन्ध में जो भी सामग्री मिल सकी, सब को एकत्रित कर मैंने इस जाति की उत्पत्ति तथा विकास के प्रश्न पर प्रकाश डालने का यत्न किया है। साथ ही, प्रसंगवश कुछ अन्य जातियों की उत्पत्ति पर भी विचार किया है, और जातिभेद के विकास के सम्बन्ध में अपने कुछ विचार प्रगट किये हैं।

मैं यह भली भांति जानता हूं, कि जातिभेद का रूप इस समय भारत में बड़ा विकृत है। इस जातिभेद ने भारत के निवासियों के बीच में एक तरह की दीवारें सी खड़ी की हुई हैं, जिन्हें गिराकर सब भारत-वासियों को एक करने तथा एक प्रकार की सामाजिक व राष्ट्रीय एकता स्थापित करने का प्रयत्न बहुत से सुधारक लोग कर रहे हैं। ऐसे कुछ सुधारक जातीय इतिहासों को पसन्द नहीं करते। उनका खयाल है, कि जातीय इतिहासों से जातीय विभिन्निता की भावना को प्रोत्साहन मिलता है, और सुधार के कार्य में बाधा पड़ती है। पर मेरा विचार यह नहीं है। मैं समझता हूँ, कि जैसा महाभारतकार ने कहा है—इतिहास एक ऐसा प्रदीप है, जो मोहरूपी आवरण को हटा कर सब वस्तुओं का यथावत् रूप सामने ला देता है, और मनुष्यों को सच्चा ज्ञान कराने में सहायता देता है। जब हम यह समझ जायेंगे, कि भारत में जातिभेद का विकास कैसे हुवा, तो हमारे लिये यह समझना भी सम्भव हो जायगा, कि जिन परिस्थियों में इस विशेष संस्था का विकास हुवा था, उनमें यदि परिवर्तन आ जावे, तो इस संस्था में भी परिवर्तन आना आवश्यम्भावी है। इतिहास किसी पद्धति, संस्था व वस्तु का न पक्ष लेता है, न उसका विरोध करता है। इतिहास का कार्य वस्तु के रूप को यथावत् प्रकाशित करना है। इससे मनुष्यों को अपना भावी मार्ग निश्चित करने में बड़ी सहायता मिलती है।

जातिभेद का रूप इस समय चाहे कितना ही विकृत हो, पर मेरा यह विचार है, कि भारतीय इतिहास में इस संस्था का बड़ा महत्व है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मैंने इस पुस्तक में यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया है, कि प्राचीन काल में भारत में बहुत से छोटे छोटे राज्य थे, जिन्हें गणराज्य कहा जाता था। प्रत्येक गणराज्य के अपने कानून, अपने रीतिरिवाज तथा अपनी पृथक् विशेषतायें होती थीं। जब भारत में साम्राज्यवाद का विकास हुवा तो इन गणराज्यों की राजनीतिक स्वतंत्रता नष्ट हो गई। शैशुनाग, मौर्य, कुशान आदि विविध वंशों के सम्राटों के शासन काल में इन गणराज्यों के लिये अपनी राजनीतिक सत्ता को कायम रख सकना असम्भव हो, गया। पर साम्राज्यवाद के इस विस्तृत काल में भी इन गणों की पृथक् सामाजिक और आर्थिक सत्ता कायम रही। भारत के सम्राट् सहिष्णु थे। इस देश के नीति शास्त्र प्रणेताओं की यह नीति थी, कि इन गणों के अपने धर्म, कानून, रीतिरिवाज आदि को न केवल सहा ही जाय, पर उन्हें अपने धर्म, कानून, और रीतिरिवाज पर कायम भी रखा जाय। भारत के ये सम्राट् विविध व्यक्तियों के समान विविध गणों को भी उन के 'स्वधर्म' पर कायम रखना अपना कर्तव्य समझते थे। इसका परिणाम यह हुवा, कि गणों की राजनीतिक सत्ता नष्ट हो जाने पर भी उनकी सामाजिक पृथक् सत्ता जारी रही, इसी से वे धीरे धीरे जात बिरादरियों के रूप में परिणत हो गये। प्राचीन यूरोप में भी भारत के ही समान गणराज्य थे। पर यूरोप में जब साम्राज्यवाद का विकास हुवा तो वहां के सम्राटों ने गणराज्यों की न केवल राजनीतिक सत्ता को ही नष्ट किया, पर साथ ही उनके धर्म, कानून, रीतिरिवाज आदि को भी नष्ट किया। रोमन सम्राट् अपने सारे साम्राज्य में एक रोमन कानून जारी करने के लिए उत्सुक रहते थे। भारतीय सम्राटों के समान वे सहिष्णुता की नीति के पक्षपाती नहीं थे। यही कारण है, कि यूरोप के गणराज्य भारत के समान जात बिरादरियों में परिणत नहीं हो सके। अपने इस मन्तव्य को मैंने इस ग्रन्थ में विस्तार से स्पष्ट किया है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भारत में गणराज्यों के जात बिरादरियों के रूप में विकसित होने का परिणाम यह हुआ, कि इतिहास के उस युग में जब संसार में कहीं भी लोकसत्तात्मक शासन की सत्ता नहीं थी, सब जगह एकच्छत्र सम्राट शासन करते थे, यहां भारत में सर्वसाधारण जनता अपना शासन स्वयं करती थी, अपने कानून स्वयं बनाती थी, अपने साथ सम्बन्ध रखने वाले मामलों का निर्णय अपनी बिरादरी की पंचायत में स्वयं करती थी। यदि राजनीतिक दृष्टि से वे किसी सम्राट के अधीन हो गये, तो अन्य दृष्टियों से वे फिर भी स्वाधीन रहे। सामाजिक व आर्थिक क्षेत्र में उनका गण अब भी जीवित रहा। भारतीय इतिहास की यह एक महत्वपूर्ण विशेषता है, और इसका श्रेय यहां की जात बिरादरियों को ही है। ऐतिहासिक दृष्टि से देखने पर यह मानना पड़ेगा, कि जात बिरादरियों ने किसी समय बड़ा उपयोगी और महत्वपूर्ण कार्य किया है।

मुझे आशा है, कि मेरी इस पुस्तक से जाति भेद के विकास पर कुछ नया प्रकाश पड़ेगा और हमारे देश भाइयों को अपने देश की एक प्राचीन संस्था के वास्तविक ऐतिहासिक रूप को जानने में कुछ सहायता मिलेगी।

अग्रवाल जाति का जो यह इतिहास मैंने लिखा है, उसे पूर्ण नहीं कहा जा सकता। यह इतिहास मुख्यतया साहित्यिक अनुश्रुति के आधार पर लिखा गया है। अग्रवालों का मूल निवास स्थान अगरोहा है। वहां अग्रवाल लोग सदियों तक रहे। उनकी प्राचीन कृतियां, अग्रवशी राजाओं के स्मारक—सब अगरोहा के विस्तृत खेड़े के नीचे दबे पड़े हैं। यह खेड़ा (खण्डहरों का ढेर) ६५० एकड़ में विस्तृत है। इस विस्तृत खेड़े की खुदाई से अवश्य ही वह ठोस सामग्री उपलब्ध होगी, जिससे साहित्यिक अनुश्रुति की सत्यता को जांचा जा सकेगा और अग्रवालों का वस्तुतः प्रामाणिक इतिहास तैयार किया जा सकेगा। पर यह कार्य किसी एक व्यक्ति द्वारा सम्पादित नहीं हो सकता। इस कार्य को या तो सरकार

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कर सकती है, और या कोई सभा व सोसायटी कर सकती है। यदि मेरी इस पुस्तक से अग्रवाल लोगों में अगरोहा की खुदाई कराकर अपने प्राचीन इतिहास की ठोस सामग्री प्राप्त करने की उत्कण्ठा उत्पन्न हो जाय, तो मैं अपने श्रम को सफल मानूंगा।

इस इतिहास में एक और भारी कमी है। यह अग्रवाल जाति का केवल प्राचीन इतिहास है। मध्य तथा वर्तमान काल पर इसमें प्रकाश नहीं डाला गया। अग्रवालों में जो बहुत सी उपजातियां हैं, उनका विकास व भेद किस प्रकार हुवा, इसकी विवेचना मैंने नहीं की। यह विषय अपने आप में बड़े महत्व का है। इस पर बहुत खोज की आवश्यकता है। अग्रवालों में बहुत से भाइयों की उत्कट इच्छा है, कि इस सम्बन्ध में खोज की जाय और विविध उपजातियों के वास्तविक स्वरूप को स्पष्ट किया जाय। मैं स्वयं इस कार्य की महत्ता को स्वीकार करता हूँ। यदि अवकाश मिला, तो मैं स्वयं इस कार्य को भी सम्पादित करने का प्रयत्न करूँगा।

इस पुस्तक के लिये सामग्री एकत्रित करने में मुझे बहुत से महानुभावों से सहायता प्राप्त हुई है। मेरठ के श्री पं० मंगलदेवजी, काशी के डा० मोतीचन्द जी एम० ए०, पी०-एच० डी०, बाबू लक्ष्मीचन्द जी और डा० मंगलदेव जी शास्त्री एम० ए० डी०, फिल, मुजफ्फरनगर के राय बहादुर लाला आनन्द स्वरूप जी साहब, मसूरी के कैप्टिन डा० रामचन्द्र जी रिटायर्ड सिविलसर्जन, पलवल के स्वर्गवासी लाला शिवलाल जी, भवानी के श्री लाला मेलाराम जी वैश्य और हिसार के श्री ब्रह्मानन्द ब्रह्मचारी आदि बहुत से महानुभावों ने मेरी इस कार्य में बड़ी सहायता की है। उन सब का मैं हृदय से धन्यवाद करता हूँ।

इस पुस्तक को लिखने में पेरिस यूनिवर्सिटी के विश्वविख्यात विद्वान श्री० फूशे, डा० ब्लाक और प्रो० रेनू से मुझे बहुत से महत्वपूर्ण निर्देश मिले हैं। इनका मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यह पुस्तक पहले फ्रेंच में लिखी गई थी। मेरी फ्रेंच पुस्तक की भाषा सुधारने में जो श्रम संस्कृत की परम विदुषी श्रीमती शूपाक ने किया, उसे मैं कभी नहीं भुला सकता।

इस इतिहास को हिन्दी में लिखने में मेरी जीवन-सहचरी श्रीमती सुशीला देवी जी शास्त्रिणी ने बड़ा श्रम किया है। फ्रेंच पुस्तक का आधे से अधिक भाग उन्होंने ही हिन्दी में अनूदित किया है। उनके प्रयत्न के बिना यह इतिहास इतनी शीघ्र कभी तैयार न हो सकता।

अन्त में, मैं बम्बई के अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी अग्रवाल जातीय कोष तथा कलकत्ता के श्री० सेठ भगीरथमल जी कानोडिया तथा श्री० सेठ सीताराम जी सेकसरिया का हृदय से धन्यवाद करता हूँ। अग्रवाल-इतिहास की खोज के कार्य में इन्होंने मेरी दिल खोलकर सहायता की।

मुझे आशा है कि अग्रवाल बन्धु इस पुस्तक का आदर करेंगे। जाति भेद का विषय बड़ा महत्वपूर्ण है, अतः अन्य विद्वानों के लिये भी इसका कुछ न कुछ उपयोग अवश्य होगा, यह मेरा विचार है।

सत्यकेतु विद्यालंकार

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निवेदन

अग्रवाल जाति का कोई भी प्रामाणिक इतिहास अब तक प्राप्त नहीं था। इसकी आवश्यकता देर से अनुभव की जारही थी। कई महानुभावों ने अग्रवाल इतिहास पर छोटी छोटी पुस्तकें प्रकाशित भी कीं, पर जनता को इनसे सन्तोष नहीं हुवा। ये पुस्तकें प्रायः सर्वसाधारण में प्रचलित किम्वदन्तियों के आधार पर ही लिखी गई थीं। साहित्यिक व अन्य प्रामाणिक सामग्री के आधार पर अग्रवाल जाति का कोई इतिहास अब तक तैयार नहीं हुवा था।

इस इतिहास की आवश्यकता इतने प्रबल रूप में अनुभव की जारही थी, कि अखिल भारतीय अग्रवाल महासभा ने अपने इलाहाबाद वाले वार्षिक अधिवेशन में एक प्रस्ताव द्वारा यह उद्घोषणा की, कि जो महानुभाव अग्रवाल जाति का प्रामाणिक इतिहास लिखेंगे, उन्हें २५०० रु० का पारितोषिक अग्रवाल महासभा की ओर से भेंट किया जायगा। पर इस उद्घोषणा का भी कोई परिणाम नहीं निकला। अग्रवाल महासभा ने भी इस प्रस्ताव को क्रिया रूप में परिणत करने के लिये कोई उद्योग नहीं किया।

आखिर, इस कार्य को प्रोफेसर सत्यकेतु विद्यालंकार ने अपने हाथों में लिया। श्रीयुत सत्यकेतु भारत के प्रसिद्ध इतिहासज्ञों में गिने जाते हैं, और उच्च कोटि की अनेक इतिहास-पुस्तकों के लेखक हैं। "मौर्य साम्राज्य का इतिहास" नामक मौलिक तथा खोजपूर्ण पुस्तक पर उन्हें अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद की ओर से १२०० रुपये का मंगलाप्रसाद पारितोषिक भी मिल चुका है। इस पुस्तक का विद्वानों में इतना आदर है, कि हिन्दू विश्वविद्यालय काशी ने इसे एम० ए० (इतिहास) की पाठ्य पुस्तकों में नियत किया है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रोफेसर सत्यकेतु ने कई वर्षों तक भारत में अग्रवाल-इतिहास की खोज की। वे काशी, मेरठ, हिसार, अगरोहा, दिल्ली, कलकत्ता, पूना आदि विविध स्थानों पर गये, और वहां पर इस विषय की सामग्री एकत्र की। काशी के सरस्वती भवन पुस्तकालय, दिल्ली की इम्पीरयल सेक्रेटेरियट लायब्रेरी, पूना के भाण्डारकर रिसर्च इन्स्टिटयूट, कलकत्ता की इम्पीरियल लायब्रेरी आदि में जाकर उन्होंने देर तक इस विषय की गवेषणा की। बाद में, वे इसी कार्य के लिये यूरोप गये। अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी अग्रवाल जातीय कोष, बम्बई और श्री० भगीरथमल जी कनोडिया, कलकत्ता ने इस कार्य में उनकी बड़ी सहायता की। अग्रवाल जातीय कोष की ओर से उन्हें १७५ रु० मासिक सहायता इस कार्य के लिये दी गई। यूरोप के बहुत से पुस्तकालयों में उन्होंने अग्रवाल इतिहास की सामग्री को एकत्र करने का प्रयत्न किया। इन में, बृटिश म्यूजिम, लण्डन; इण्डिया इन्स्टिटयूट, आक्सफोर्ड; बिब्लिओथेक नेशनाल, पेरिस तथा इण्डिया आफिस लायब्रेरी, लण्डन मुख्य हैं। इस खोज के परिणाम स्वरूप उन्होंने अग्रवाल जाति का इतिहास फ्रेंच भाषा में लिखा और उसे पेरिस यूनिवर्सिटी में वहां की सब से ऊँची डिग्री डी. लिट. के लिये निबन्ध (Thesis) रूप में पेश किया। इसी पुस्तक पर उन्हें सम्मान के साथ (with Honours) डी. लिट. की डिग्री प्राप्त हुई। प्रोफेसर फूशे, डा० ब्लाक और प्रोफेसर रेनू जैसे संसार प्रसिद्ध ऐतिहासिक विद्वानों ने उनके कार्य की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की। पेरिस के प्राचीन भारतीय इतिहास विभाग के अध्यक्ष प्रोफेसर रेनू ने इस ग्रन्थ को भारतीय इतिहास की खोज के क्षेत्र में एक सर्वथा मौलिक और महत्वपूर्ण कार्य बताया और सार्वजनिक रूप से इसके लिये लेखक को बधाई दी। भारतीय इतिहास के क्षेत्र में यूरोप के ये विद्वान विश्व भर में विख्यात हैं, और इनका डाक्टर सत्यकेतु के इस ग्रन्थ की इस प्रकार प्रशंसा करना इसके महत्त्व तथा प्रामाणिकता को भली भांति सूचित करता है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निवेदन

अग्रवाल जाति का इतिहास फ्रेंच में पहले ही प्रकाशित हो चुका है। अब यह हिन्दी में प्रकाशित किया जा रहा है। हिन्दी के पाठकों की सुगमता के लिये इसके विषय को यथा सम्भव सरल बनाने का प्रयत्न किया गया है। पर विषय गम्भीर है, अतः कहीं कहीं उसमें कठिनता का आ जाना सर्वथा स्वाभाविक है। हिन्दी की इस पुस्तक में कुछ विषय बढ़ा भी दिया गया है। आशा है, अग्रवाल बन्धु इससे प्रसन्नता और सन्तोष अनुभव करेंगे। जैसा कि डा० सत्यकेतु ने भूमिका में स्वयं लिखा है, अग्रवाल इतिहास की खोज के कार्य को अभी पूर्ण नहीं समझना चाहिये। विशेषतया जब तक अगरोहा की खुदाई करके वहां पर विद्यमान ऐतिहासिक सामग्री को प्राप्त न कर लिया जाय, तब तक अग्रवालों का पूर्णतया प्रामाणिक इतिहास लिखा जा सकना असम्भव है। आशा है, इस इतिहास से अग्रवाल भाइयों में अगरोहा की खुदाई के लिये उत्साह होगा, और वे इस कार्य को शीघ्र ही सम्पादित करने का प्रयत्न करेंगे।

मन्त्री, मारवाड़ी अग्रवाल जातीय कोष, बम्बई।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अग्रवाल जाति का प्राचीन इतिहास

पहला अध्याय

अग्रवाल जाति

अग्रवाल भारत की एक प्रमुख जाति है। उसकी गणना वैश्यों में की जाती है। अग्रवाल लोग स्वयं भी अपने को वैश्य कहते हैं। भारत की अनेक जातियां, जो व्यापार, महाजनी, पशु-पालन आदि वैश्य कर्म करती हैं, अपनी गणना वैश्यों में नहीं करतीं। पर अग्रवाल लोग अपने को वैश्य समझते और कहते हैं। उनकी मुख्य आजीविका कृषि, पशु-पालन और व्यापार है। इसी को कौटलीय अर्थशास्त्र में 'वार्ता' कहा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गया है।[1] कौटिल्य के अर्थों में अग्रवाल लोग 'वार्तोपजीवि' हैं। किसी प्राचीन परम्परा का अनुसरण करते हुये या धर्म-शास्त्रों की व्यवस्था के अनुसार[2] अग्रवाल लोग अपने नामों के साथ प्रायः 'गुप्त' लगाते हैं।

जन-संख्या—अग्रवाल लोगों की कुल आबादी कितनी है, यह निश्चय करना सुगम नहीं है। भारतीय सरकार की तरफ से प्रति दसवें वर्ष जो मर्दुमशुमारी की जाती है, उसमें सब प्रान्तों में उनकी संख्या पृथक्रूप से नहीं दी गई। कई प्रान्तों में वैश्य या बनिया जाति की इकट्ठी जन-संख्या दे दी गई है। वैश्यों में से कितने अग्रवाल हैं, और कितने दूसरे वैश्य, यह जान सकना सम्भव नहीं। श्रीयुत् बेन्स के अनुसार अग्रवालों की कुल संख्या ५५७६०० है।[3] पर यह संख्या ठीक नहीं है। मर्दुम-शुमारी की रिपोर्टों के अनुसार विविध प्रान्तों में अग्रवालों की संख्या इस प्रकार है—

पंजाब	(सन् १९३१)	३७९०६४
संयुक्त प्रान्त	(सन् १८९१)	३०८२७७
राजपूताना	(सन् १९३१)	९१२७४
बङ्गाल	(सन् १९३१)	१८२९६
दिल्ली	(सन् १९३१)	२५३८०
मध्य प्रान्त	(सन् १९११)	२५०००
मध्य भारत	(सन् १९११)	२५७२८
	सर्व योग	८७३०१९

1—'कृषि पशु पाल्ये वणिज्या च वार्त्ता'—कौटलीय अर्थशास्त्र १।४
2—'गुप्तेति वैश्यस्य'—पाराशर १६—४
3—Baines. Ethhography (Castes विषयक Tables देखिये)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सन् १९३१ की मर्दुमशुमारी में केवल पंजाब, राजपूताना, बङ्गाल और दिल्ली प्रान्तों में ही अग्रवालों की संख्या पृथक्रूप से दी गई है। शेष सब प्रान्तों में उन्हें वैश्य ग्रुप में सम्मिलित कर दिया गया है। इसी कारण संयुक्त प्रान्त, मध्यप्रान्त और मध्यभारत में उनकी कुल संख्या कितनी है, इसके लिये मर्दुमशुमारी की पिछली रिपोर्टों से संख्यायें दी गई हैं। बम्बई, बिहार आदि अन्य प्रान्तों में मर्दुमशुमारी की किसी भी रिपोर्ट में उनकी संख्या पृथक्रूप से नहीं दी गई। पर इन में भी बहुत से अग्रवाल बसते हैं। बम्बई, कराची, हैदराबाद आदि बड़े शहरों में अग्रवाल व्यापारियों की अच्छी आबादी है। व्यापार के लिये अग्रवाल लोग भारत के सभी प्रान्तों में बसे हुये हैं। गुजरात और बिहार में तो बहुत से अग्रवाल परिवार कई सदियों से रहते हैं। इस दशा में यदि अग्रवाल लोगों की कुल संख्या दस लाख के लगभग मान ली जाय, तो इसमें अशुद्धि की अधिक सम्भावना नहीं।

यद्यपि अग्रवाल लोग उत्तरी-भारत के सभी प्रान्तों में रहते हैं, पर उनका असली निवास-स्थान दिल्ली तथा उसके आसपास के जिले हैं। दिल्ली, पूर्वी पंजाब तथा पश्चिमी संयुक्त प्रात में उनकी आबादी सब से अधिक है। पंजाब की अम्बाला कमिश्नरी में अग्रवाल लोगों की संख्या कुल आबादी की ५॥ फीसदी है। अम्बाला कमिश्नरी में भी हिसार जिले में अग्रवाल लोगों की संख्या सबसे ज्यादा है। वहां वे कुल आबादी के ७॥ फीसदी हैं। हिसार जिले में ही अगरोहा है, जहां से अग्रवालों का विकास हुआ। इस दशा में यदि हिसार जिले में उनकी आबादी सब से अधिक हो, तो आश्चर्य की कोई बात नहीं। रोहतक जिले में वे ६॥

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

फीसदी और करनाल जिले में ६॥। फीसदी हैं। इसी प्रकार संयुक्त-प्रांत के पश्चिमी जिलों में अग्रवालों की संख्या बहुत ज्यादा है। मेरठ जिले में कुल अग्रवाल ५२००० (४॥ फीसदी) हैं। मुजफ्फरनगर में भी उनकी संख्या कुल आबादी की ४॥ फीसदी है। मथुरा में अग्रवालों की संख्या २८४९४ (३॥। फीसदी), आगरा में २९३११ (३॥ फीसदी) और बुलन्दशहर में ३४७५४ (४। फीसदी) है। इसी तरह संयुक्त-प्रान्त के अन्य पश्चिमी जिलों में उनकी संख्या बहुत है। पहले अग्रवाल लोग अगरोहा में रहते थे, वहां से जाकर वे धीरे-धीरे अन्य स्थानों पर बसने शुरू हुवे। यही कारण है, कि इस प्रदेश में उनकी संख्या अन्य स्थानों की अपेक्षा अधिक है।

अग्रवालों के भेद—अग्रवाल जाति के कई भेद हैं। ये भेद मुख्यतया देश, धर्म और नसल के ऊपर आश्रित हैं। अग्रवाल समाज में इन भेदों का काफी महत्व है, अतः इन पर कुछ विस्तार से विचार करने की आवश्यकता है।

(१) देश भेद से अग्रवालों में सब से महत्व का भेद मारवाड़ी तथा दूसरे अग्रवालों का है। दूसरे अग्रवाल 'वैश्य अग्रवाल' या 'देशवाली अग्रवाल' कहाते हैं। अगरोहा का ध्वंस होने पर जब अग्रवाल लोग अन्य स्थानों पर जाकर बसने लगे, तो उनका एक बड़ा भाग दक्षिण में राजपूताना की तरफ चला गया। वे मारवाड़ में जाकर बस गये, और मारवाड़ी अग्रवाल कहाने लगे। भारत के मध्यकालीन इतिहास में मारवाड़ का व्यापारिक दृष्टि से बड़ा महत्व था। अफग़ान और मुग़ल शासकों की राजधानी दिल्ली थी। दिल्ली से जो रास्ता पश्चिमी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

समुद्र तट के बन्दरगाहों को जाता था, वह मारवाड़ में से गुजरता था। इस व्यापारिक रास्ते में मारवाड़ ठीक बीच में पड़ता था। दिल्ली आने जाने वाले सभी यात्री यहां ठहरते तथा इस आधे रास्ते के पड़ाव (Half way house) में विश्राम करते थे। यही कारण है, कि मारवाड़ के निवासियों को व्यापार के क्षेत्र में उन्नति करने का अपूर्व अवसर मिला। मारवाड़ी अग्रवालों ने भी इस अवसर का पूरा लाभ उठाया और उन में उस अपूर्व व्यापारिक प्रतिभा का विकास हुआ, जिसके कारण वे आज भारत में अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। दूसरे अग्रवालों से पृथक् मारवाड़ के सुदूर मरुस्थल में बस जाने के कारण उन में कुछ अपनी पृथक् विशेषताओं का विकास हुआ। उनकी बोलचाल, रहन सहन तथा रीति रिवाज़ों में भेद आगया और वे दूसरे अग्रवालों से कुछ पृथक से हो गये। इसी कारण वे दूसरे अग्रवालों से विवाह सम्बन्ध करने में भी संकोच करने लगे। पर मारवाड़ी तथा दूसरे अग्रवालों में कोई वास्तविक भेद नहीं है। इसीलिये आज उनमें परस्पर विवाह सम्बन्ध भी होने लगे हैं, और उन में खान-पान में भी किसी तरह का विशेष परहेज नहीं रह गया है। देशवाली वा वैश्य अग्रवालों में भी देश भेद से पुरबिये तथा पछाइये का भेद है। पर यह भेद केवल पूरब में रहने वाले अग्रवालों में है। पूर्वी संयुक्तप्रान्त तथा बिहार में जो अग्रवाल कई सदियों से रह रहे हैं, वे अपने को पुरबिये कहते हैं। इन प्रदेशों में जो अग्रवाल अभी पिछली डेड़ दो सदी से आये हैं, उन्हें पछाइये कहा जाता है। दूसरे देशवाली अग्रवालों में भी महमिये, जांगले, हरियालिये, बांगड़ी, सहरालिये, लोहिये आदि कई भेद हैं। महमिये अग्रवाल वे हैं, जो महिम से

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जाकर अन्यत्र बसे हैं। अगरोहा से चलकर अग्रवालों ने जो बस्तियां बसाई, उन में महिम प्रमुख थी। वहां के अग्रवाल महमिये कहाने लगे। यद्यपि अब वे महिम से निकल कर अन्य स्थानों पर जा बसे हैं, पर महमिये ही कहाते हैं! इसी तरह, भटिण्डे के आसपास के निवासी जांगले, हरियाना के निवासी हरियानिये, बांगड़ के निवासी बांगड़ी, सहराला (जिला लुधियाना) के निवासी सहरालिये, लोहागढ़ (जिला रोहतक) के निवासी लोहिये कहाने लगे। ये सब भेद केवल देश भेद के कारण हैं। इनके अतिरिक्त मेवाड़ी, काइयां आदि अन्य भी कई भेद देश भेद के कारण हुये हैं। यह ध्यान रखना चाहिये, कि इन सब अग्रवालों में परस्पर खान-पान तथा विवाह सम्बन्ध होता है, और इन में रहन-सहन तथा रीति-रिवाज का जो भी भेद है, वह केवल पृथक् प्रदेशों में देर तक बसे रहने के कारण ही है।

(२) धर्म-भेद से अग्रवालों के मुख्य भेद जैन, वैष्णव और शैव हैं। अग्रवालों का मुख्य भाग सनातन हिन्दू धर्म का अनुयायी है। हिन्दू अग्रवालों में अधिकांश परिवार परम्परागतरूप से वैष्णव धर्म को मानते हैं। पर कुछ परिवार ऐसे भी हैं, जो शैव हैं। पर शैव अग्रवाल भी मांस मदिरा का सेवन नहीं करते, अहिंसा धर्म का पालन करते हैं, और जीवन की वैयक्तिक पवित्रता तथा आचार-विचार में वैष्णव अग्रवालों के सदृश ही हैं। वस्तुतः, शैव तथा वैष्णव अग्रवालों में कोई भारी भेद नहीं है। मध्यकाल में स्वामी रामानन्द, तुलसीदास आदि सन्त महात्माओं ने हिन्दू धर्म के विविध सम्प्रदायों में समन्वय करने की जिस लहर का प्रारम्भ किया था, उसका प्रभाव अग्रवालों पर पूरी तरह से है। वे

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

राम, कृष्ण, शिव आदि सभी की उपासना समानरूप से करते हैं। वैष्णव तथा शैव की अपेक्षा उन्हें स्मार्त हिन्दू कहना अधिक उपयुक्त होगा। अग्रवालों में वैष्णव और शैव का जो भेद है, वह केवल विविध परिवारों की परम्परा पर ही आश्रित है। क्रियात्मक जीवन में उसका विशेष प्रभाव नहीं है।

अग्रवालों की एक अच्छी बड़ी संख्या जैन-धर्म की अनुयायी है। जैन अग्रवालों को सरावगी भी कहते हैं। इनकी कुल संख्या कितनी है, यह निश्चित कर सकना संभव नहीं है, क्योंकि मर्दुमशुमारी की विविध रिपोर्टों में जैन अग्रवालों की पृथक संख्या नहीं दी गई। पर पंजाब तथा दिल्ली में उनकी गणना पृथक् रूप से दी गई है, जो इस प्रकार है—

प्रान्त	कुल अग्रवाल	जैन
पंजाब	३७९०६४	२४२२१
दिल्ली	२५३८०	३०५२

इसका अभिप्राय यह है, कि पंजाब और दिल्ली में जैन अग्रवालों की संख्या कुल अग्रवालों की दस फीसदी भी नहीं है। यही बात दूसरे प्रान्तों में भी है। संख्या में कम होते हुये भी जैन अग्रवाल प्रभाव तथा स्थिति की दृष्टि से बहुत ऊँचे हैं। विशेषतया, मारवाड़ी अग्रवालों में जैनी लोग बड़े प्रभावशाली हैं।

धर्म-भेद के होते हुये भी जैन तथा सनातनी हिन्दू अग्रवालों में खान-पान तथा विवाह सम्बन्ध में कोई रुकावट नहीं है। जैन तथा दूसरे अग्रवालों में विवाह सम्बन्ध खुले तौर पर होता है। मारवाड़ी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जैनों में तो अधिकांश लोग एक ही गर्ग गोत्र के हैं, अतः उनके विवाह प्रायः जैन-भिन्न अग्रवालों में ही होते हैं। धर्म-भेद होते हुये भी जातीय दृष्टि से जैन तथा दूसरे अग्रवालों में भेद नहीं आया। इससे सूचित होता है, कि अग्रवालों में जातीय भावना बड़ी प्रबल है। जैन अग्रवालों के विवाह अग्रवालों से भिन्न दूसरे जैनों में नहीं होते। विवाह हो जाने पर कन्या प्रायः अपने पति के धर्म का अनुसरण करने लगती है। पारिवारिक आचार-विचार तथा कर्मकांड में धर्म-भेद से प्रायः कोई भी बाधा अग्रवालों में उपस्थित नहीं होती।

अनेक अग्रवाल आर्यसमाज, राधास्वामी आदि नवीन हिन्दू सम्प्रदायों के भी अनुयायी हैं। पंजाब में कुछ अग्रवाल सिक्ख भी हैं। कुछने मर्दुमशुमारी में अपने को मुसलमान भी लिखवाया है।

(३) अग्रवालों का एक अन्य महत्त्वपूर्ण भेद नसल या रक्तशुद्धि के आधार पर है। यह भेद बीसा और दस्सा का है। सामान्यतया, यह समझा जाता है कि जो अग्रवाल रक्त की दृष्टि से पूर्णतया शुद्ध हैं, जो बीस में से बीस (१०० फी सदी) शुद्ध अग्रवाल हैं, वे बीसा हैं। इसके विपरीत जिन्होंने कुल मर्यादा के प्रतिरूप किसी दूसरी जाति की स्त्री से विवाह कर लिया, उनकी सन्तान रक्त की दृष्टि से बीस में से बीस अग्रवाल नहीं रही। उनकी शुद्धता बीस में से दस (५० फी सदी) रह गई। इसलिये वे लोग दस्से कहाते हैं। मध्यप्रान्त तथा बम्बई प्रान्त में कुछ अग्रवाल पंजे भी कहाते हैं। उनकी स्थिति दस्सों से भी नीचे है। उनमें रक्त की शुद्धता बीस में से पांच (२५ फी सदी) समझी जाती है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बीसा, दस्सा और पंजा का यह भेद केवल अग्रवालों में ही नहीं है। अन्य भी अनेक जातियों में ये भेद पाये जाते हैं। उनमें भी इस भेद का आधार रक्त की शुद्धता ही समझा जाता है।

दस्से अग्रवालों के दो मुख्य भेद हैं—कदीमी और हाल के। हाल के दस्सों को जगीद भी कहते हैं। कदीमी अग्रवाल मुख्यतया अलीगढ़, खुर्जा और बुलन्दशहर में पाये जाते हैं। हाल के (जगीद) अग्रवालों के विविध स्थानों पर विविध नाम हैं। सहारनपुर में उन्हें गाटे कहा जाता है। मुजफ्फरनगर में गुड़ाकुर, बुलन्दशहर में गिंदौड़िया और डिवाई (बुलन्दशहर) में दिलवालिये करके जो लोग कहे जाते हैं, वे दस्सा अग्रवालों के भी भेद हैं। सामान्यतया, बीसा अग्रवाल लोग कदीमी अग्रवालों को दस्सा समझते हैं। पर बहुत से कदीमी अग्रवाल अपने को दस्सा नहीं समझते।

बीसा और दस्सा का यह भेद बड़े महत्त्व का है। बीसा और दस्सा अग्रवालों में परस्पर विवाह सम्बन्ध नहीं होता। बीसा अग्रवाल अपनी लड़की का दस्से के साथ विवाह नहीं करते। उनमें परस्पर खान-पान में भी अनेक रुकावटे हैं। बीसा और दस्सा अग्रवाल दो पृथक् जातियों के समान हैं। धर्म तथा देश भेद से भी जिस प्रकार की भिन्नता का विकास अग्रवालों में नहीं हुआ, वैसा भेद इन बीसा और दस्सा अग्रवालों में है। इसका कारण रक्त भेद ही समझा जाता है। भारत की विविध जातियों का आधार रक्त की एकता है। एक जाति में जो भेद धर्म की भिन्नता से भी नहीं आता, वह रक्त-शुद्धि में जरा-सा फर्क पड़ने पर विकसित हो जाता है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पर बीसा और दस्सा के भेद का कारण रक्त-शुद्धि है। यह बात अनेक दस्सा लोग स्वीकार नहीं करते। कुछ महानुभावों ने यह प्रतिपादित किया है, कि महाराज अग्रसेन की जो संतान नाग कन्याओं से हुई, वे बीसा अग्रवाल कहाई। इनके अतिरिक्त अग्रसेन की जो सन्तान अन्य रानियों से हुई, वे दस्सा कहाई। पर इस मत का कोई प्राचीन आधार हमें नहीं मिल सका है। इस दशा में इसकी सत्यता को स्वीकार कर सकना सम्भव नहीं है। अग्रवालों से भिन्न अन्य अनेक जातियों में भी बीसा, दस्सा, पंजा और कहीं कहीं ढाइया तक का मिलना बड़े महत्व की बात है। इस भेद का सम्बन्ध ऊंच नीच के साथ है—इसीलिये यदि इसका आधार सामान्यतया रक्त-शुद्धि को समझा जाय, तो इसमें आश्चर्य नहीं।

(४) अग्रवालों में एक अन्य भेद है, जो बड़े महत्व का है। अग्रवालों की एक उपजाति 'राजाशाही' या 'राजा की बिरादरी' कहाती है। इसी को कुछ लोग 'राजवंशी' भी कहते हैं। राजाशाही अग्रवालों के विवाह दूसरे अग्रवालों से प्रायः नहीं होते। यद्यपि आजकल राजाशाहियों और दूसरे अग्रवालों में कोई कोई विवाह होने लगे हैं, पर सामान्यतया उनका प्रचार नहीं है। इस बिरादरी की स्थापना राजा रतनचन्द द्वारा हुई थी। राजा रतनचन्द जानसठ के निवासी थे। जानसठ संयुक्तप्रान्त के मुजफ्फरनगर जिले में एक कसबा है। मुगल बादशाहत के प्रसिद्ध बादशाह फर्रुखसियर के जमाने में रतनचन्द ने बड़ी उन्नति की। मुग़ल साम्राज्य के प्रसिद्ध सेनापति सैयद-बन्धु भी जानसठ के ही रहने वाले थे। सैयद-बन्धुओं और रतनचन्द में बड़ी मित्रता थी।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सैयद-बन्धुओं की उन्नति के साथ साथ रतनचन्द का भी महत्व बढ़ता गया और एक दिन वे दीवान के उच्च पद पर पहुंच गये। मुसलमानों से अधिक मेल जोल होने के कारण राजा रतनचन्द के रहन-सहन का ढंग पुराने ढर्रे के अग्रवालों को पसन्द न था। उन्होंने रतनचन्द को जाति से बहिष्कृत कर दिया। राजा रतनचन्द बड़ा प्रतापी और साहसी पुरुष था। उसने अपने कुछ साथियों के साथ अपनी पृथक् बिरादरी बना ली, जो राजा रतनचन्द के नाम से ही 'राजा की बिरादरी' या 'राजा-शाही' कहाई। राजाशाही अग्रवाल मुख्यतया मुजफ्फरनगर तथा उसके आसपास के जिलों में ही पाये जाते हैं। अन्य जिन स्थानों पर वे हैं, वे इसी प्रदेश से गये हैं।

राजाशाही अग्रवालों पर मुसलिम संपर्क का प्रभाव अब तक भी विद्यमान है। वे मुख्यतया उर्दू व फारसी पढ़ते हैं, और व्यापार की अपेक्षा सरकारी नौकरी में अधिक रुचि रखते हैं। उनके पहरावे तक पर मुसलिम संपर्क का असर है। राजाशाहियों की पृथक् बिरादरी बने दो सदी के लगभग ही समय हुआ है, पर इस थोड़े से काल में ही वे अन्य अग्रवालों से पृथक् से हो गये हैं।

आज कल अग्रवालों में यह प्रवृत्ति है, कि इन भेदों को भुला कर जातीय एकता की स्थापना करें। मारवाड़ी व देशवाली, सनातनी हिन्दू व जैन—इन भेदों का क्रियात्मक दृष्टि से कोई विशेष महत्व नहीं है। पर बीसा और दस्सा तथा राजाशाही का भेद अधिक गहरा है। आजकल जो लोग दस्सा कहे जाते हैं, उनके विषय में यह नहीं बताया जा सकता, कि उनमें यदि कभी रक्त-शुद्धि में फर्क हुआ, तो

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वह किस समय हुआ। किसी अत्यधिक प्राचीन काल में किसी जाति नियम की कोई शिथिलता ही यदि उन्हें पृथक् करने का कारण हुई हो, तो यदि उसकी उपेक्षा कर अब पुनः जातीय एकता की स्थापना की प्रवृत्ति अग्रवालों में हो, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ?

आजीविका—अग्रवाल लोगों की मुख्य आजीविका कृषि, पशुपालन और वाणिज्य (वणिज व्यापार) है। मनुस्मृति आदि धर्म-ग्रन्थों में वैश्यों के ये ही कर्म लिखे हैं। मारवाड़ी अग्रवाल तो प्रधानतया व्यापार ही करते हैं। अन्य अग्रवाल व्यापार के अतिरिक्त दूसरे भी बहुत से पेशों में लगे हैं। पंजाब के अग्रवाल किन पेशों का अनुसरण कर रहे हैं, यह निम्न तालिका से स्पष्ट होगा—

	कमाने वालों की कुल संख्या	पेशा व्यापार	पेशा जमींदारी	पेशा खेती	पेशा एजेन्सी	पेशा मजदूरी
पुरुष	१०२३३६	७९६४३	१८४३	६१८५	८१	३२०
स्त्री	३८७२	१३७०	४७५	१७६	१	३१

खेद है, कि पंजाब की मर्दुमशुमारी की इस रिपोर्ट में कमाने वाले कुल १०२३३६ अग्रवाल पुरुषों में से केवल ८८०७२ पुरुषों के पेशों की संख्या दी है। शेष २४२६४ पुरुष किन पेशों में लगे हैं, इसकी गणना नहीं दी गई। निस्सन्देह, ये हज़ारों अग्रवाल पुरुष इञ्जिनियर, डाक्टर, वकील, प्रोफेसर, अध्यापक आदि का पेशा करते हैं। देशवाली अग्रवालों में शिक्षा का प्रसार बहुत है। बहुत से लोगों ने ऊंची शिक्षा प्राप्त कर बड़ी ऊंची स्थिति प्राप्त की है। पंजाब के अग्रवालों में

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

का जैसा विभाग है, वैसा ही प्रायः संयुक्तप्रान्त, बिहार, मध्यप्रान्त आदि के अग्रवालों में भी है।

शिक्षा—वणिज व्यापार में लगे होने से अग्रवालों में शिक्षा का प्रसार बहुत पर्याप्त है। जहां सम्पूर्ण भारत में शिक्षितों की संख्या कुल आबादी के ६ फीसदी के लगभग है, वहां अग्रवालों में शिक्षितों की संख्या ३३ फीसदी है। पुरुषों में तो शिक्षितों का अनुपात ५० फीसदी है। शिक्षा के सम्बन्ध में निम्नलिखित तालिकाओं का अध्ययन बड़ा उपयोगी होगा—

प्रान्त		कुल संख्या	पुरुष	स्त्री
बंगाल	कुल अग्रवाल	१५६२५	९५०१	६१२४
	शिक्षित	५३७८	४६६३	७१५
पंजाब	कुल अग्रवाल	३००४१०	१६४४७६	१३५६३४
	शिक्षित	८५१८६	८०५१४	४६७२
दिल्ली	कुल अग्रवाल	२३९४५	१४०१४	९९३१
	शिक्षित	८७५६	७६०८	११४८
राजपूताना	कुल अग्रवाल	७४५०९	३७३९०	३७११९
	शिक्षित	१९६१६	१८९१४	७०२
मध्यभारत	कुल अग्रवाल	१८८९९	१०२३८	८६६१
	शिक्षित	६८२९	६३५२	४७७

इन संख्याओं से सूचित होता है, कि अग्रवाल पुरुषों में शिक्षितों का अनुपात ५० फी सदी के लगभग है। पर स्त्रियों में शिक्षा की बहुत कमी है। स्त्रियों में शिक्षितों का अनुपात १० फी सदी से भी कम है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विशेषतया, राजपूताना की मारवाड़ी अग्रवाल स्त्रियों में दो फी सदी से भी कम शिक्षित हैं। पंजाब और दिल्ली में भी स्त्रियों में शिक्षा की बहुत कमी है। यद्यपि भारत भर के अग्रवालों में स्त्री-शिक्षा अन्य बहुत सी जातियों की अपेक्षा अधिक है, तथापि पुरुषों की तुलना में स्त्रियों में शिक्षा की इतनी कमी शोचनीय है।

सामाजिक दशा—सामाजिक दृष्टि से अग्रवाल लोग हिन्दुओं की अन्य ऊँची जातियों के समान ही हैं। उनमें विवाह की आयु बहुत कम नहीं है। लड़कों का विवाह प्रायः २० वर्ष की आयु में और लड़कियों का विवाह प्रायः १५ वर्ष की आयु में होता है। फिर भी बालविवाह की सत्ता से इन्कार नहीं किया जा सकता। यह बात मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट (१९३१) की निम्न लिखित गणनाओं से स्पष्ट हो जायवेगी—

प्रान्त		विवाहितों की कुल संख्या	आयु ०-६	आयु ७-१३	आयु १४-१६	आयु १७-२३
बंगाल	पुरुष	५८५५	१९	११५	२३८	१०९९
	स्त्री	३७८२	२७	२०१	५१२	९७८
पंजाब	पुरुष	७२५९०	२९	६४२	२२८७	१४५६५
	स्त्री	७३३६७	२५५	११६८	६८१६	२०७०२
राजपूताना	पुरुष	१८४०९	३८	३७६	९५०	३५८३
	स्त्री	२१४१७	६४	११२७	२३८३	५३३२
दिल्ली	पुरुष	७३०१	२	२५	१५१	२२१०
	स्त्री	५९३०	६	७१	४८२	२३२९

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इन अङ्कों से स्पष्ट है, कि अग्रवालों में बालविवाह का काफी प्रचार है। विशेषतया, छैः वर्ष से कम आयु के पति तथा पत्नियों की सत्ता बड़ी खेदजनक है। बालविवाह का ही परिणाम है, कि अग्रवालों में बालविधवाओं की भी कमी नहीं है।

प्रान्त	आयु ०-६	आयु ७-१३	आयु १४-१६	आयु १७-२३	विधवाओं की कुल संख्या
बंगाल	१	४	६२	९०	११९०
पंजाब	१०	३५	११६	१०१६	२९३८०
राजपूताना	६	२३	५३	३३४	९५६४

केवल तीन प्रांतों में तेईस वर्ष से कम आयु की १७५१ विधवाओं का होना खेद की बात है। अग्रवालों में विधवा विवाह का रिवाज नहीं है। पर इसके लिये आन्दोलन जारी है। पंजाब के सुप्रसिद्ध अग्रवाल नेता सर गङ्गाराम ने लाखों रुपयों का दान करके 'विधवा विवाह सहायक सभा' की स्थापना की थी, जिसकी शाखायें अब भारत के सभी प्रान्तों में विद्यमान हैं। इस सभा की तरफ से विधवा विवाह के लिये ठोस कार्य होता है। जो विधवायें पुनर्विवाह न करना चाहें, उनकी सहायता के लिये भी प्रबन्ध किया जाता है। अखिल भारतीय अग्रवाल महासभा में भी विधवा विवाह का प्रस्ताव पास हो चुका है, और जाति के अनेक नेताओं ने उसका हृदय से समर्थन किया है। बिरादरी की कई पंचायतें भी इसके पक्ष में निश्चय कर चुकी हैं। यह सब कुछ होते हुए भी अभी अग्रवालों में विधवा विवाह का प्रचार बहुत कम है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भारत के आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक व धार्मिक क्षेत्र में अग्रवाल जाति का बड़ा ऊँचा स्थान है। व्यापार व्यवसाय में तो शायद ही अन्य कोई जाति अग्रवालों की बराबरी करती हो। वे जहां पैसा खूब कमाते हैं, वहां उसका दान भी खूब करते हैं। भारत में बहुत-सी धर्मशालायें, कुएँ, घाट, अस्पताल, स्कूल, कालिज, सदावर्त आदि उन्हीं के दान पर आश्रित हैं। अपने आचार विचार में भी अग्रवाल लोग हिन्दू धर्म का तत्परता पूर्वक पालन करते हैं। राजनीति, समाज, साहित्य और शिक्षा के क्षेत्र में अग्रवाल जाति ने भारत को बहुत से अच्छे अच्छे रत्न प्रदान किये हैं। इसमें सन्देह नहीं, कि अग्रवाल भारत की एक प्रमुख, महत्त्वपूर्ण और अध्यवसायी जाति है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दूसरा अध्याय

अग्रवाल इतिहास की सामग्री

भारत के प्राचीन इतिहास को तैयार करने की जो सामग्री है, उसी का उपयोग अग्रवाल जाति के प्राचीन इतिहास के लिये भी किया जा सकता है। संस्कृत साहित्य, पुराण, महाभारत, रामायण, पाणिनी की अष्टाध्यायी, बौद्ध ग्रन्थ, जैन साहित्य, शिलालेख, सिक्के, पुरातन गाथायें—सब का अग्रवाल इतिहास के लिये उपयोग है। अनेक प्रश्नों के विचार के लिये इनका प्रयोग हमने किया है, पर इस सामग्री का वर्णन करने की हमें यहां आवश्यकता नहीं। भारतीय इतिहास के सब विद्वान व विद्यार्थी उससे भली भांति परिचित हैं। पर कुछ ऐतिहासिक सामग्री ऐसी है, जिसका अग्रवाल-इतिहास के लिये विशेष महत्व है। हम यहां उसी का संक्षेप से परिचय देने का प्रयत्न करेंगे।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(१) महालक्ष्मीव्रत कथा या अग्रवैश्य वंशानुकीर्तनम्—यह संस्कृत का एक हस्तलिखित ग्रन्थ है। हिन्दी भाषा के प्रसिद्ध लेखक व कवि भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने 'अग्रवालों की उत्पत्ति' नाम से जो छोटी-सी पुस्तिका लिखी थी, उसकी भूमिका में उन्होंने लिखा था—"यह वंशावली परंपरा की जनश्रुति और प्राचीन लेखों से संगृहीत हुई है, परन्तु इसका विशेष भाग भविष्य पुराण के उत्तर भाग के श्री महालक्ष्मी व्रत कथा से लिया गया है।" भारतेन्दु जी के पीछे कई विद्वानों ने यह प्रयत्न किया कि इस भविष्योत्तर पुराणान्तर्गत श्री महालक्ष्मी व्रत कथा को प्राप्त करने का प्रयत्न करें। पर उन्हें सफलता नहीं हुई। श्री महालक्ष्मी व्रत कथा नाम से एक दो पुस्तिकायें छप कर भी प्रकाशित हुई हैं, और इस नाम की अनेक हस्तलिखित पुस्तकें बनारस के सरस्वती भवन पुस्तकालय, मद्रास और पूना के संस्कृत पुस्तकालयों तथा लण्डन की इण्डिया आफिस लाइब्रेरी में हैं। पर इनमें अग्रवाल वैश्यों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में कोई सूचना नहीं है। इनमें एक ऐसे राजा का वर्णन अवश्य है, जिसने महालक्ष्मी की उपासना कर उत्कर्ष को प्राप्त किया था। उसकी कथा राजा अग्रसेन की कथा से कुछ समता भी अवश्य रखती है, पर महालक्ष्मी व्रत कथा की इन हस्तलिखित प्रतियों में अग्रवंश का कहीं वर्णन नहीं है, और न ही राजा अग्रसेन का नाम आता है। हमने भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के निजू पुस्तकालय में जाकर खोज की। उनके वंशज श्री डा० मोतीचन्द्र जी एम० ए०, पी-एच० डी० ने कृपापूर्वक इस पुस्तक को ढूंढ निकालने के लिये बड़ा श्रम किया, और अन्ततः हमें सफलता हुई। भारतेन्दु जी के निजू पुस्तकालय

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

में यह हस्तलिखित संस्कृत ग्रन्थ अब भी विद्यमान है। बा० हरिश्चन्द्र ने इस ग्रन्थ पर लिखा था, कि इसे उन्होंने एक पुराने हस्तलिखित ग्रन्थ से नकल कराया है। दुर्भाग्यवश, यह महत्वपूर्ण संस्कृत ग्रन्थ हमें अविकल रूप में नहीं मिल सका। इसके पहले बारह पृष्ठ अत्यन्त प्रयत्न करने पर भी प्राप्त नहीं हो सके। पर जो पृष्ठ मिले हैं, वे भी बड़े महत्व के हैं, और उनसे राजा अग्रसेन, उनके जीवन-चरित्र तथा उनके वंशजों के सम्बन्ध में बड़े काम की बातें ज्ञात होती हैं। पुस्तक का अन्त इस पंक्ति के साथ हुआ है—

"इति श्री भविष्य पुराणे लक्ष्मी महात्म्ये केदारखण्डे
अग्रवैश्य वंशानुकीर्तनं षोडशोऽध्यायः"

इससे सूचित होता है, कि यह पुस्तक पूर्ण नहीं है, अपितु भविष्य पुराण के लक्ष्मीमहात्म्य नामक भाग का एक अध्याय है। भविष्य-पुराण या भविष्योत्तर पुराण के अन्तर्गत रूप में बहुत सी छोटी छोटी पुस्तकें उपलब्ध होती हैं, जिनमें कुछ छप चुकी हैं, और कुछ छपने से शेष हैं। ऐसा प्रतीत होता है, कि यह अग्रवैश्य वंशानुकीर्तनम् भी उन्हीं पुस्तकों में से एक है। महालक्ष्मी-व्रत-कथा के नाम से जो पुस्तकें मिलती हैं, वे भी सब आपस में नहीं मिलती हैं। देवी महालक्ष्मी की पूजा की बात ही उनमें एक समान है। इस दृष्टि से अग्रवैश्य वंशानु-कीर्तनम् भी इन्हीं महालक्ष्मी व्रतकथाओं में से एक है। इसकी कथा भी बहुत कुछ दूसरी महालक्ष्मी-व्रत-कथाओं के ही ढंग की है।

इस हस्त लिखित पुस्तक की यदि पूरी प्रति मिल सकती, तो बहुत उत्तम होता। पर पहले बारह पृष्ठों के खोये जाने की क्षति इस बात से

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बहुत कुछ पूर्ण हो गई है, कि बाबू हरिश्चन्द्र ने 'अग्रवालों की उत्पत्ति' में उसके आधार पर अनेक महत्त्वपूर्ण बातें उल्लिखित कर दी थीं।

राजा अग्रसेन के पूर्वजों का जो हाल बाबू हरिश्चन्द्र ने लिखा है, उसका मुख्य आधार यही पुस्तक थी।

अग्रवाल जाति के इतिहास के लिये इस महालक्ष्मी-व्रत-कथा या अग्रवैश्य वंशानुकीर्तनम् ग्रंथ का बड़ा उपयोग है। राजा अग्रसेन तथा उनके वंश के सम्बन्ध में यह पहली पुस्तक है, जो संस्कृत में मिली है। यह बहुत काफी प्राचीन है, और सच्ची ऐतिहासिक अनुश्रुति पर आश्रित प्रतीत होती है।

(२) उरु चरितम्—यह भी संस्कृत की एक हस्त लिखित पुस्तक है। इसकी एक प्रति मुझे मेरठ की अखिल भारतीय वैश्य महासभा के कार्यालय से प्राप्त हुई थी। सभा के प्रचारक पं० मङ्गलदेव जी ने इसे मैनपुरी (संयुक्त प्रांत) जिले के एक गांव से नकल किया था। पं० मंगलदेव जी ने मुझे बताया था, कि इसे उन्होंने स्वयं लाला अवध बिहारी लाल जी के पास विद्यमान मूल हस्त-लिखित ग्रंथ से नकल किया था। यह पुस्तक भी बड़े महत्व की है। इसमें मथुरा के चन्द्रवंशी राजा उरु का चरित्र दिया गया है। पर साथ ही यह लिखा है, कि शूरसेन ने राजा उरु के राज्य का जीर्णोद्धार किया था और उसे उरु ने अपने राज्य का प्रधानामात्य बनाया था। शूरसेन राजा अग्रसेन का भाई था, अतः शूरसेन का परिचय देते हुवे उसके कुल, वंश आदि का अच्छे विस्तार से वर्णन किया गया है। यही वर्णन हमारे लिये बड़े काम का है। विशेषतया, राजा अग्रसेन के पूर्वजों व वंश का

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अविकल रूप से परिचय इसी पुस्तक से मिलता है। अग्रसेन के अठारह यज्ञों के सम्बन्ध में भी इसमें महत्वपूर्ण बातें लिखी हैं।

पुस्तक की भाषा से कहीं-कहीं ऐसा सन्देह होने लगता है, कि यह बहुत प्राचीन नहीं है। पर राजा अग्रसेन के पूर्वजों के सम्बन्ध में जो बातें इसमें लिखी हैं, वे अवश्य ही प्राचीन ऐतिहासिक अनुश्रुति पर आश्रित प्रतीत होती हैं। पुराणों के वैशालक वंश के साथ अग्रसेन का सम्बन्ध जोड़ना, और वैश्य 'प्रवर' भलन्दन, वात्सप्री और मांकील के साथ इन वंशों का सम्बन्ध बताना—ऐसी बातें हैं, जो इसकी प्राचीनता को सूचित करती हैं।

भारत के प्राचीन संस्कृत साहित्य में अनुश्रुति द्वारा बहुत-सी ऐतिहासिक सच्चाइयां संगृहीत हैं, उन्हें वर्णन करने वाले अनेक फुटकर ग्रंथ मिलते हैं। उरु चरितम् और अग्रवैश्य वंशानुकीर्तनम्–दोनों ही ग्रंथ इस ढंग के हैं। स्वयं बहुत प्राचीन न होते हुये भी इनमें जो अनुश्रुति है, वह अवश्य पुरानी है। इसी दृष्टि से अग्रवाल-इतिहास के पुनः निर्माण में इनका बड़ा उपयोग है।

(३) भाटों के गीत—अग्रवाल लोगों में भाटों की संस्था अब तक भी विद्यमान है। प्रायः प्रत्येक अग्रवाल परिवार का अपना वंशक्रमानुगत भाट होता है, जो पुराने समय के सूतों का अनुसरण करता हुआ 'वंशों का धारण' करता है। भाट परिवार के मुख्य पुरुषों का नाम स्मरण करता है, और जो भी महत्व की घटनायें हुई हों, उन्हें सुनाता है। पुराने समय में भारत में सूत लोग होते थे, जो यही कार्य करते थे। विविध राजवंशों, ऋषियों और अन्य बड़े कुलों के अपने अपने सूत होते

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

थे, जो वंशावलियां याद रखते, महत्व की घटनाओं को स्मरण करते और पुराने वृत्तान्त को सुनाया करते थे।[1] सूतों के वर्तमान प्रतिनिधि भाट हैं। विविध राजपूत कुलों के तो भाट होते ही हैं, पर अग्रवालों के भी भाट विद्यमान हैं। वे प्रायः लम्बा पीला चोगा पहनते हैं, और बड़े लहजे के साथ कवित्त सुनाते हैं। इनके गीतों में राजा अग्रसेन तथा अग्रवाल इतिहास के अन्य प्रसिद्ध व्यक्तियों के सम्बन्ध में भी बहुत सी बातें मिलती हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से इनका बड़ा उपयोग है। बहुत से भाट मुसलमान हो चुके हैं, पर इससे उनके पेशे में कोई परिवर्तन नहीं आया, और न ही उनका अपने यजमान अग्रवाल लोगों के साथ सम्बन्ध बदला है। वर्तमान समय में नई परिस्थितियों के कारण भाटों का महत्व बहुत कम हो गया है। पर फिर भी ये लोग अपना वंशक्रमानुगत कार्य करते जा रहे हैं, और उन्हीं की कृपा का यह परिणाम है, कि अग्रवालों के कई परिवार अपनी पच्चास व उससे भी अधिक पीढ़ी पुराने पूर्वजों के नाम बता सकते हैं। भाटों की वंशावलियों में चाहे कितनी ही अशुद्धियां हों, पर पुराने जमाने में जब पुस्तकों का प्रचार नहीं था, उन्होंने ऐतिहासिक अनुश्रुति को जीवित और जारी रखने के लिये बड़ा उपयोगी कार्य किया।

---

1. स्वधर्म एव सूतस्य सद्भिः दृष्टः पुरातनैः
देवतानाम् ऋषीणाञ्च राज्ञां चामित तेजसाम्।
वंशानां धारणं कार्यं श्रुतानाञ्च महात्मनाम्
इतिहास पुराणेषु दिष्टा ये ब्रह्मवादिभिः॥

(वायुपुराण १, ३१-३२)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विविध कुलों के पूर्वजों के नाम बताने के अतिरिक्त, भाट लोग उस पुराने युग के सम्बन्ध में भी गीत गाते हैं, जब सब अग्रवाल एक जगह पर रहते थे, जब उनका अगरोहा में अपना राज्य था और जब राजा अग्रसेन ने नाग-कन्या से विवाह कर अठारह यज्ञ किये थे। अग्रसेन के पूर्वजों के सम्बन्ध में भी ये लोग वंशावली सुनाते हैं। भाटों के इन गीतों को इकट्ठा करने का प्रयत्न कई सज्जनों ने किया है। लच्छीराम पुत्र शिवप्रताप ने 'राजा अग्रसेन का जीवन चरित्र' नाम की एक पुस्तिका इन्दौर से प्रकाशित की है, जिसकी भूमिका में वे लिखते हैं—"श्रीमान् राजा अग्रसेन ने अपने भानजे जसराज जी को अपना कुल भट्ट नियुक्त किया था, जैसा कि इस पुस्तक के पाठ से विदित होगा। इनके वंश के भट्ट घनश्याम और तुलाराम जी आदि वासी जसपुर ग्राम जो कि अग्रोहे के खण्डहरों के निकट बसता है, अजमेर आये थे। उनके पास एक अग्रपुराण नामक ग्रन्थ है, जिसमें केवल अग्रवाल जाति ही का पूर्ण रूप से परिचय दिया हुवा है।" जनवरी सन् १९१२ में इसकी कथा अजमेर में कराई गई और फिर इन्हीं भाटों ने २० अप्रैल सन् १९१९ में अग्रपुराण की कथा इन्दौर में की। यही कथा वक्षीराम जी ने प्रकाशित कर दी है, और इससे हमें वह वृत्तान्त ज्ञात होता है, जो भाट लोग राजा अग्रसेन तथा उनके वंश के सम्बन्ध में सुनाते हैं।

हिसार के श्री० ब्रह्मानन्द ब्रह्मचारी अगरोहा के जीर्णोद्धार के लिये प्रयत्न कर रहे हैं। उन्होंने अग्रवाल-इतिहास सम्बन्धी कई पुस्तकें लिखी हैं। इनमें एक पुस्तक 'श्री विष्णु अग्रसेन वंश पुराण' नाम की है। इसमें मूल भट्ट वाणी या भाटों के कुछ गीत भी दिये गये हैं। ब्रह्मचारी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जी ने भाटों के सुने हुवे वृत्तान्त के आधार पर अपनी ओर से भी बहुत से गीत बनाकर इस पुस्तक में दिये हैं।

हमने स्वयं भी कुछ भाटों को आमन्त्रित कर उनसे पुराने गीतों को सुना। यद्यपि इनके वृत्तान्तों में परस्पर बहुत मतभेद है, तथापि ये एक प्रकार के हिन्दी या बांगरू भाषा के नये जमाने के पुराण हैं। इनका यदि विवेचनात्मक दृष्टि से उपयोग किया जाय, तो बड़ा लाभ हो सकता है।

(४) ग्राम्य गीत—पूर्वीय पंजाब में बहुत से ऐसे गीत प्रचलित हैं, जो ऐतिहासिक दृष्टि से बड़े उपयोगी हैं। उदाहरणार्थ, शीलो और राजा रिसालू की कथा, जो गीत रूप से हरयाना के देहातों में गाई जाती है। इस कथा का ग्रामों में बड़ा प्रचार है। रिसालू सियालकोट का राजा था। उसका दीवान महिता था, जिसका विवाह अगरोहा के हरवंश सहाय की कन्या शीला के साथ हुआ था। इन्हीं को लेकर यह कथा बनी है, और अग्रवाल जाति के इतिहास के साथ इसका गहरा सम्बन्ध है। इस कथा को श्रीयुत् टैम्पल ने संगृहीत कर पुस्तक-रूप में भी प्रकाशित किया है।[1]

भारतीय इतिहास के पुनः निर्माण में इन ग्राम्य- कथाओं का भी बड़ा उपयोग है। यद्यपि इनमें बहुत कुछ कल्पना से काम लिया जाता है, और सत्य का अंश बहुत कम होता है, तथापि इनका आधार ऐतिहासिक सचाई पर आश्रित रहता है। भाटों के गीतों के समान ही

1. R. C. Temple-Legends of panjab.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इनका भी यदि विवेचनात्मक रूप में उपयोग किया जाय, तो अनेक उपयोगी बातें ज्ञात हो सकती हैं।

दुर्भाग्यवश, अग्रवाल इतिहास के लिये कोई शिलालेख, सिक्के, ताम्रपत्र आदि अभी तक उपलब्ध नहीं हुवे। अग्रवाल जाति का प्राचीन निवास स्थान, अगरोहा नगर, जहां अग्रवालों का अपना स्वतन्त्र राज्य था, इस समय खण्डहर रूप में पड़ा है, और उसकी सब पुरानी इमारतें तथा अन्य अवशेष इस समय पृथ्वी के नीचे दबे पड़े हैं। इनकी खुदाई का प्रारम्भ सन् १८८९ में हुआ था, पर दुर्भाग्यवश रुपये की कमी के कारण उसे जारी न रखा जा सका। जितनी खुदाई हुई, उसमें ही बहुत सी छोटी बड़ी मूर्तियां, सिक्के तथा अन्य प्राचीन चीजें उपलब्ध हुईं। सब से पुराने सिक्के कुशान युग के (अब से लगभग १९ शताब्दि पुराने) हैं। यदि इस खुदाई को पुनः शुरू किया जाय, तो अग्रवाल इतिहास के लिये बहुत सी उपयोगी सामग्री प्राप्त होने की सम्भावना है। किसी देश, राज्य व जाति का वस्तुतः प्रामाणिक इतिहास तब तक तैयार नहीं हो सकता, जब तक शिलालेख, सिक्के आदि ठोस सामग्री प्राप्त न हो। केवल पुरानी ऐतिहासिक अनुश्रुति व साहित्यिक साधनों से जो इतिहास बनता है, वह पूर्णतया प्रामाणिक नहीं कहा जा सकता, क्योंकि इनमें अशुद्धि होने तथा बहुत सी बातों के कल्पनात्मक होने की आशङ्का सदा बनी रहती है।

इस ग्रन्थ में अग्रवाल जाति का जो प्राचीन इतिहास, हम दे रहे हैं, उसका मुख्य आधार अनुश्रुति—उरु चरितम् और अग्रवैश्य वंशानुकीर्त्तनम् में उल्लिखित और भाटों द्वारा सुनाई हुई—ही है। जब तक

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ठोस ऐतिहासिक सामग्री से इसकी पुष्टि न की जाय और अगरोहा की खुदाई करके ऐसे शिलालेख व सिक्के आदि न प्राप्त किये जावें, जिनसे राजा अग्रसेन की सत्ता तथा उनका वृतान्त प्रमाणित होता हो, तब तक यह नहीं समझा जा सकता, कि अग्रवाल इतिहास सम्बन्धी कार्य समाप्त हो गया है। अभी तो इस कार्य का प्रारम्भ ही समझा जाना उचित है। इसमें कोई सन्देह नहीं, कि अगरोहा की खुदाई से वह सामग्री अवश्य प्राप्त होगी, जो इस इतिहास पर बहुत सच्चा प्रकाश डालेगी।

अग्रवाल जाति के इतिहास पर बहुत सी छोटी छोटी पुस्तकें अब तक प्रकाशित हो चुकी हैं। इनका आधार मुख्यतया जनता में प्रचलित कथायें ही हैं। कई लेखकों ने यह भी लिखा है, कि उन्होंने प्राचीन पुस्तकों के आधार पर अपना इतिहास लिखा है। पर उन पुस्तकों का कोई प्रमाण उन्होंने नहीं दिया। यह वस्तुतः बड़े खेद की बात है। प्राचीन पुस्तकों के प्रमाण को देखे बिना उनकी प्रामाणिकता को स्वीकार कर सकना सम्भव नहीं है। साथ ही, अनेक लेखकों ने कल्पना से भी बहुत काम लिया है। उदाहरण के तौर पर, राजाशाही या राजवंशी अग्रवालों के उद्भव को प्रदर्शित करते हुवे कुछ राजवंशी लेखकों ने यह कल्पना की है, कि राजा अग्रसेन के दो रानियां थीं, एक नागकुमारी और दूसरी किसी राजा की कन्या। नाग कन्या से जो सन्तान हुई, वह सामान्य अग्रवाल कहाती है, और राजकुमारी की सन्तान राजवंशी कहाती है। इस कथा को इन लेखकों ने इतने विस्तार से लिखा है, कि ऐसा प्रतीत होने लगा है, कि वह वस्तुतः ही किसी ऐतिहासिक

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आधार पर आश्रित है। हम पहले अध्याय में प्रदर्शित कर चुके हैं, कि राजाशाही बिरादरी का प्रादुर्भाव बादशाह फ़र्रुखसियर के जमाने में राजा रतनचन्द द्वारा हुआ। राजाशाही अग्रवालों की उत्पत्ति अभी कुछ ही सदियों की बात है। इस सीधी सी बात की उपेक्षा कर एक नई ऐतिहासिक अनुश्रुति विकसित कर ली गई है, जिसका कोई भी प्राचीन आधार पेश नहीं किया गया।

इसी तरह की अन्य बहुत सी बातें दूसरे लेखकों ने भी लिखी हैं। राजा विशानन की कन्या से अग्रसेन का विवाह होने पर उसकी सन्तान 'बीसा' और राजा दशानन की कन्या से अग्रसेन का विवाह होने पर उसकी सन्तान 'दस्सा' कहाई—इस प्रकार की सब बातें केवल कल्पनायें ही हैं। इन विविध पुस्तकों के कारण आजकल अग्रवाल जाति के प्राचीन इतिहास के सम्बन्ध में बहुत सी ऐसी बातें प्रचलित हो गई हैं, जिनका कुछ भी ऐतिहासिक आधार नहीं है, या कम से कम वह आधार लिखा नहीं गया है। अग्रवाल-इतिहास का अनुशीलन करते हुवे हमें यह बात दृष्टि में रखनी चाहिये।

अग्रवाल इतिहास की जिस सामग्री का इस अध्याय में ऊपर वर्णन किया गया है, उसके अतिरिक्त जिस अन्य सामग्री का इस ग्रंथ में उपयोग हुआ है, उसका भी संक्षेप से उल्लेख कर देना आवश्यक है—

(१) पुराण—अनेक पुराणों में प्राचीन वैशालक वंश का वर्णन है, जिसकी ही एक शाखा में राजा अग्रसेन उत्पन्न हुये। ब्रह्माण्ड, मार्कण्डेय, मत्स्य, वायु, भागवत आदि पुराण इनमें मुख्य हैं। इन

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पुराणों का प्राचीन वंशावलियों को जानने के लिये बड़ा भारी उपयोग है।

(२) महाभारत तथा रामायण—इनमें भी अनेक वंशावलियां दी गई हैं। वैशालक वंश का वर्णन इन ग्रन्थों में भी है। इस दृष्टि से इनका भी अग्रवाल-इतिहास के लिये उपयोग है। महाभारत में ही आग्रेय गण का वर्णन है, जिससे हमने अग्रवालों की उत्पत्ति प्रदर्शित की है।

(३) संस्कृत के प्राचीन व्याकरण ग्रन्थ—इनमें अग्र कुल का उल्लेख होने से इनका हमने अपने अध्ययन में बहुत प्रयोग किया है। पाणिनि मुनि की अष्टाध्यायी प्राचीन भारतीय इतिहास के लिये बड़ी उपयोगी पुस्तक है। उससे बहुत से प्राचीन राज्यों, वंशों व कुलों का पता मिलता है।

(४) ग्रीक यात्रियों के यात्रा विवरण—ईसा से पूर्व चौथी शताब्दि में मैसिडोन के राजा सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण किया था। उसके आक्रमणों का हाल अनेक ग्रीक ऐतिहासकों ने लिखा है। भारत के पुराने इतिहास के लिये इनका बड़ा महत्व है। सिकन्दर ने जिन राज्यों को जीता था, उनमें 'अगलस्सि' भी एक था। हमने इसे 'आग्रेय' से मिलाया है। अगरोहा पर सिकन्दर के आक्रमण की कथा भाट लोग भी सुनाते हैं। ग्रीक लेखकों में से अन्यतम टालमी ने संसार का जो भूगोल लिखा है, उसमें भारत में 'अगारा' नामक एक शहर का उल्लेख है, जिसे हमने अगरोहा बताया है। इस दृष्टि से इन ग्रीक लेखकों के लेख भी अग्रवाल-इतिहास के लिये बड़े उपयोगी हैं।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(५) बौद्ध साहित्य—प्राचीन भारत के गणराज्यों को प्रदर्शित करते हुए हमने बौद्ध साहित्य के अनेक ग्रंथों का उपयोग किया है। साथ ही, 'मञ्जु श्री मूल कल्प' नामक ऐतिहासिक ग्रन्थ का नागों के सम्बन्ध में तथा अन्य वैश्यवंशों के लिये बड़ा उपयोग है।

(६) कौटलीय अर्थशास्त्र तथा अन्य नीतिग्रन्थ—ये भी प्राचीन गणराज्यों तथा उनके प्रति भारतीय सम्राटों की नीति को जानने के लिये अत्यन्त उपयोगी हैं।

(७) धर्म-सूत्र व स्मृतियां—गोत्र विषय पर विचार करने के लिये हमने इनका बहुत उपयोग किया है।

इनके अतिरिक्त प्राचीन साहित्य के विविध ग्रन्थों, कुछ शिलालेखों तथा अन्य ऐतिहासिक सामग्री का भी स्थान स्थान पर हमने प्रयोग किया है, जिसका उल्लेख व वर्णन करने की यहां कोई आवश्यकता नहीं है।

वर्त्तमान समय में अनेक यूरोपियन लेखकों ने जातियों के सम्बन्ध में बहुत अध्ययन किया है। इन्होंने भारत की विविध जातियों के रीति-रिवाजों, दन्तकथाओं तथा अन्य अनुश्रुति को भी संगृहीत किया है। इस प्रकार के मुख्य ग्रन्थों की सूचि इस पुस्तक के अन्त में दी गई है। रिसले, क्रुक, ईलियट, एन्थोवन, इबट्सन, शैरिङ्ग आदि विद्वानों की पुस्तकें अग्रवाल जाति के इतिहास के लिये बड़ी उपयोगी हैं। विशेषतया विवध प्रांतों के अग्रवालों में जो भिन्न-भिन्न रीति-रिवाज व किंवदन्तियां प्रचलित हैं, उन्हें जानने में इनसे बड़ी सहायता मिलती है। सरकार की तरफ से हर दसवें साल जो मर्दुमशुमारी होती है, उसमें भारत की

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विविध जातियों के अध्ययन का भी प्रयत्न होता है। इसलिये मर्दमशुमारी की प्रत्येक रिपोर्ट में जाति-भेद पर भी अध्याय रहते हैं। इन के अनुशीलन से बहुत-सी काम की बातें ज्ञात होती हैं।

इसी तरह सरकार की ओर से 'इम्पीरियल गेज़ेटियर आफ इण्डिया' इस नाम से गेज़ेटियरों की एक ग्रन्थावली प्रकाशित हुई है। इसमें प्रत्येक प्रांत तथा जिले के भी पृथक् पृथक् गेज़ेटियर हैं। विवध जिलों के गेज़ेटियरों में वहां के निवासियों, मुख्य परिवारों तथा महत्वपूर्ण स्थानों का बड़े विस्तार से परिचय दिया गया है। हिसार, पंजाब की पटियाला आदि रियासतें, बिजनौर, इटावा, बनारस, मेरठ आदि जिन जिलों में अग्रवालों के प्रतिष्ठित घर हैं, तथा जिनका अग्रवालों के पुराने इतिहास से सम्बन्ध है, उनके गेज़ेटियरों के अध्ययन से अग्रवाल इतिहास की बहुत-सी सामग्री उपलब्ध होती है।

इस इतिहास में इसी सब सामग्री का प्रयोग किया गया है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तीसरा अध्याय

अगरोहा और उसकी प्राचीनता

अग्रवाल लोगों में किंवदन्ती प्रचलित है, कि उनका आदिम निवास-स्थान अगरोहा है। किसी प्राचीन समय में सब अग्रवाल लोग वहीं पर निवास करते थे, वहां उनका स्वतन्त्र राज्य था, और वहीं से जाकर वे दूसरी जगहों पर बसे।

यह अगरोहा हिसार ज़िले की फतेहाबाद तहसील में है। हिसार ज़िला पंजाब में है, और उस प्रान्त के दक्षिण-पूर्व भाग में स्थित है। देहली से सिरसा को जो सड़क जाती है, उसी पर हिसार नगर से तेरह मील की दूरी पर अगरोहा है। आजकल अगरोहा नाम से एक छोटा सा गांव भी है, पर असली प्राचीन अगरोहा के खण्डहरों के ढेर बड़ी दूर दूर तक फैले पड़े हैं, और इन खण्डहरों को देख कर ही यह कहा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जा सकता है, कि किसी पुराने समय में यह अगरोहा एक समृद्ध तथा विशाल नगर था। खण्डहरों में एक पुराने किले के भी निशान हैं। स्थानीय किंवदन्ती के अनुसार यह किला राजा अग्रसेन के ज़माने का है। किले के अतिरिक्त अन्य भी कुछ प्राचीन दर्शनीय स्थान अगरोह के खण्डहरों में दृष्टिगोचर होते हैं।

अग्रवाल लोग इस स्थान को पवित्र मानते हैं। यही कारण है, कि हजारों अग्रवाल यात्री हर साल इन खण्डहरों के दर्शन के लिये जाते हैं। उजड़े हुवे अगरोहा को फिर से आबाद करने के लिये भी प्रयत्न हो रहा है। यात्रियों के ठहरने के लिये धर्मशाला आदि बनाने के लिये तो काम भी शुरू हो चुका है।

अगरोहा के खण्डहरों के विषय में श्रीयुत राजर्स का निम्नलिखित विवरण उल्लेख योग्य है—

"अगरोहा का खेड़ा—यह खेड़ा (पुराने खण्डहरों का बड़ा विस्तृत ढेर) गांव से आधे मील की दूरी पर है। इसने ६५० एकड़ जमीन को घेरा हुआ है। बरसात के कारण खेड़े में अनेक दराड़ें आ गई हैं, और उनमें अनेक प्राचीन इमारतों की नींव व थड़े नज़र आने लगे हैं। बड़ी बड़ी ईंटें, ऐसी ईंटें जिन पर कारीगरी का काम किया गया है, मूर्तियों के टुकड़े, मनके, मालायें तथा सिक्के—इस जगह से उपलब्ध होते हैं। सन १८८९ में इस प्राचीन स्थान की खुदाई का प्रारम्भ किया गया था। पर उसे जारी नहीं रखा जा सका। जो थोड़ी खुदाई की गई थी, उससे ही मूर्तियों के अनेक टुकड़े और पक्की मिट्टी की बनी हुई बहुत-सी प्रतिमायें प्राप्त हुई थीं। इसमें सन्देह नहीं, कि

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इन खण्डहरों की खुदाई से प्राचीन काल की बहुत-सी महत्व की वस्तुवें प्राप्त होंगी। अग्रवाल वैश्य अगरोहे को अपना घर मानते हैं। कहा जाता है, कि यह स्थान प्राचीन समय में बड़ा समृद्ध तथा विस्तीर्ण था। आज कल इस स्थान की खुदाई करने की मुमानियत है।[1]"

सरकार की ओर से प्रत्येक जिले के सम्बन्ध में एक एक गजेटियर प्रकाशित होता है, जिसमें कि उस जिले की सभी उल्लेखनीय बातें लिखी जाती हैं। हिसार जिले के सरकारी गजेटियर में अगरोहा के बारे में जो कुछ लिखा गया है, उसे भी यहां उद्धृत करना उपयोगी होगा—

"हिसार से उत्तर पश्चिम में लगभग बारह मील की दूरी पर देहली–सिरसा रोड पर अगरोहा स्थित है। इसमें सन्देह नहीं, कि किसी समय यह गांव बड़ा आबाद तथा समृद्ध नगर था। कहा जाता है, कि वैश्य अग्रवाल जाति के संस्थापक राजा अग्रसेन ने इस नगर की स्थापना की थी। इस राजा अग्रसेन का समय दो हजार वर्ष से भी अधिक पुराना है। गांव के समीप ही, एक पुराने नगर का खेड़ा है, जिसके नीचे निश्चय ही किसी नष्ट हुवे विशाल नगर के ध्वंसावशेष पड़े हैं। खेड़े के ऊपर किला बना हुवा है, जो ईंटों का बना है। कहते हैं, कि यह किला राजा अग्रसेन ने बनवाया था। सन् १८८९ में इन खण्डहरों की खुदाई हुई थी, जिसमें मूर्तियों के बहुत से टुकड़े तथा अनेक प्रतिमायें उपलब्ध हुईं थीं। सब साइज की छोटी बड़ी ईंटें तथा सिक्के भी वहां मिलते हैं। एक जगह पर किसी बड़े पक्के मकान की

1. C. T. Rodgers, The Revised list of objects of Archeological interest in the Punjab, p. 71.

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दीवार भी निकली है। खेड़े के समीप ही एक विस्तृत नीची जमीन है, जहां आज कल बहुत बढ़िया फसल होती है। अवश्य ही, यहां पुराने जमाने में एक तालाब था। अगर इन प्राचीन खण्डहरों पर दृष्टिपात करें, तो राजा अग्रसेन का किला तो इनके मुकाबले में एक नये जमाने की चीज़ मालूम होता है, यद्यपि उसका निर्माण भी ईसवी सन के प्रारम्भ होने से पहले हुवा था।[1]"

अगरोहा के खण्डहरों में जिस पुराने किले के निशान दृष्टिगोचर होते हैं, वह सामान्यतया राजा अग्रसेन का बनवाया हुवा समझा जाता है। इसी लिये हिसार गज़ेटियर के लेखक तथा श्रीयुत राजर्स ने भी इसका उल्लेख कर दिया है। पर वस्तुतः राजा अग्रसेन का किला वह नहीं है, जो आजकल अगरोहा में दिखाई पड़ता है। एक अन्य किंवदन्ती के अनुसार इस किले का निर्माण पटियाला के राजा अमरसिंह के सेनापति दीवान नन्नूमल ने कराया था। राजा अमरसिंह का समय सन् १७६५ से १७८१ तक है। दीवान नन्नूमल अग्रवाल वैश्य थे। अपनी योग्यता से वे पटियाला राज्य में बड़े ऊंचे पद पर पहुँच गये थे। कुछ समय तक तो वे पटियाला राज्य के सर्वेसर्वा रहे थे। मुग़लों से उनके बहुत से युद्ध हुवे। पटियाला राज्य के उत्कर्ष में उनका भारी कर्तृत्व था।[2] इन्हीं दीवान नन्नूमल ने राजा अग्रसेन के पुराने किले के ध्वंसावशेष पर नये किले का निर्माण कराया था। सम्भवतः, अगरोहा

1. Hissar District Gazateer, 1915, pp. 256—7.
2. दीवान नन्नूमल के विस्तृत हाल के लिये Griffin's Punjab Rajas और Panjab States Gazatteers, Vol. XVII A. देखिये।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

में विद्यमान किले के खण्डहर इन्हीं दीवान नन्नूमल के किले के हैं। पर इससे अगरोहा के खेड़े की प्राचीनता में कोई भेद नहीं पड़ता। यह वस्तुतः दुर्भाग्य की बात है, कि सन १८८९ में इसकी जो खुदाई प्रारम्भ हुई थी, उसे जारी नहीं रखा जा सका। अन्यथा, बहुत-सी उपयागी वस्तुवें उपलब्ध हो सकतीं।

अगरोहा के अतिरिक्त दो अन्य स्थान हैं, जिन्हें स्थानीय किंवदन्ती के अनुसार अग्रवालों का मूल निवासस्थान कहा जाता है। एक है आगरा[1], जो प्रसिद्ध मुग़ल सम्राट अकबर की राजधानी था। दूसरा स्थान आगर है, जो मध्य भारत में उज्जैन से लगभग ४० मील उत्तर पूर्व में स्थित है। बम्बई प्रांत के और विशेषतया गुजरात के अग्रवाल यह मानते हैं, कि वे इस आगर से अन्य स्थानों पर जाकर बसे हैं।[2] पर ध्यान रखने की बात यह है, कि अगरोहा के अग्रवालों का मूल निवास स्थान होने की बात जहां प्रायः सभी अग्रवालों में प्रचलित है, वहां आगरा और आगर के सम्बन्ध में यह किंवदन्ती केवल स्थानीय है। भाट लोग भी अगरोहा को ही अग्रवालों का आदिम निवासस्थान बताते हैं। इस दशा में दो बातें सम्भव हैं—या तो आगरा और आगर के संबन्ध में यह बात केवल नाम की समता के कारण चली हो और या अग्रवालों ने अगरोहा के बाद ये बस्तियां भी अपने नाम से ही बसाई हों। देर तक कुछ अग्रवाल इन बस्तियों में रहे हों और फिर वहां से भी अन्य स्थानों पर जाकर लोग बसे हों। हमें यह दूसरी बात अधिक सम्भव प्रतीत होती

1. Agra-District Gazatteer.
2. R. E. Enthoven. Tribes and Castes of Bombay, 1922. Vol. III. p. 426.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

है। पुराने भारतीय इतिहास में हमें यह प्रवृत्ति स्पष्ट रूप से नज़र आती है, कि एक जाति के लोग अपने वास्तविक स्थान को छोड़कर दूसरी बस्तियां बसाते थे और उन्हें भी अपनी जाति के नाम से नाम देते थे। उदाहरण के तौर पर एक ही जाति ने मथुरा (शौरसेन देश में), मदुरा (पाण्डय देश में) और मधुरा (कम्बोडिया में) बसाये। हो सकता है,कि अग्रवाल जाति ने भी अगरोहा के बाद आगरा और आगर की स्थापना की हो। गुजरात के अग्रवाल देर तक आगर में रहे हों और फिर वहां से अन्य स्थानों पर फैले हों। इसी प्रकार अग्रवालों के एक भाग ने आगरा में बस्ती बसा कर उसे अपना नाम दिया हो, और फिर वहां से वे अन्य स्थानों पर जाकर बसे हों। उत्तरी गुजरात के अग्रवाल तो आगर को तीर्थस्थान भी मानते हैं, और वहां दर्शनों के लिये आते हैं। इसमें सन्देह नहीं, कि अगरोहा के समान ही आगर भी एक अत्यन्त प्राचीन स्थान है, और वहां भी पुरानी इमारतों के खंडहर विद्यमान हैं। पर भाटों की कथा तथा अग्रवाल जाति में प्रचलित किंवदन्तियों के आधार पर अग्रवालों का आदिम निवासस्थान अगरोहा को ही स्वीकार करना उचित है। वहीं से अग्रवाल जाति का विस्तार हुआ।

आजकल अगरोहा उजड़ा हुआ है। अब ही नहीं, अब से १५० वर्ष पहले अठारहवीं सदी में भी अगरोहा इसी तरह उजाड़ था। बर्नोय्यी (Bernaulli) नाम के एक फ्रेंच यात्री ने सन् १७८१ में अपनी भारत यात्रा के सम्बन्ध में एक पुस्तक लिखी थी। उसने अगरोहा का भी हाल लिखा है। वह इसके प्राचीन वैभव की कथा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लिखता है। यह भी बताता है कि किसी समय इस नगर में सवा लाख घर थे, पर साथ ही वह अपने समय के सम्बन्ध में लिखता है, कि 'अब यह उजड़ गया है।[1]'

बर्नोय्यी के समान ही एक अन्य यूरोपियन लेखक रेनेल ने, जो अंग्रेज था, भारत के भूगोल पर एक पुस्तक अठारहवीं सदी के अन्तिम भाग में लिखी थी। उसने अपने समय के भारत या हिन्दुस्तान का एक नकशा भी दिया है। इस नकशे में अगरोहा भी दिया गया है, और साथ ही रेनेल ने इस पुराने नगर के सम्बन्ध में कई ज्ञातव्य बातें भी लिखी हैं।[2] बर्नोय्यी और रेनेल के ज़माने से बहुत पहले अगरोहा उजड़ चुका था, पर इसके पुराने महत्व से आकृष्ट होकर ही इन लेखकों ने अगरोहा का जिक्र किया है।

प्रसिद्ध अफग़ान सम्राट फीरोज़शाह तुग़लक ने हिसार फीरोज़ा की स्थापना की थी। यह हिसार फीरोजा या हिसार अगरोहा से केवल तेरह मील की दूरी पर है। इस नगर की स्थापना का हाल शम्स-ए-सिराज अफीफ नामक ऐतिहासिक ने विस्तार से लिखा है।[3] सर ईलियट ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'हिस्ट्री आफ इण्डिया एज डिस्क्राइब्ड बाइ इट्स आन हिस्टोरियन्स' का संकलन जिन ऐतिहासिकों के इतिहास ग्रन्थों के आधार पर किया है, उनमें शम्स-ए-सिराज अफीफ भी

---

1. Bernoulli, Discription Historique et Geographique de l'Inde, Vol. I. p. 135.
2. J. Renell, Map of Hindostan, p. 65.
3. Elliot, The History of India, Vol. III. pp. 298-3000.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एक है। उसमें लिखा है, कि हिसार फीरोजा के निर्माण में बहुत से पुराने हिन्दू मन्दिरों व इमारतों का मलबा काम में लाया गया था, और हिसार डिस्ट्रिक्ट गेज़ेटियर में यह ठीक ही लिखा गया है, कि यह मलबा ज्यादा तौर पर अगरोहा की पुरानी ध्वंसावशेष इमारतों से ही लिया गया था। पन्द्रहवीं सदी में अगरोहा बहुत कुछ उजड़ चुका था, इसीलिये इसकी पुरानी इमारतों का मलबा हिसार फीरोजा के बनाने में इस्तेमाल हुआ था। पर अभी इसका पूरी तरह विनाश नहीं हुआ था। अब भी यह एक अच्छी महत्त्वपूर्ण बस्ती थी। यही कारण है, कि भारतीय मध्यकालीन इतिहास के अफ़ग़ान काल में इसकी स्थिति एक जिले (इकतात) की थी। तुग़लक वंश के शासन में अगरोहा एक जिले का मुख्य नगर (हेडक्वार्टर) माना जाता था।[1] अफ़ग़ान काल के अन्यतम ऐतिहासिक ज़ियाउद्दीन बारनी ने सुलतान फीरोज़ शाह तुग़लक की मुलतान से दिल्ली तक यात्रा का वर्णन किया है। इसमें उसने लिखा है, कि सुलतान अगरोहा में भी ठहरा था।[2] इससे सूचित होता है, कि फीरोज़शाह तुग़लक के समय तक अगरोहा अभी पूरी तरह नहीं उजड़ा था।

मध्यकालीन इतिहास के एक अन्य मुस्लिम यात्री इब्न बतूता ने भी अगरोहा का ज़िक्र किया है। उसे पढ़ने से भी यह ज्ञात होता है, कि अगरोहा का यद्यपि उस समय बहुत कुछ ह्रास हो चुका था, पर अभी

---

1. Elliot, The History of India. Vol. III. p. 300.

2. Ibid. p. 245.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पूरी तरह वह नहीं उजड़ा था। अभी उसमें कुछ आबादी विद्यमान थी।[1]

अगरोहा का सब से पुराना उल्लेख टौल्मी के भूगोल में मिलता है। ईसवी सन् के शुरू होने से लगभग सवा तीन सौ वर्ष पहले सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण किया था। सिकन्दर मैसिडोन का राजा था। मैसि-डोन ग्रीस व यूनान के उत्तर में शक्तिशाली राज्य था, जिसके राजाओं ने ग्रीस को भी जीत कर अपने आधीन कर लिया था। सिकन्दर ने भारत के भी कुछ हिस्से—उत्तर पश्चिमी पंजाब को जीता था। तब से ग्रीक व यूनानी लोगों को भारत में बहुत दिलचस्पी हो गई थी। अनेक ग्रीक ऐतिहासिकों ने भारत पर पुस्तकें लिखी थीं। टौल्मी उनमें से एक है, और उसकी भूगोल सम्बन्धी पुस्तक बड़ी प्रसिद्ध है। संसार का ठीक ठीक भूगोल जानने के लिए जो प्रयत्न प्राचीन समय में हुवे, उनमें टौल्मी का भूगोल शायद सबसे महत्त्व का है। इस टौल्मी ने अपने भूगोल में भारत का हाल लिखते हुए एक शहर लिखा है, जिसका नाम उसने अगारा (Agara) दिया है।[2] रेनेल ने इस अगारा को अगरोहा से मिलाया है। कुछ लोगों का खयाल था, कि अगारा को वर्तमान समय के आगरा से मिलाना ज्यादा ठीक होगा। इस पर रेनेल ने लिखा है—"यदि टौल्मी का मतलब अगारा से आगरा का था; तो निश्चय ही आगरा को प्राचीन नगर मानना चाहिए। पर दिक्कत यह है, कि टौल्मी ने अपने नकशे में अगारा वहां नहीं दिया है, जहां हमें आगरा को ढूंढना

1. Cambridge History of India. Vol. III p. 153.
2. McCrindle, Ancient India as described by Ptolemy, p. 154.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चाहिए।" इसके बाद उसने अगारा को वर्नोय्यी द्वारा वर्णित अग्रोहा (अगरोहा) से मिलाया है। यह शायद ठीक भी है।[1]

पंजाब में प्रचलित गीतों में रिसालू और शीला सम्बन्धी गाथा बहुत प्रसिद्ध है। इस गाथा का उल्लेख हम पहले कर चुके हैं। शीला अगरोहा की रहने वाली थी, रिसालू सियालकोट का राजा था। ऐतिहासिकों ने रिसालू को प्रसिद्ध कुशान सम्राट विम कैडफिसस से मिलाया है।[2] इसका मतलब यह है, कि कुशान राजा विम कैडफिसस के समय में अगरोहा विद्यमान था, तभी उसके साथ अगरोहा की कुमारी शीला का सम्बन्ध जुड़ सका और उस विषयक गीत प्रचलित हो सके।

अगरोहा के खण्डहरों से प्राप्त प्राचीन सिक्कों का जो छोटा सा संग्रह मेरे पास है, उसमें दो सिक्के कुशान काल के हैं। कुशान सम्राटों के सिक्कों का प्राप्त होना सिद्ध करता है, कि अगरोहा कम से कम उतना पुराना अवश्य है।

इन साक्षियों से इस स्थापना में कोई सन्देह नहीं रहता, कि अगरोहा नगर की स्थापना ईसवी सन् के प्रारम्भ से पहले ही हो चुकी थी। भारत में जो अत्यन्त प्राचीन नगरों के ध्वंसावशेष हैं, निस्सन्देह अगरोहा का खेड़ा उनमें से एक है। यह खेदकी बात है कि उसकी खुदाई शुरू होकर भी धन की कमी से जारी नहीं रखी जासकी।

अगरोहा के समीप ही कई अन्य ऐसे प्राचीन स्थान हैं, जिनका सम्बन्ध सीधा अग्रवाल इतिहास के साथ है। इनमें से एक का नाम

---

1. Renell—Map of Hindostan. p. 64,

2. जयचन्द्र विद्यालंकार, भारतीय इतिहास की रूपरेखा भाग दो, पृष्ठ ८२५-२६

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रिसालू खेड़ा है। कहा जाता है, कि अगरोहा के राजा हरभजशाह की कन्या शीलादेवी तथा रिसालू की अद्भुत गाथा इसी स्थान के साथ सम्बन्ध रखती है। इसीके पड़ोस में सतियों की अनेक समाधें हैं। मुख्य सती शीलादेवी थी। इन सतियों को अग्रवाल लोग पूजते हैं, और दूर-दूर से अग्रवाल यात्री इनके दर्शनों के लिए पधारते हैं।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चौथा अध्याय

अग्रवाल जाति की उत्पत्ति

मैं अग्रवाल जाति की उत्पत्ति आग्रेय गण से मानता हूँ। इस आग्रेय गण का उल्लेख निम्नलिखित स्थानों पर आता है—

(१) महाभारत में—

मद्रान् रोहितकांश्चैव आग्रेयान् मालवान् अपि ।
गणान् सर्वान् विनिर्जित्य नीतिकृत् प्रहसन्निव ॥[1]

(महाभारत, वन पर्व २५५, २०)

---

1. महाभारत की कुछ छपी हुई पुस्तकों में, विशेषतया कलकत्ता के संस्करण में आग्रेय की जगह आग्नेय शब्द का पाठ है। कलकत्ता संस्करण की नकल में पीछे से छपे हुवे महाभारत के बहुत से अन्य संस्करणों

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

महाभारत के इस प्रकरण में राजा कर्ण के दिग्विजय का वर्णन है। उसने हस्तिनापुर से दिग्विजय का प्रारम्भ किया, और पश्चिमकी ओर विजय यात्रा करते हुवे विविध राज्यों को विजय किया। उन राज्यों में से अनेक गण राज्य थे। गणों का क्या अभिप्राय है, यह हम अभी आगे चलकर स्पष्ट करेंगे। राजा कर्ण द्वारा विजय किये गये गण राज्यों में से अन्यतम आग्रेय गण भी था, जो रोहितक और मालव गणों के बीच में स्थित था। हमें मालूम है, कि प्राचीन भारतीय इतिहास में मालव गण बहुत प्रसिद्ध था। सिकन्दर के यूनानी ऐतिहासिकों ने भी इसका उल्लेख किया है,[1] संस्कृत साहित्य में अन्यत्र भी अनेक स्थानों पर इसका जिक्र आता है। यह मध्य पंजाब में स्थित था। रोहितक गण का वर्तमान प्रतिनिधि स्पष्ट रूप से रोहतक है। हस्तिनापुर से पश्चिम की तरफ विजय यात्रा करते हुवे कर्ण ने पहले रोहतक को जीता, फिर आग्रेय को और फिर मालव को। स्पष्ट है, कि आग्रेय रोहतक और मालव

में भी आग्नेय पाठ दिया गया है। यही कारण है कि Sorenson ने अपनी Index to Mahabharata में भी आग्नेय शब्द दिया है, आग्रेय नहीं।

पर निर्णय सागर बम्बई की महाभारत में तथा पुराने छपे अन्य अनेक संस्करणों में 'आग्रेय' पाठ है। Monier Williams ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक Sanskrit English Dictionary में यही पाठ है। यही पाठ शुद्ध है। आग्नेय की इस जगह कोई संगति नहीं लगती।

1. McCrindle, Invasion of India by Alexander the great, p. 137.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(मध्य पंजाब) के बीच में था। ठीक यही स्थान है, जहां आजकल अगरोहा के ध्वंसावशेष मिलते हैं।

(२) अष्टाध्यायी में—

भारत का प्रसिद्ध प्राचीन वैयाकरण पाणिनि अपने ग्रन्थ अष्टाध्यायी में दो स्थानों पर अग्र और उसके विविध रूपों आग्रि, आग्रेय और आग्रायण का जिक्र करता है। यह जिक्र अष्टाध्यायी के गोत्रापत्य प्रकरण में आया है। गोत्रापत्य विषय पर विस्तार से विचार हम एक पृथक् अध्याय में करेंगे। पर यहां जिन दो सूत्रों का उल्लेख हम करते हैं, उनमें अग्र और उसके वंश में होने वाले आग्रेय लोगों का जिक्र स्पष्ट है—

१—नडादिभ्यः फक् सूत्र में नडादि गण के अन्तर्गत अग्र शब्द भी है, जिससे विविध गोत्रापत्य अर्थों में आग्रेय, आग्रायण आदि शब्द बनते हैं।[1]

२—शरद्वच्छुनक् दर्भात् भृगुवत्साग्रायणेषु ।[2]

इस सूत्र के अनुसार यदि किसी आग्रायण (अग्र के वंश में उत्पन्न मनुष्य) का नाम दर्भ हो, तो उसकी सन्तति गोत्रापत्य अर्थ में दार्भायण कहायेगी, पर यदि दर्भ नाम किसी ऐसे मनुष्य का हो, जो वंश से आग्रायण न हो, तो उनकी सन्तति गोत्रापत्य अर्थ में दार्भिः कहावेगी।[3]

---

1. पाणिनि-अष्टाध्यायी ४–१–९९
2. तथा ४–१–१०२
3. अत इञ्, अष्टाध्यायी ४–१–९५

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ऊपर के दोनों सूत्रों में अग्र और उससे बने हुवे आग्रेय, आग्रायण आदि शब्द स्पष्टतया एक वंश व जाति को सूचित करते हैं। यह ध्यान में रखना चाहिये, कि जिस जाति को हम आजकल अग्रवाल कहते हैं, उसी को पुराने समय में अग्रवंश भी कहते थे। हमारे हस्तलिखित ग्रन्थ 'अग्रवैश्य वंशानुकीर्तनम्' में इसे अग्रवंश ही कहा गया है। सत्रहवीं सदी में भी इसे अग्रवंश ही कहा जाता था। आक्सफार्ड की इण्डियन इन्स्टिट्यूट लायब्रेरी में पद्मपुराण की एक हस्तलिखित प्रति है, जिसे सम्वत् १६१९ व तदनुसार ईसवी सन् १६६३ में अगर वंश व अग्रवंश के मुरारिदास नामक व्यक्ति ने लिखवाया था। यह बात निम्नलिखित शब्दों में प्रगट की गई है—

"संवत् १७१६ वर्षो भाद्रपद मासे शुक्लपक्षे दशम्यां १० तिथौ गुरुवासरे इदं पदमपुराण लिखापितम् अगरवंशे साधु साहु श्री गजधर तत्पुत्र पुण्य प्रति पालक साह श्री श्री श्री ४ मुरारिदासेन लिखापितम् स्वम् आत्मपठनार्थं धर्मानन्द विनोदार्थम्"[1]

इस उदाहरण से स्पष्ट है, कि सत्रहवीं सदी में अग्रवाल लोगों को अगरवंशी या अग्रवंशी कहा जाता था। अग्रवाल शब्द हिन्दी भाषा का है, जिसका अर्थ 'अग्र का' है। 'वाल' हिन्दी भाषा का प्रत्यय है, जिसका अर्थ 'का' होता है। 'अग्र का' या 'अग्रवाल' का संस्कृत में ठीक अनुवाद 'आग्रेय' होगा। यह नाम महाभारत और अष्टाध्यायी में (प्रत्यय द्वारा बना कर) मिलता है। राजा अग्र के वंश में होने के कारण ही 'आग्रेय'

1. यह उद्धरण आक्सफार्ड के पुस्तकालय से ही नकल किया गया है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शब्द चला, इसीलिये 'अग्रवंशी' शब्द चला और इसीलिये 'अग्रवाल' शब्द प्रचलित हुआ।

मेरा विचार यह है, कि महाभारत में जिस आग्रेय गण का रोहितक व मालव गणों के बीच में उल्लेख है, वही आगे चल कर अग्रवंश या अग्रवाल जाति के रूप में परिणत हो गया। अन्य भी बहुत से गण राज्य आगे चलकर इसी तरह जातियों में परिवर्तित हुवे। इस विषय को जरा अधिक स्पष्ट रूप से वर्णन की आवश्यकता है।

प्राचीन भारत में आजकल की तरह के बड़े बड़े राज्य नहीं थे। न केवल भारत में, अपितु संसार के अन्य सभी देशों में उस समय छोटे छोटे राज्य होते थे। प्राचीन ग्रीस के ऐसे राज्यों के लिये नगर-राज्य (सिटी स्टेट) शब्द प्रयोग में आता है। भारत के प्राचीन साहित्य में भारत के ऐसे छोटे छोटे राज्यों के लिये "गण" या संघ शब्द प्रयुक्त हुवा है। इनका विस्तार-क्षेत्र आज कल के जिले व तहसील के लगभग होता था। बीच में पुर या राजधानी होती थी और चारों ओर जनपद। पुर में सम्पन्न लोगों के घर होते थे, देवताओं के मन्दिर बने होते थे और विविध व्यवसायी अपना अपना कार्य करते थे। राज्य का संचालन यहीं से होता था। पुर के चारों तरफ प्रायः ऊंची दीवार रहती थी, जो गहरी पानी से भरी खाई से घिरी रहती थी। जनपद में कृषक रहते थे, जो खेती करके अपना निर्वाह करते थे। इन कृषकों के घर देहात में ही छोटे छोटे गांवों में होते थे। देव मन्दिरों में पूजा करने, पीठों व बाजारों में अपना माल खरीदने व बेचने तथा इसी तरह के अन्य कार्यों के लिये कृषक लोग जनपद से प्रायः पुर में आते

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जाते रहते थे। राज्य का संचालन प्रायः जनता के हाथ में होता था। पुर के निवासी पौर सभा में और जनपद के निवासी जानपद सभा में एकत्रित होकर राज्य की बातों पर विचार करते थे तथा अपने निर्णय करते थे। इन सभाओं में विविध कुलों व परिवारों के मुखिया सम्मिलित होते थे। चाहे राज्य (गण राज्य) का कोई वंश-क्रम से चला आया राजा हो या लोग अपना मुख्य (मुखिया) स्वयं चुनते हों, राज्य का संचालन प्रायः जनता के ही हाथ में रहता था।

इन गण राज्यों की जनता प्रायः एक जाति, वंश या जन (Tribe) की होती थी। सब एक दूसरे को बन्धु या एक बिरादरी का समझते थे। प्राचीन भारत में ऐसे राज्य सैंकड़ों की संख्या में थे। यदि हम महाभारत को पढ़ें, तो ऐसे सैंकड़ों राज्यों के नाम हमें मिलेंगे। प्राचीन भारतीय साहित्य के अन्य ग्रन्थों, पुराणों, शिलालेखों आदि में भी इस तरह के छोटे छोटे राज्यों के बहुत से नाम हमें मिलते हैं। सदियों तक ये राज्य स्वतन्त्र रहे। आपस में इनकी लड़ाइयां जरूर होती थीं, पर कोई राज्य दूसरों को सर्वथा नष्ट न करता था। शक्तिशाली राजा दूसरों पर आक्रमण कर उनसे आधीनता स्वीकार करा लेते थे, और उन्हें भेंट, उपहार देने के लिये बाधित करते थे। रामायण और महाभारत काल के साम्राज्यों का यही मतलब होता था।

पर आगे चल कर भारत के इतिहास में ऐसे शक्तिशाली राजा हुवे, जो दूसरों से केवल आधीनता स्वीकार कराने से ही सन्तुष्ट न होते थे। इनका उद्देश्य दूसरों को नष्ट कर स्वयं चक्रवर्ती सम्राट या 'एकराज' बनना था। मगध के राजा इसी कोटि के थे। मैसिडोन का शक्तिशाली

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

राजा सिकन्दर भी इसी तरह का था। जब इन प्रतापी राजाओं—मगध के शैशुनाग, नन्द व मौर्य वंशी सम्राटों तथा विदेशी ग्रीक, कुशन व शक आक्रान्ताओं ने इन छोटे छोटे गण-राज्यों पर आक्रमण कर इनकी राजनीतिक स्वाधीनता को नष्ट करना शुरू किया, तब इनमें भारी परिवर्तन शुरू हुआ। देर तक ये राज्य आक्रान्ताओं का मुकाबला करते रहे। पर अन्त में विवश होकर हार गये। इनकी राजनीतिक स्वाधीनता नष्ट हो गई।

पर भारत के सम्राटों की एक विशेषता थी। वे सहनशील थे। भारत के राजनीति-विशारद आचार्यों ने यह प्रतिपादित किया था, कि आधीन किये गये राज्यों के रीति रिवाजों, नियमों, कानूनों तथा प्रथाओं को सहन किया जाय। उन्हें नष्ट करने के स्थान पर साम्राज्य के कानून का एक अंग मान लिया जाय। ग्रीस व अन्य यूरोपियन देशों के सम्राटों ने इस नीति का अनुसरण नहीं किया। परिणाम यह हुवा, कि एक रोमन कानून सब के लिए जारी किया गया। पुराने नगर राज्यों (City states) के अपने कानून, रीति-रिवाज, व प्रथायें नष्ट हो गई। सब लोग एक रंग में रंग गये। इसके विपरीत भारत में हमारे सम्राटों की सहिष्णुता की नीति के कारण स्थानीय विशेषतायें नष्ट नहीं हो पाई। राजनीतिक सत्ता नष्ट हो जाने पर भी गण-राज्यों की सामाजिक स्वाधीनता व पृथक् सत्ता कायम रही। सदियों तक भारत के सम्राट इसी नीति का अनुसरण करते रहे। मेरी स्थापना यह है, कि इसी नीति के कारण बहुत से पुराने गण-राज्य आजकल की जातियों में परिवर्तित हो गये! राजनीतिक सत्ता के नष्ट हो जाने पर भी इनमें अपनी पृथक् सत्ता, पृथक्

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

व्यक्तित्व और पृथक् भावना बनी रही। जब कभी उन्हें अवसर मिला, उन्होंने पुनः स्वतन्त्र होने का उद्योग किया। पर बार बार शक्तिशाली सम्राटों से कुचले जाते हुवे भी ये गण-राज्य सामाजिक दृष्टि से जीवित रहे। इसी से ये जाति या बिरादरी के रूप में अब भी जीवित हैं।

गण राज्यों के जमाने में भी इन में बहुत कुछ वही वातावरण था, जो आजकल की जात-बिरादरियों में दिखाई पड़ता है। प्रत्येक गण अपने को ऊँचा तथा दूसरों को अपने से नीचा समझता था। शादी ब्याह अपने से नीचे गणों में नहीं हो सकते थे। विवाह सम्बन्ध या तो अपने ही अन्दर सीमित रहता था, या अपने बराबर वालों में। यही हाल भोजन के सम्बन्ध में था। नीची जाति के साथ भोजन करना प्रायः बुरा समझा जाता था। कारण यही कि प्रत्येक गण अपनी उत्कृष्टता व उच्चता का गर्व करता था। सब को अपनी रक्त की पवित्रता का बड़ा ध्यान था। राजनीतिक स्वतन्त्रता के नष्ट हो जाने के बाद भी गण के लोगों में यह सब अनुभूति जागृत रही।

अपने इन विचारों को ऐतिहासिक प्रमाणों से पुष्ट करने के लिये यह आवश्यक है, कि मैं निम्नलिखित तीन बातों पर विस्तार से विचार करूं—

(१) भारत के प्राचीन गण-राज्यों का आधार प्रायः एक जाति वंश या जन (Tribe) होता था। उनमें अपनी जाति की उच्चता की भावना बड़े प्रबल रूप से विद्यमान थी। विवाह तथा भोजन आदि में

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भी वे इस जात्यभिमान को दृष्टि में रखते थे। रक्त की पवित्रता को वे बहुत महत्व देते थे।

(२) शक्तिशाली सम्राटों द्वारा विजय किये जाने के बाद भी इनकी पृथक् सत्ता कायम रही।

(३) इन प्राचीन गणों का स्थान अब जातियों (Castes) ने ले लिया है। अनेक जात-बिरादरियों का सम्बन्ध हम पुराने गणों के साथ सुगमता से स्थापित कर सकते हैं। मैं तीनों बातों पर क्रमशः विचार करूंगा—

(१) प्राचीन गण-राज्यों के नाम प्रायः बहुवचन रूप में आते हैं। यथा, शाक्याः, मल्लाः, मोरियाः, विदेहाः, पञ्चालाः, मालवाः, आग्रेयाः, क्षुद्रकाः, आरट्टाः आदि। गण-राज्यों के ये नाम राज्य व देश को सूचित नहीं करते। ये जनता के, लोगों के सूचक हैं। हमें जन और जनपद में भेद करना चाहिये। जन लोगों को, निवासियों को सूचित करता है, जनपद देश को, भूमि को। इन गणों में जन मुख्य था, जमीन नहीं। जन से जनपद का नाम पड़ता था, जनपद से जन का नहीं। उदाहरण के तौर पर शाक्य जनपद की राजधानी कपिलवस्तु थी, पर इस जनपद का नाम शाक्य था, शाक्य लोगों की वजह से उसका यह नाम हुवा था। इसी तरह मल्ल, विदेह, पाञ्चाल आदि जो नाम हमें देशों के मिलते हैं, वे वस्तुतः जनता के नाम थे। उन उन नामों के जनों (Tribes) के कारण उन उन देशों का नाम पड़ा था। मतलब यह है, कि राज्य में जन मुख्य था, भूमि नहीं। साम्राज्यवाद के विकास से

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पूर्व भारत में प्रायः सभी राज्य—चाहे उनमें वंशाक्रमानुगत राजाओं का शासन हो, चाहे किसी अन्य प्रकार का शासन हो—इसी तरह के जन-राज्य (जानराज्य) थे। राज्य का निर्माण जन से होता था। यदि कोई दूसरा राजा अधिक शक्तिशाली हो, हमला करके देश को जीत ले, तो कोई विशेष हानि नहीं। जनता उस देश को छोड़कर कहीं और जाकर बस सकती थी। देश छिन जाने पर भी राज्य जीवित रह सकता था। उस जमीन का महत्व नहीं था, जिस पर जन बसता था। महत्व जन का था। एक राज्य में एक ही जन (जाति) का प्राधान्य होता था। यह मतलब नहीं, कि दूसरे लोग बसते ही न थे। वे बसते थे, पर शूद्र व दास की हैसियत में। वे राज्य के अङ्ग न होते थे। राज्य में बसते हुये भी वे उससे बाहर समझे जाते थे, क्योंकि राज्य में प्रधानभूत जन में वे सम्मिलित न थे। राज्य जन का था, अतः वे उसमें बहिष्कृत से रहते थे।

इन गणों व जन-राज्यों में अपनी जातीय उत्कृष्टता का भाव बड़ा प्रबल था। उदाहरण के तौर पर शाक्यों को लीजिये। बौद्ध ग्रन्थों में कथा आती है, कि कोशल के राजा पसेनदी (संस्कृत, प्रसेनजित्) ने शाक्यों की एक राजकुमारी से विवाह करने की इच्छा प्रगट की। उसने यह सन्देश लेकर अपना राजदूत शाक्यों की राजधानी कपिलवस्तु में भेजा। राजा पसेनदी के प्रस्ताव पर विचार करने के लिये शाक्य लोग सन्थागार (सभा भवन) में एकत्रित हुवे। शाक्यों का विचार था, कि पसेनदी के साथ अपनी राजकुमारी को विवाहित करना अपनी प्रतिष्ठा व आत्माभिमान से नीचे है। पर वे यह साहस भी न कर सकते कि

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पसेनदी जैसे शक्तिशाली राजा को कोरा जबाब दे दें। उन्हें भय था कि इन्कार करने से सावट्ठी (श्रावस्ती—कोशल देश की राजधानी) का शक्तिशाली राजा कपिलवस्तु पर आक्रमण कर उसे नष्ट कर देगा। उन्होंने एक चाल चली। शाक्यों के एक सरदार महानाम शाक्य की एक कन्या थी, जो दासी से उत्पन्न हुई थी। इसका नाम वासभखत्तिया था। देखने में वह परम सुन्दरी थी, और यह सन्देह होना कठिन था कि वह शुद्ध शाक्य वंश की कुमारी नहीं थी। शाक्यों ने वासभखत्तिया का विवाह कोशल राजा प्रसेनजित् के साथ कर दिया।[1]

महानाम शाक्य अपनी इस दासी पुत्री के साथ भोजन भी नहीं खा सकता था। प्रसेनजित् के राजदूतों को कुछ सन्देह हुवा, कि वासभ-खत्तिया कहीं दासी पुत्री तो नहीं है। उन्होंने परीक्षा के लिये यह चाहा कि महानाम उसके साथ भोजन करे। आत्माभिमानी शाक्य के लिये यह सम्भव नहीं था, कि वह ऐसा कर सके। पर यह न करने पर उसे भय था, कि प्रसेनजित् के राजदूत शाक्यों की चाल समझ जायेंगे। उसने एक दूसरी चाल चली। यह निश्चय किया गया, कि महानाम और वासभखत्तिया एक थाली में भोजन करने के लिये साथ खाने बैठेंगे। पहला ग्रास वासभखत्तिया तोड़ेगी और खाना आरम्भ करेगी। इसके बाद महानाम ग्रास तोड़ेगा और ज्योंही खाने के लिये मुंह की ओर ले जाने लगेगा, खतरे का घंटा बजा दिया जावेगा। महानाम खाना-पीना छोड़कर एक दम उठ जावेगा और प्रसेनजित् के दूतों को कोई सन्देह न होने

---

1. T.W. Rhys Davids, Buddhist India, pp. 10-11 sq.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पावेगा। वे समझेंगे कि खतरे के घण्टे की वजह से महानाम ने खाना छोड़ दिया।[1]

शाक्य लोग अपनी एक राजकुमारी का विवाह प्रसेनजित् जैसे शक्तिशाली और कुलीन राजा के साथ भी नहीं कर सकते थे, इस बात को वही भली-भांति समझ सकता है, जो भारत के वर्तमान जाति भेद से परिचित हो। मामूली कुल का वैश्य भी बड़े से बड़े राजा के साथ अपनी कन्या का विवाह करने के लिये तैयार न होगा। कारण यही कि प्रत्येक जाति अपनी उच्चता तथा कुलीनता का अभिमान रखती है, प्रत्येक को अपनी रक्त शुद्धता की चिन्ता है। भारत की प्रायः प्रत्येक कुलीन जाति के सम्बन्ध में यह बात कही जा सकती है।

शाक्यों के समान लिच्छवियों के सम्बन्ध में भी यही बात पाई जाती है। लिच्छवि भी बड़ा प्रसिद्ध गण राज्य हुवा है। बौद्ध धर्म के सम्बन्ध में जो अनुश्रुति तिब्बत में पाई जाती है, उसका संग्रह राकहिल महोदय ने किया है। उनके अनुसार लिच्छवि लोगों में विवाह को मर्यादित करने के बड़े कड़े नियम थे। वैशाली (लिच्छवियों की राजधानी) की कुमारियां वैशाली से बाहर नहीं ब्याही जा सकती थीं।[2]

गण में सब लोग एक बराबर होते थे। गरीब और अमीर, निर्बल व शक्तिशाली आदि के भेद चाहे कितने ही हों, पर एक गण के लोगों में कोई ऊँचा नीचा न होता था। जाति व कुल की दृष्टि से सब समान

1. Jataka (Cowell),Vol.IV, pp.91-92
2. Rockhill,Life of Buddha, p. 62

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होते थे ।[1] केवल जन्म द्वारा, अन्य किसी बात द्वारा नहीं, किसी व्यक्ति को गण में अपनी स्थिति प्राप्त होती थी। कौटलीय अर्थ शास्त्र में आचार्य चाणक्य ने जहां संघ-राज्यों (गणों) में आन्तरिक फूट डाल कर उन्हें जीतने के उपायों का वर्णन किया है, वहां इसी बात का आश्रय लिया है। उसने अपने 'विजिगीषु' राजा को सलाह दी है, कि गणों में मनुष्यों की कुलीनता के सम्बन्ध में एक दूसरे से आक्षेप कराके उन में फूट डलवावे ।[2]

जब कोई बाहर का आदमी किसी गण राज्य में आकर बसता था तो उसकी भिन्न संज्ञा होती थी। उदाहरण के तौर पर वृजि राज्य को लीजिये। वृजि गण का प्रत्येक आदमी, जो जन, वंश, कुल आदि की दृष्टि से शुद्ध वृजि हो, वृजि कहायेगा। पर दूसरे लोग जो वृजि राज्य में बसे हुवे हों, वृजिक कहावेंगे ।[3] यही भेद मद्र और मद्रक में है। मद्र गण का प्रत्येक निवासी, चाहे वह शुद्ध मद्र जाति का हो वा नहीं, मद्रक कहावेगा, पर मद्र उसी को कहेंगे, जो शुद्ध मद्र-जाति का हो। पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी में एक गण-राज्य में रहने वाले विविध मनुष्यों के लिये अभिजन[4] निवास[5] और भक्ति[6] की दृष्टि से जो विविध संज्ञाओं

---

1. जात्या च सदृशाः सर्वे कुलेन सदृशास्तथा।
महाभारत, शान्तिपर्व १०७, ३०
2. कौटलीय अर्थशास्त्र XI p. 368
3. महाभाष्य Vol.II, pp. 314—15
4. अभिजनश्च ४,३,९०
5. सोऽस्य निवासः ४,३,८९
6. भक्ति ४,३,९५

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

की व्यवस्था की है, उसका यही रहस्य है। गण-राज्य के निवासी दूसरे लोगों को अपने राज्य में निवास करने की अनुमति देने पर भी उन्हें वे अधिकार व हैसियत नहीं देते थे, जो शुद्ध जाति के लोगों की होती थी।

इन गण राज्यों में कुछ उसी ढंग का वातावरण होता था, जो बाद की जात-बिरादरियों में दिखाई देता है। शाक्य लोग वृजियों से भिन्न थे, वृजि मद्रों से। सब दूसरों की अपेक्षा अपने को कुलीन समझते थे। सबका अपना अपना 'स्वधर्म' होता था। अपनी अपनी प्रथाओं, रीति रिवाजों आदि का सब भली भांति पालन करते थे। सब के अपने अपने देवता भी पृथक् पृथक् होते थे। एक सामान्य पूजा विधि व धर्म के अतिरिक्त विविध गणों की अपनी अपनी विशिष्ट पूजा विधि तथा आचार विचार थे। सब के पृथक् नगरपाल, दिग्पाल तथा कुल-देवता थे। इन विशिष्टताओं को बहुत महत्व दिया जाता था। इनके पालन में सब बड़ी व्यग्रता के साथ तत्पर रहते थे।

(२) जब भारत में बड़े साम्राज्यों का विकास हुवा, तब भी बहुत से गण राज्य अधीनस्थ रूप में जारी रहे। भारत के सम्राटों ने इन्हें मूलतः नष्ट कर देने का उद्योग नहीं किया। स्वतन्त्रता नष्ट हो जाने पर भी इनकी अधीनस्थ सत्ता कायम रही। भारत के साम्राज्यों में सब से मुख्य और पुराना साम्राज्य मगध का था। मगध के मौर्य सम्राटों की इन राज्यों के प्रति क्या नीति थी, इसका परिचय कौटलीय अर्थशास्त्र से मिलता है। वहां लिखा है—

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

"संघ (गणराज्य) की प्राप्ति मित्र और बल की प्राप्ति की अपेक्षा अधिक महत्व की है। जो संघ आपस में मिले हुवे हों (परस्पर संघात हों), उनके प्रति साम और दाम की नीति का प्रयोग किया जाय, क्योंकि वे शक्तिशाली होने से दुर्जेय होते हैं। जो परस्पर संघात न हों, उन्हें दण्ड और भेद के प्रयोग से जीत लिया जाय।[1]"

इस उद्धरण से स्पष्ट है, कि आचार्य चाणक्य की नीति यह थी, कि शक्तिशाली राज्यों को नष्ट करने के स्थान पर साम दाम के प्रयोग से वश में किया जाय। उन्हें मित्र बना कर अपने अधीन रखा जाय, उनकी सत्ता को स्वीकार कर उन्हें जीवित रहने दिया जाय। जो राज्य निर्बल हों, उन्हें सेना तथा फूट द्वारा जीत लिया जाय। जो बहुत से गण राज्य मौर्य साम्राज्य की अधीनता में पृथक् रूप से अधीनस्थ सत्ता रखते थे, उनमें से कुछ की सूचि भी अर्थ शास्त्र में पाई जाती है। वहां लिखा है—

"लिच्छविक, वृजिक, मद्रक, कुकुर, कुरु, पञ्चाल आदि राज-शब्दोपजीवि (संघ) हैं।"

"कम्भोज, सुराष्ट्र, क्षत्रिय, श्रेणि आदि वार्ताशस्त्रोपजीवि (संघ) हैं।[2]"

मौर्यवंशी महाराज अशोक के साम्राज्य में भी बहुत से गण राज्य अधीनस्थ रूप में विद्यमान थे। अशोक के शिलालेखों में इस तरह के

1. कौटलीय अर्थशास्त्र XI, p. 378

2. तथा p. 378

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अनेक राज्यों का उल्लेख है। कुछ के नाम निम्न लिखित हैं—योन, कम्भोज, नाभक, नाभपंक्ति और भोज।[1]

इन विविध अधीनस्थ राज्यों में अपने अपने रीतिरिवाज तथा कानून प्रचलित थे। मौर्य सम्राट् उन्हें न केवल स्वीकार ही करते थे, अपितु साम्राज्य के कानून का अंग मानते थे। यही कारण है, कि इन विविध स्थानीय कानूनों को राजकीय रजिस्टरों में रजिस्टर्ड (निबन्ध-पुस्तकस्थ) करने की व्यवस्था की गई है। अर्थशास्त्र में लिखा है, कि देश, ग्राम, जाति कुल आदि विविध संघों के अपने अपने धर्म, व्यवहार, चरित्र आदि को निबन्ध पुस्तकों में उल्लिखित किया जाय।[2] न्यायालयों में इन स्थानीय कानूनों को दृष्टि में रखा जाता था।

मौर्य साम्राज्य के निर्बल होने पर भारतीय इतिहास में अकेन्द्रीभाव (Decentralisation) की प्रवृत्ति फिर प्रबल हुई। इसके साथ ही बहुत से गण राज्य स्वतन्त्र हो गये। यौधेय, मालव, शिवि आदि अनेक पुराने गण राज्यों ने फिर से अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त की। शुङ्ग वंश के शासन काल में न केवल ये पुराने राज्य स्वतन्त्र हुवे, पर कुछ ऐसे राज्य भी स्थापित हुवे, जिनका प्राचीन इतिहास में उल्लेख नहीं मिलता। मौर्यों के पतन के बाद इन गण राज्यों की शक्ति बहुत बढ़ी चढ़ी थी। शुङ्ग और आन्ध्रवंश (भारत के) तथा बैक्ट्रियन, कुशान आदि विदेशी आक्रान्ता कोई भी इन्हें पूरी तरह विजय न कर सके।

---

1. अशोक के चतुर्दश शिलालेख नं० ५ और १३
2. देश ग्राम जाति कुल संघातानां धर्म व्यवहार चारित्र संस्थानं निबन्ध-पुस्तकस्थं कारयेत् कौटलीय अर्थशास्त्र II, 7

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यह सम्भव नहीं है, कि इस पुस्तक में इन साम्राज्यवादी शक्तियों के मुकाबले में गण राज्यों के संघर्ष का वर्णन किया जा सके। पर यह निर्विवाद है, कि इन गण राज्यों में इतनी चेतना, आत्मानुभूति तथा शक्ति विद्यमान थी, कि मौर्य, शुङ्ग, कण्व, आन्ध्र, शक, कुशन आदि विविध वंशों के शक्तिशाली सम्राट् कभी भी इन्हें पूर्णतया नष्ट न कर सके।

इनकी शक्ति का एक प्रधान हेतु भारतीय सम्राटों की सहिष्णुता की नीति ही थी। भारत के आचार्यों ने 'स्वधर्म' के सिद्धान्त पर बहुत जोर दिया है। जैसे प्रत्येक मनुष्य को 'स्वधर्म' का पालन करना चाहिये, वैसे ही साम्राज्य के प्रत्येक अंग—प्रत्येक ग्राम, प्रत्येक कुल, प्रत्येक गण आदि को भी 'स्वधर्म' में दृढ़ रहना चाहिये। प्रत्येक के जो अपने व्यवहार, रीतिरिवाज, कानून आदि हैं, उनका उल्लंघन न करना चाहिये। यदि कोई इनका उल्लंघन करे, तो राजा का कर्तव्य है, कि उसे दण्ड दे और 'स्वधर्म पर दृढ़ रहने के लिये बाधित करे।[1]' राजा जब अपना 'स्वधर्म' निश्चय करे तो, इन विविध अंगों के 'स्वधर्म' को दृष्टि में रखे,[2] अर्थात् ऐसा प्रयत्न करे, कि इनके 'स्वधर्म' का उल्लंघन राजा भी न करे।

---

1. कुलानि जातीः श्रेणीश्च गणान् जानपदान् अपि
स्वधर्म चलितान् राजा विनीय स्थापयेत् पथि ॥
याज्ञवल्क्य स्मृति १, ३६०

2. जाति जानपदान् धर्मान् श्रेणीधर्मांश्च धर्मवित्
समीक्ष्य कुधलर्मांश्च स्वधर्मं प्रतिपादयेत् ॥
मनुस्मृति ८, ४१

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इस नीति का परिणाम यह होता था, कि बड़े बड़े शक्तिशाली साम्राज्यों का विकास हो जाने पर भी गण राज्यों की सत्ता कायम रहती थी। उनमें अपनी पृथक् अनुभूति बनी रहती थी। राजनीतिक दृष्टि से पराधीन होते हुवे भी सामाजिक जीवन में वे स्वाधीन रहते थे। यही कारण है, कि बड़े बड़े सम्राटों के शासनकाल में भी ये पुराने गण-राज्य अपना आर्थिक व सामाजिक जीवन स्वतन्त्र रूप से बिताते थे। पुराने भारत में लोकसत्तात्मक (Democratic) शासन थे वा नहीं, इस प्रश्न पर यहां विवाद करने से क्या लाभ ? पर यह तो स्पष्ट है, कि साम्राज्यों के जमाने में जब दुनिया में कहीं भी जनता का शासन न था, भारत में इस नीति के कारण से छोटे छोटे गण राज्य आर्थिक व सामाजिक क्षेत्र में स्वयं अपने मालिक थे। आर्थिक व सामाजिक क्षेत्र में लोकतन्त्र शासन (Democracy) यहां तब भी विद्यमान थे।

शक्तिशाली साम्राज्यों के अधीन अपना पृथक् जीवन बिताते हुवे, 'स्वधर्म' का अनुसरण करते हुवे इन गणराज्यों में अपनी पृथक् अनुभूति बनी रही। यह बात बड़े महत्व की है। जब भी इन्हें मौका मिला, साम्राज्यशक्ति जरा भी निर्बल हुई, अपनी राजनीतिक स्वतन्त्रता पुनः प्राप्त कर लेने में भी ये नहीं चूके। पर सदियों की निरन्तर अधीनता ने इन्हें राजनीतिक दृष्टि से बलहीन अवश्य कर दिया। अन्त में, इनकी राजनीतिक सत्ता सर्वथा नष्ट हो गई। केवल सामाजिक सत्ता रह गई। ये स्वतन्त्र गणों के स्थान पर जाति-बिरादरियां बन गई।

साम्राज्यों और गणों का संघर्ष भारतीय इतिहास में लगभग एक हजार वर्ष तक जारी रहा। मोटे तौर पर इस संघर्ष का काल शैशुनाग

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वंश (पांचवीं सदी ईस्वी पूर्व) से गुप्त साम्राज्य (पांचवीं सदी ईस्वी पश्चात्) तक है। इस लम्बे संघर्ष से छोटे छोटे गणराज्य सर्वथा क्षीण हो गये, और अपनी राजनीतिक सत्ता सदा के लिये खो बैठे। महाराज हर्षवर्धन के बाद ये गणराज्य उत्तरी भारत से प्रायः लुप्त हो गये। या यूं कहना अधिक ठीक होगा, कि ये राज्य राजनीतिक सत्ता के स्थान पर सामाजिक सत्ता ही रह गये।

कुछ गणराज्यों को अपनी स्वाधीनता इतनी प्रिय थी, कि वे साम्राज्यवाद की अधीनता स्वीकार करने की अपेक्षा अपना देश छोड़ कर अन्यत्र बस जाने को अधिक पसन्द करते थे। इसीलिये उन्होंने अपने हरे भरे शस्य श्यामल प्रदेशों को छोड़ कर मरुभूमि का आश्रय लिया। वहां शक्तिशाली सम्राटों के हमलों से बचकर अपनी स्वाधीन सत्ता की रक्षा कर सकना सम्भव था। यौधेय और मालव आदि अनेक गण इसी तरह अपने पुराने निवासस्थान को छोड़ कर राजपूताना की घाटियों में जा बसे।[1] निःसन्देह, वहां वे अपनी रक्षा करने में समर्थ हुवे।

पर अधिकांश गण अपने पुराने स्थान पर ही रहे। सम्राट उनकी आन्तरिक स्वाधीनता को स्वीकार करते थे, उनके रीति रिवाजों तथा कानूनों को मानते थे। न केवल मानते ही थे, पर उन पर उन्हें दृढ़ रखने का प्रयत्न करते थे। इससे उन गणों में अपनी पृथक् अनुभूति

1. K.P.Jayaswal. Hindu Polity. Part I.P.124

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बनी रही। धीरे धीरे उसकी राजसत्ता समाप्त हो गई—पर पृथक् सत्ता बनी रही। यही पृथक् सत्ता आज भी कायम है।

(३) वर्तमान समय की अनेक जातियों की उत्पत्ति प्राचीन भारतीय गणराज्यों में ढूंढी जा सकती है। जाति-भेद का विकास किस प्रकार हुवा, यह प्रश्न बड़ा जटिल है। जाति भेद के विकास में बहुत से कारण हैं, किसी एक हेतु से सब जातियों के मूल व विकास की व्याख्या नहीं की जा सकती। विविध जातियों का उद्भव विविध प्रकार से हुवा। मैं यहां भारत के सम्पूर्ण जाति भेद की व्याख्या करने का प्रयत्न नहीं करूँगा। न ही मैं यह प्रयत्न करूँगा, कि प्राचीन भारत के सब गणराज्यों की प्रतिनिधि रूप आधुनिक जातियों को प्रदर्शित करूँ। मेरी स्थापना यह है, कि वर्तमान समय की अनेक जातियों का उद्भव प्राचीन गणों द्वारा हुवा है। यथा, अग्रवाल जाति का उद्भव आग्रेय गण से है। इसी स्थापना को पुष्ट करने के लिये मैं यहां यह प्रदर्शित करना चाहता हूं, कि किस प्रकार प्राचीन समय के अनेक गणराज्य अब जातियों के रूप में परिवर्तित हो गये हैं। कठिनता यह है, कि पुराने जमाने के बहुत से गण अपना असली निवास स्थान छोड़ कर नये स्थानों पर जा बसे हैं। पर हमारे सौभाग्य से कुछ जातियां ऐसी भी है, जो अपनी पुरानी जगह से बहुत दूर नहीं गई हैं, और जिनमें अपने पुराने वैभव, लुप्त राजसत्ता तथा गौरव की स्मृति अभी तक शेष है। ऐसी जातियों द्वारा हम भारत के जाति भेद की समस्या को कुछ हद तक सुलझा सकते हैं। उदाहरण के लिये मैं कुछ जातियों को यहां देता हूँ—

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

१. ग्रीक ऐतिहासिकों ने क्सैथ्रोई (Xathroi) नाम के एक गणराज्य का वर्णन किया है,[1] जो बड़ा शक्तिशाली राज्य था। यदि क्सैथ्रोई का संस्कृत रूप ढूंढें, तो वह क्षत्रिय बनेगा। कौटलीय अर्थशास्त्र में एक गण व संघराज्य का नाम दिया गया है, जिसे क्षत्रिय लिखा गया है। इसकी गिनती वार्ताशस्त्रोपजीवि राज्यों में की गई है।[2] इस क्सैथ्रोई या क्षत्रिय गण का निवासस्थान मध्य पंजाब में रावी नदी के समीप था, मुख्यतया, उस प्रदेश में जहां आजकल लाहौर और अमृतसर के जिले हैं। इस प्राचीन गण के वर्तमान प्रतिनिधि सम्भवतः खत्री जाति के लोग हैं, जो मुख्यतया लाहौर और अमृतसर में रहते हैं। कौटल्य ने क्षत्रिय गण को वार्ताशस्त्रोपजीवि कहा है। वार्ता का मतलब कृषि, पशुपालन और वाणिज्य व्यापार से है। पुराना क्षत्रिय गण वार्ताशस्त्रोपजीवि था, अर्थात् वाणिज्य व्यापार के साथ साथ शस्त्रधारण भी करता था। आजकल के खत्री भी मुख्यतया व्यापार करते हैं। राजनीतिक सत्ता नष्ट हो जाने से उनकी शस्त्रोपजीविता प्रायः नष्ट हो गई है, पर वार्तोपजीविता अभी जारी है। शस्त्रास्त्र को भी वे लोग पूरी तरह नहीं भूले हैं। मध्यकालीन मुसलिम युग में अनेक खत्री अच्छे ऊँचे राजनीतिक पदों पर रहे। सिक्खों के राज्य में भी उन्होंने अच्छी वीरता प्रदर्शित की। अब भी पंजाब के शासन में उनका अच्छा स्थान है। वार्ताशस्त्रोपजीवि लोगों का क्या रूप था, इसके वे अच्छे उदाहरण हैं।

---

1. McCrindle-The Invasion of India by Alexander the Great, pp.147,156,252

2. अर्थशास्त्र XI,p.378

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

२. बौद्ध साहित्य में पिप्पलिवन के मोरिय गण का उल्लेख आता है।[1] ये लोग बिहार प्रान्त के उत्तरीय प्रदेश में हिमालय की उपत्यका में बसते थे। मगध के बढ़ते हुवे साम्राज्य ने इन पर आक्रमण किया और इन्हें जीत कर अपने अधीन कर लिया। मौर्य वंश की उत्पत्ति इसी गण से हुई। मोरिय गण की एक राजकुमारी पाटलिपुत्र में रहती थी, उसी से चन्द्रगुप्त मौर्य पैदा हुवा था। मोरिय गण का वंशज होने से ही चन्द्रगुप्त भी 'मोरिय' या 'मौर्य' कहाता था।[2] इस प्राचीन मोरिय गण के वर्तमान प्रतिनिधि सम्भवतः उत्तरी भारत के मोरई व मुराव लोग हैं, जो मुख्यतया उत्तरी बिहार व उत्तर पूर्वी अवध में निवास करते हैं। मोरई लोग भी खेती-पेशा हैं, और चाणक्य की परिभाषा में 'वार्ताशस्त्रोपजीवि' कहे जा सकते हैं। मोरई लोग अपने अतीत वैभव को सर्वथा नहीं भूल गये हैं। यद्यपि कृषि करने के कारण उन्हें सामान्यता शूद्र समझा जाता है, पर वे अपने को क्षत्रिय समझते हैं। कुछ दिन की बात है, लखनऊ के चीफकोर्ट में एक मुकदमे में मोरई जाति के एक प्रतिवादी ने अपने को क्षत्रिय सिद्ध करने का प्रयत्न किया था। उसका यह भी कथन था, कि मोरई लोग प्राचीन मोरियों के वंशज हैं।

३. श्रेणी गण का जिक्र कौटलीय अर्थशास्त्र में आया है, और उसकी गणना वार्ताशस्त्रोपजीवि गणों में की गई है।[3] उनका नाम

---

1. महापरि निब्बान सुत्त 6, 31
2. Mahavamso 5.14-171
3. कौटलीय अर्थशास्त्र XI p. 378

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्षत्रिय गण के पीछे आता है और गणों के क्रम से सूचना मिलती है कि ये क्षत्रिय गण के समीप ही उनके प्रदेश से पूर्व की तरफ बसते थे। उनके वर्तमान प्रतिनिधि आजकल के 'सैनी' लोग प्रतीत होते हैं। सैनी लोग पूर्वी पंजाब व पश्चिमी संयुक्तप्रान्त में रहते हैं। उनका मुख्य पेशा खेती है। खत्रियों के समान वे भी वस्तुतः वार्ताशस्त्रोपजीवि हैं। वार्ता का एक अङ्ग व्यापार जिस प्रकार क्षत्रिय गण की विशेषता थी, वैसे ही दूसरा अङ्ग खेती श्रेणि गण की विशेषता थी। मगध के राजा बिम्बिसार को जैन ग्रन्थों में 'श्रेणिय' कहा गया है। शायद उसकी यह संज्ञा इस श्रेणिगण के साथ सम्बन्ध रखने के कारण ही थी।

४. प्राचीन भारत के महत्त्व पूर्ण गणराज्यों में आभीरगण अन्यतम था। इलाहाबाद में प्राप्त समुद्रगुप्त की प्रशस्ति में इस गण का उल्लेख मिलता है।[1] ईसवी चौथी शताब्दि में यह गण बड़ा शक्तिशाली था। समुद्रगुप्त की प्रशस्ति के अतिरिक्त महाभारत[2] तथा अन्यत्र भी संस्कृत साहित्य मे [3] इस गण का जिक्र पाया जाता है। सम्भवतः, आजकल के अहीर इसी आभीर गण के वंशज हैं। अहीर लोग दिल्ली, मथुरा तथा पंजाब के दक्षिण-पूर्वी प्रदेश में रहते हैं।

५. अरायन पंजाब की एक जाति है जो मुख्यतया पंजाब के सिरसा तथा सतलुज व सम्मेत की घाटियों में रहती है। आजकल ये लोग प्रायः सब मुसलमान हो चुके हैं। पर इसमें सन्देह नहीं, कि ये भारत

1. Fleet, Inscriptions of the Early Gupta Kings, p. 14
2. महाभारत २, ३२, ११६२
3. मनुस्मृति १०, १५
'तथा' आभीर देशे किल चन्द्रकांतं त्रिभिर्वराटैः विपिणन्ति गोपाः,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

की एक प्राचीन जाति है। मेरा खयाल है, कि ये प्राचीन आर्जुनायन गण के प्रतिनिधि हैं, जिनका जिक्र प्राचीन भारतीय साहित्य में अनेक स्थलों पर आता है।[1]

६. रोहतगी या रस्तोगी उत्तरी भारत की एक प्रसिद्ध जाति है। इनका पेशा मुख्यतया व्यापार है। इस जाति का उद्भव महाभारत में वर्णित रोहतक गण से हुवा प्रतीत होता है।[2] यह गण पंजाब के दक्षिण पूर्वी भाग में स्थित था। आजकल वहीं रोहतक नामका प्रसिद्ध नगर है। रोहितक और रोहतक एक ही जगह के नाम हैं। कुछ रोहतगी रोहतक से ही अपना निकास भी मानते हैं। यह सर्वथा सम्भव है, कि आजकल के रोहतगी प्राचीन रोहितक गण के प्रतिनिधि हों। ये 'आग्रेय' व अग्रवालों के पड़ौसी थे। इन दिनों भी ये दोनों जातियां व्यापार तथा आचार-विचार की दृष्टि से बहुत अधिक भेद नहीं रखती हैं।

७. पंजाब की एक महत्वपूर्ण व्यापारी जाति अरोड़ा है। ये लोग प्रधानतया मुलतान तथा उसके आस पास के जिलों में बसते हैं। सम्भवतः, ये ग्रीक लेखकों द्वारा वर्णित अरट्रियोई[3] (Aratrioi या Adraistai) गण के प्रतिनिधि हैं। यह गण पंजाब के दक्षिण-पश्चिमी भाग में ही स्थित था। महाभारत में शायद इसी को आरट्ट लिखा गया है।[4]

---

1. K.P Jayaswal ,Hindu Polity, I. p. 124

2. महाभारत ३,२५४,१५२५६

3. McCrindle,Alexander. p,116

4. महाभारत ६,८५,३६६४

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

८. कौटलीय अर्थशास्त्र में वर्णित वार्ताशस्त्रोपजीवि गणों में एक काम्बोज था।[1] महाभारत[2] और बौद्ध साहित्य[3] में भी इसका उल्लेख मिलता है। सम्भवतः, इसकी वर्तमान प्रतिनिधि कम्बोह जाति है, जो पश्चिमी संयुक्त प्रान्त और पंजाब में बसती है। यह जाति मुख्यतया कृषि द्वारा जीवन निर्वाह करती है, और इसमें बहुत से अच्छी हैसियत के जमींदार हैं। कृषि इनकी मुख्य आजीविका थी, इसीलिये इन्हें वार्ताशस्त्रोपजीवि कहा गया था—अब भी यही इनका मुख्य पेशा है। ग्रीक ऐतिहासिक एरियन ने जो कैम्बिस्थोली[4] (Cambistholi) राज्य लिखा है, वह शायद कम्बोज गण ही है।

९यौधेय गण प्राचीन भारत का एक शक्तिशाली राज्य था। रुद्रदामन शक ने इन्हें वश में किया था। उसने अपने शिलालेख में इनकी वीरता तथा शौर्य का बड़े शानदार शब्दों में उल्लेख किया है। उसने लिखा है—ये यौधेय सम्पूर्ण क्षत्रियों में अपनी वीर पदवी को सार्थक रूप से स्थापित करने के कारण बड़े अभिमानी हो गये थे।[5] समुद्रगुप्त की इलाहाबाद वाली प्रशस्ति में भी यौधेयों का जिक्र आया है।[6] इनके प्राचीन गण के अनेक सिक्के भी उपलब्ध होते हैं। इन यौधेयों के वर्तमान प्रतिनिधि सम्भवतः जोहिया राजपूत हैं, जो प्रधानतया

1. कौटलीय अर्थशास्त्र XI, p. 378
2. महाभारत २, २७, १०२१
3. T. W. Rhys Davids, Buddhist India, p. 28
4. Cunningham. The Ancient Geography of India, p. 216
5. Sanskrit and Prakrit Inscriptions of Kattyawar, p. 19
6. Fleet, Inscriptions of the Early Gupta Kings, p. 251

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सतलुज के तट पर बसते हैं। संयुक्तप्रान्त में भी कुछ जोहिया रहते हैं। प्राचीन यौधेयों के समान आजकल के जोहिया राजपूत भी अच्छे वीर हैं।

१०. उत्तरीय बिहार व पूर्वी संयुक्तप्रान्त में एक प्रसिद्ध जाति निवास करती है, जिसे कोरी व कोएरी कहते हैं। सम्भवतः, ये लोग प्राचीन कोलिय गण के प्रतिनिधि हैं, जिसका उल्लेख बौद्ध साहित्य में आता है।[1] कोलिय गण का निवास उत्तरीय बिहार में था, और उनके वर्तमान प्रतिनिधि अपने पुराने निवास स्थान से अभी बहुत दूर नहीं हटे हैं।

ये इतने उदाहरण पर्याप्त हैं। इनकी संख्या को बहुत बढ़ाने की आवश्यकता नहीं। हमने पुराने भारतीय गणों और आजकल की जात बिरादरियों में समता दिखाने का जो यह प्रयत्न किया है, वह केवल उदाहरण के तौर पर ही है। अब भी बहुत से इसी तरह के उदाहरण दिये जा सकते हैं। यह कार्य बड़े महत्त्व का है। भारत के सैकड़ों प्राचीन गणराज्यों के आजकल के प्रतिनिधियों को ढूंढने के लिये बड़ा समय चाहिये और उन्हें प्रदर्शित करने के लिये एक पृथक् पुस्तक की आवश्यकता होगी। उसके लिये हम यहां प्रयत्न न करेंगे।

भारत की बहुत सी वर्तमान जातियों में यह किंवदन्ती चली आती है, कि उनका उद्भव किसी प्राचीन राजा से हुवा है, वे किसी राजा की सन्तान हैं, किसी समय उनका भी पृथिवी पर राज्य था। केवल अग्रवालों

1. Rhys Davids, Buddhist India, p. 22

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

में नहीं, दूसरी बहुत सी जातियों में भी यह बात अनुश्रुति द्वारा पाई जाती है। इस किंवदन्ती का होना कुछ अभिप्राय रखता है। वस्तुतः, किसी समय उनका अपना राज्य—गणराज्य था, और वे किसी गणराज्य के ही उत्तराधिकारी हैं। इस सम्बन्ध में श्रीयुत् रसेल की जातिभेद सम्बन्धी पुस्तक से एक उद्धरण देना बहुत उपयोगी होगा—

"ऐसा प्रतीत होता है, कि बनिया लोगों का मूल राजपूतों से है। उनमें से अनेक जातियों में किंवदन्ती है, कि उनका उद्भव राजपूतों से हुवा। अग्रवाल कहते हैं, कि उनका सर्व प्रथम पूर्वज एक क्षत्रिय राजा था। उसने एक नाग कुमारी के साथ विवाह किया। नाग लोग सम्भवतः सीदियन जाति के थे, जो बाहर से भारत में आकर बसे। अनेक राजपूत जातियों का उद्भव इन्हीं सीदियन लोगों से माना जाता है। सीदियन लोग नाग की पूजा करते थे, इसलिये शायद नाग कहाते थे। अग्रवालों का नाम अगरोहा या सम्भवतः आगरा से पड़ा। ओसवाल कहते हैं, कि उनका सर्व प्रथम पूर्वज मारवाड़ के ओसनगर का राजा था, और वह राजपूत था। उस राजा ने अपने अनुयायियों के साथ जैन धर्म की दीक्षा ली। नेम लोग बताते हैं, कि उनका उद्भव चौदह राजपूत कुमारों से हुवा, जो परशुराम के कोप से बचने में समर्थ हुवे थे। परशुराम के कोप से बचने के लिये ही उन्होंने शस्त्र त्याग कर व्यापार प्रारम्भ किया था। खण्डेलवालों का नाम राजपूताना की जयपुर रियासत के खण्डेल नामक नगर से पड़ा है।[1]"

1. R. V. Russel, Tribes and Castes of the Central Provinces. Vol. II. pp. 116-117.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आगे रसेल साहब ने इसी तरह के अन्य भी बहुत से उदाहरण दिये हैं।

कर्नल टाड ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ राजपूताना का इतिहास में चौरासी वैश्य जातियों की नामावली दी है, जिनके सम्बन्ध में उनका खयाल है कि उनका उद्भव राजपूतों से हुवा था।[1] इस नामावली में अग्रवाल, ओसवाल, श्रीमाल और खण्डेलवाल नाम भी आते हैं।

ईलियट का भी यही खयाल है कि भारत की प्रायः सभी व्यापारी व वैश्य जातियों का उद्भव राजपूतों से हुवा।[2]

राजपूत लोग कौन थे, उनका उद्भव कहां से और किस प्रकार हुवा, यह प्रश्न बड़ा जटिल है। इस पर विचार करने की यहां आवश्यकता नहीं। इसी तरह ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र—इस चातुर्वर्ण्य का क्या अभिप्राय है, यह प्रश्न भी बहुत टेढ़ा है। पर रसेल, टाड, ईलियट आदि विद्वानों ने वैश्य जातियों में प्रचलित जिन किंवदन्तियों का उल्लेख कर उनका मूल राजपूतों से बताया है, उसका ऐतिहासिक दृष्टि से यही अभिप्राय है, कि किसी समय इन जातियों के भी अपने राज्य थे, उनके भी अपने राजा थे। यद्यपि आज इनका कोई राज्य नहीं, ये शस्त्र धारण नहीं करतीं, पर किसी दिन ये अपना शासन स्वयं करती थीं और व्यापार के साथ-साथ शस्त्रधारण भी करती थीं। उनका अपना राज्य होने से उन्हें मूलतः चाहे क्षत्रिय कहिये चाहे राजपूत। इतिहास में वास्तविक घटनाओं पर दृष्टि रखने वाले के लिये इससे कोई भेद नहीं आता। पर

1. Tod, Rajasthan, Vol. I, pp. 76, 109.
2. Elliot, Supplementary Glossary. p. 110.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उनकी अपनी पृथक् स्वतन्त्र राजनीतिक सत्ता से इन्कार नहीं किया जा सकता। ऐसे राज्यों के लिये कौटलीय अर्थ शास्त्र का 'वार्ताशस्त्रोपजीवि' विशेषण बड़े महत्व का है। यह उनकी दशा का ठीक-ठीक वर्णन करता है। जैसा हम पहले लिख चुके हैं, वार्ता का मतलब कृषि, पशुपालन, तथा वणिज्या (वणिज व्यापार) से है। ये गण-राज्य मुख्यतया खेती, पशुपालन व वणिज व्यापार करके अपनी आजीविका चलाते थे। पर स्वतन्त्र राज्य होने से इनके लिये शस्त्रधारण करना भी आवश्यक होता था। संसार के प्राचीन इतिहास में फिनीसिया, कार्थेज व कारिन्थ इसी तरह के राज्य थे। कार्थेज अफ्रीका के उत्तरी कोने में इटली के ठीक सामने एक छोटा सा नगर राज्य (City state व गण) था। व्यापार के लिये वह जगत् प्रसिद्ध था। पर साथ ही, वहां के लोग अद्भुत वीर भी थे। रोम के साथ इनके बहुत से युद्ध हुवे। प्राचीन दुनियां के बहुत से राज्य इसी तरह के वार्ताशस्त्रोपजीवि होते थे, साम्राज्यवाद के विकास के कारण इनकी राजनीतिक सत्ता नष्ट हो गई। इन्हें शस्त्र धारण की आवश्यकता न रही। इस तरफ से छुट्टी पाकर इन्होंने अपना सारा ध्यान खेती, पशुपालन व व्यापार में लगा दिया। परिणाम यह हुवा कि ये विशुद्ध व्यापारिक जातियां बन गई।

संसार के अन्य देशों में भी छोटे छोटे गण राज्य थे। उनके भी अपने रीति रिवाज, नियम तथा विशेषतायें थीं। साम्राज्यवादी सम्राटों से जीते जाने के बाद जो वे भारत के समान जात-बिरादरी में नहीं बदल गईं, उसका कारण यूरोप के सम्राटों की असहिष्णुता है। दूसरे देशों के सम्राटों ने 'स्वधर्म' पर जोर नहीं दिया। विविध लोगों

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

की अपनी विशेषताओं को नष्ट कर उन्होंने सब पर एक कानून, एक नियम और पद्धति आरोपित करने का प्रयत्न किया। यही कारण है, कि अन्य देशों के गण राज्य जात-बिरादरी के रूप में विकसित न हो सके। भारत के सम्राट, जैसा हम ऊपर प्रदर्शित कर चुके हैं, सहिष्णु थे। वे न केवल विविध लोगों के नियम क़ानून को स्वीकार करते थे, अपितु उन्हें 'स्वधर्म' पर दृढ़ रखने में ही अपना कर्तव्य मानते थे। इसी कारण राजनीतिक सत्ता खो चुकने के बाद भी भारत के गण राज्य जीवित रहे और धीरे धीरे जात-बिरादरी के रूप में परिणत हो गये।

यह बात बड़े महत्व की है, कि अग्रवालों में अपनी पुरानी राजसत्ता के जीते जागते चिह्न आज तक भी विद्यमान हैं। अग्रवालों में विवाह के अवसर पर निशान, नगाड़ा, छत्र, और चंवर का इस्तेमाल होता है। ये भारतीय परम्परा के अनुसार राजसत्ता के चिह्न माने गये हैं। अब तक इनका प्रयोग में आना अग्रवालों के पुराने आग्रेय राज्य का स्मारक है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पांचवां अध्याय

आग्रेय गण का संस्थापक राजा अग्रसेन

आग्रेय गण या अग्रवाल जाति का संस्थापक राजा अग्रसेन था। इसे खाली अग्र भी लिखा गया है। अग्रवाल लोग इसे देवता के समान पूजते हैं। वे इसे अपना आदि पितामह मानते हैं। इस राजा अग्रसेन के विषय में बहुत सी दन्त कथायें प्रचलित हैं। इनका संग्रह क्रुक महोदय ने बड़ी सुन्दरता के साथ किया है। हम उसे यहां उद्धृत करते हैं—

"उसका पूर्वज राजा धनपाल था। वह प्रतापनगर का राजा था। कुछ लोगों के विचार में यह प्रतापनगर इसी नाम के राजपूताना के राज्य को सूचित करता है। दूसरे लोग यह समझते हैं, कि यह प्रतापनगर दक्खन या दक्षिण भारत में था। धनपाल के आठ बेटे थे—शिव, नल,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अनल, नन्द, कुन्द, कुमुद वल्लभ, और शुक। इनके अतिरिक्त उसकी मुकुटा नाम की एक लड़की भी थी। उसी समय विशाल नाम का एक और राजा था, जिसकी आठ कन्यायें थीं। उनके नाम निम्नलिखित हैं—पद्मावती, मालती, सुभगा, कान्ती, श्री, ध्रुवा, वसुन्धरा और रजा। इन आठ कन्याओं का विवाह धनपाल के आठ लड़कों के साथ हुआ। इनमें से नल तो संन्यासी हो गया। बाकी सातों सात पृथक् पृथक् राज्यों के स्वामी हुवे। शिव के वंश में क्रमशः विष्णुराज, सुदर्शन, धुरन्धर, समाधि, मोहनदास और नेमिनाथ हुवे। इस नेमिनाथ ने नेपाल बसाया और अपने नाम पर उसका नाम नेपाल रक्खा। उसका लड़का वृन्द हुवा। इसने वृन्दावन में एक बड़ा भारी यज्ञ किया। इसी के नाम से उस जगह का नाम वृन्दावन पड़ा। वृन्द का लड़का राजा गुर्जर हुवा। उसने गुजरात पर कब्ज़ा किया। उसका उत्तराधिकारी राजा हरिहर था। हरिहर के सौ पुत्र थे। इनमें से एक रंगजी राजा बना, बाकी सब अधर्म का अनुसरण करने से शूद्र हो गए। रंग जी के बाद पांचवी पीढ़ी में राजा अग्रसेन उत्पन्न हुवे। उन दिनों नागलोक का राजा कुमुद था। उसकी एक कन्या माधवी नाम की थी, जो बड़ी रूपवती थी। इन्दु उससे विवाह करना चाहता था, पर राजा कुमुद की इच्छा थी, कि माधवी का विवाह राजा अग्रसेन के साथ हो। माधवी के साथ विवाह के अनन्तर राजा अग्रसेन ने बहुत से यज्ञ बनारस और हरिद्वार में किये। उन दिनों कोलपुर के राजा महीधर की कन्या का स्वयंवर था। अग्रसेन वहां भी गया और महीधर की कन्या को स्वयंवर में प्राप्त किया। अन्त में वह दिल्ली के समीपवर्ती प्रदेश में बस गया, और

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आगरा तथा अगरोहा को राजधानी बना कर राज्य करने लगा। उसका राज्य हिमालय से गंगा और यमुना तक विस्तृत था, तथा पश्चिम में उसकी सीमायें मारवाड़ को छूती थीं। उसकी अठारह रानियां थीं, जिनके द्वारा चौवन पुत्र तथा अठारह कन्याएं उत्पन्न हुईं। वृद्धावस्था में उसने निश्चय किया कि अपनी प्रत्येक रानी के साथ एक एक यज्ञ करे। प्रत्येक यज्ञ एक-एक पृथक् आचार्य के सुपुर्द था। इन्हीं अठारह आचार्यों के नाम से उन अठारह गोत्रों के नाम पड़े हैं, जिनका प्रादुर्भाव राजा अग्रसेन से हुवा। जब वह अन्तिम यज्ञ कर रहा था तो उसमें बाधा उत्पन्न हो गई और वह उसे पूर्ण न कर सका। यही कारण हैं कि अग्रवालों में सत्रह पूरे और एक आधा गोत्र है।[1]"

यह स्पष्ट है, कि क्रुक महोदय ने अपना यह विवरण मुख्यतया भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र की पुस्तिका 'अग्रवालों की उत्पत्ति' के आधार पर लिखा है। जहां तक राजा अग्रसेन के पूर्वजों का सम्बन्ध है, हम अगले अध्याय में विस्तार से विचार करेंगे। परन्तु अग्रसेन के सम्बन्ध में विविध कथाओं तथा विवरणों का उल्लेख इस अध्याय में करना आवश्यक है। मैं पहले संस्कृत ग्रन्थ 'अग्रवैश्य वंशानुकीर्तनम' के आधार पर राजा अग्रसेन का वृतान्त लिखता हूं।

राजा वल्लभ का पुत्र अग्रसेन हुवा। वह एक शक्तिशाली राजा था। देवताओं का राजा इन्द्र उसके बल वैभव से ईर्ष्या करता था। परिणाम यह हुवा, कि इन्द्र और अग्रसेन में लड़ाई शुरू हुई। इन्द्र द्युलोक का

1. W. Crooke. The Tribes and Castes of North-Western Provinces and Oudh, pp. 14-12

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

राजा है, इसलिये उसने अपने शत्रु अग्रसेन के राज्य में वर्षा का बरसना बन्द कर दिया। दीर्घकाल तक अग्रसेन के राज्य में वर्षा नहीं हुई और इससे बड़ा दुर्भिक्ष पड़ा। पर इससे अग्रसेन निराश न हुवा। उसने महालक्ष्मी की पूजा प्रारम्भ की और उसे प्रसन्न करने के लिये अनेक प्रकार के तप किये। अन्त में अग्रसेन की भक्ति और पूजा से प्रसन्न होकर महालक्ष्मी उसके सन्मुख प्रकट हुई और अपने भक्त को संबोधन कर इस प्रकार बोली "महाराज, जो वर चाहो वही मांगो। मैं तुम्हारी पूजा और भक्ति से पूर्णतया संतुष्ट हूँ, और जो वर मांगोगे, वही मैं पूर्ण करूँगी।"

इस पर राजा ने उत्तर दिया—"यदि आप मुझ पर सचमुच प्रसन्न हैं, तो इन्द्र को मेरे वश में लाइये।" महालक्ष्मी ने स्वीकार किया और साथ ही राजा अग्रसेन को कोलपुर जाने का आदेश दिया। वहां नागों के राजा महीरथ की कन्या का स्वयंवर था। राजा अग्रसेन महालक्ष्मी के वरदान से बड़ा संतुष्ट हुवा और देवी को प्रणाम कर कोलपुर के लिये चल पड़ा। वहां बड़ा भारी उत्सव मनाया जा रहा था। दूर दूर से आए हुवे राजा और राजकुमार स्वयंवर सभा में एकत्रित थे। सब ऊँचे ऊँचे राजसिंहासनों पर विराजमान थे। महालक्ष्मी की आज्ञा का पालन कर अग्रसेन भी वहां पहुँचा और नागकन्या का पाणिग्रहण करने में सफल हुवा। नागकन्या और राजा अग्रसेन का विवाह बड़ी धूमधाम से किया गया। राजा महीरथ की तरफ से बहुत से हाथी, रथ, घुड़सवार पदाति, दास, दासी, हीरे,मोती, सुवर्ण तथा अन्य विविध बहुमूल्य पदार्थ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दहेज में दिये गये। इन सब के साथ नवविवाहित नागकन्या को साथ लेकर राजा अग्रसेन अपनी राजधानी को वापस आया।

ये सब समाचार इन्द्र ने नारद के मुख से सुने। राजा अग्रसेन के उत्कर्ष को सुनकर इन्द्र बहुत घबड़ाया। उसने संधि का प्रस्ताव लेकर नारद को अग्रसेन के दरबार में भेजा। नारद को देखकर अग्रसेन बहुत प्रसन्न हुवा और उसका बड़ी धूमधाम के साथ स्वागत किया। राजा अग्रसेन ने यही प्रतिज्ञा की कि जो कुछ नारद कहेगा, वही करूँगा। इस पर नारद को बहुत संतोष हुवा और उसने वैश्यों के राजा से इस प्रकार निवेदन किया "इन्द्र के साथ मित्रता करलो, इस व्यर्थ के द्रोह से क्या लाभ ?"

ऐसा कह कर नारद अन्तर्धान हो गए और स्वर्ग लोक में इन्द्र के पास पहुँचे। इस तरह नारद मुनि के प्रयत्न से राजा अग्रसेन और इन्द्र में सन्धि हुई। पर राजा अग्रसेन अभी पूर्णतया संतुष्ट न थे। वे एक बार फिर यमुना तट पर गए और अपनी नवविवाहिता वधू नागकन्या के साथ तपश्चर्या का प्रारम्भ किया। कुछ समय की घोर तपस्या के पश्चात् देवी महालक्ष्मी प्रसन्न हुई। प्रकट होकर उन्होंने अपने भक्त को निम्न-लिखित शब्दों में सम्बोधन किया—

"हे राजा, इन तपस्याओं को बन्द करो, तुम गृहस्थ हो। गृहस्थाश्रम सब आश्रमों में मुख्य है। सब वर्णों और आश्रमों के लोग गृहस्थ में ही आश्रय लेते हैं। इसलिये यह उचित नहीं, कि तुम इस प्रकार तपश्चरण करो। जैसा मैं कहती हूं, वैसा ही करो। मेरी आज्ञा का पालन करो, इससे तुम्हें सब सुख वैभव प्राप्त होगा, तुम्हारे वंश के लोग सदा सुखी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और संतुष्ट रहेंगे। तुम्हारा वंश सब जाति और वर्णों में सब से मुख्य रहेगा। आज से लेकर तुम्हारा यह कुल तुम्हारे नाम से प्रसिद्ध होगा और तुम्हारी यह प्रजा अग्रवंशीया कहलायगी। मेरी पूजा तुम्हारे कुल में सदा स्थिर रहेगी और इसी लिये यह सदा वैभवपूर्ण ही रहेगा।"

इस प्रकार उच्चारण कर देवी महालक्ष्मी अन्तर्धान हो गई।

राजा अग्रसेन ने भी देवी महालक्ष्मी की आज्ञा का पालन कर *यमुना-तट को त्याग दिया।* वह स्थान जहां कि इन्द्र वश में किया गया था, हरिद्वार से चौदह कोस पश्चिम में गङ्गा और यमुना के बीच में स्थित था। वहां पर राजा अग्रसेन ने स्मारक बनवाया।

उसने एक नवीन नगर की भी स्थापना की। इस नगर का विस्तार बारह योजन में था। वहां उसने अपनी ही जाति के बहुत से लोगों को बसाया और करोड़ों रुपये शहर के बनाने में खर्च किये। नगर चार मुख्य सड़कों द्वारा विभक्त था। प्रत्येक सड़क के दोनों तरफ राज प्रासादों और ऊँची-ऊँची इमारतों की पंक्तियां थीं। नगर में बहुत से उद्यान और कमलों से भरे हुवे तालाब थे। नगर के ठीक बीच में देवी महालक्ष्मी का विशाल मन्दिर था। वहां रात-दिन देवी महालक्ष्मी की पूजा होती थी।

राजा अग्रसेन ने साढ़े सतरह यज्ञ कर के मधुसूदन को संतुष्ट किया। अठारहवें यज्ञ के बीच में एक बार घोड़े का मांस अकस्मात् इस प्रकार बोल उठा—"हे राजन्! मांस तथा मद्य के द्वारा वैकुण्ठ की जय करने का प्रयत्न मत करो। हे दयानिधि, इस मद्य मांस से रहित जीव कभी पाप से लिप्त नहीं होता।" यह सुनकर राजा अग्रसेन को मद्य मांस से घृणा हो

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गई। उसने यज्ञ को बीच में ही बन्द कर दिया और यह अठाहरवां यज्ञ अपूर्ण ही रह गया। इसीलिये राजा अग्रसेन के साढ़े सतरह यज्ञों का उल्लेख किया गया है।

अग्रसेन के यज्ञों का विस्तृत वर्णन हमारे दूसरे हस्तलिखित संस्कृत ग्रन्थ 'उरु-चरितम्' में बहुत अधिक विस्तार के साथ किया गया है। क्योंकि राजा अग्रसेन के इतिहास में इन यज्ञों का बहुत महत्व है, अतः हम इस वर्णन को भी यहां उद्धृत करते हैं—

राजा अग्रसेन का भाई शूरसेन था। जब ये दोनों भाई अपना राज्य स्थापित कर चुके और राजधानी भी बन गई, तब गर्ग मुनि के आदेश से उन्होंने यज्ञ करने का संकल्प किया। सब देशों में यज्ञ के निमन्त्रण भेजे गए। यज्ञ का वृतान्त सुन कर सब मुनि, देवता, विद्वान और ऋषि अपनी अपनी सवारी पर चढ़ कर यज्ञ में सम्मिलित होने के लिये आए। सब के ठहरने का प्रबन्ध शूरसेन ने बड़े आदर सत्कार के साथ किया। यज्ञ के अधिष्ठाता राजा अग्रसेन बने। ब्रह्मा का पद मुनि गर्ग ने ग्रहण किया। सतरह यज्ञ निर्विघ्न पूर्ण हो गए। जब महर्षि लोग अठारहवां यज्ञ करा रहे थे, तब राजा अग्रसेन के हृदय में हिंसा से अकस्मात् घृणा हो गई, उसने अपने मन में सोचा 'जिस हिंसा से नीच लोग नरक को प्राप्त करते हैं, मैं उसी में प्रवृत्त हो रहा हूँ। वैश्यों का परम धर्म तो पशु-पालन तथा उनकी सब प्रकार से रक्षा करना है, यज्ञ में पशु-वध होता है, अतः मैंने बड़ा पाप कर्म किया है।' यह विचार निरन्तर उसके हृदय में प्रबल होता गया। उस दिन का कार्य तो अग्रसेन ने जैसे तैसे करके समाप्त कर दिया। रात भर वह अपने

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शयनागार में इसी प्रश्न पर विचार करता रहा। सुबह वह समय पर यज्ञ में शामिल नहीं हुवा। याज्ञिक लोग प्रतीक्षा कर रहे थे। आपस में पूछते थे, 'आज क्या बात हो गई जो राजा नहीं पधारे, एक पहर इसी प्रतीक्षा में बीत गया, आखिर पण्डितों ने शूरसेन को राजा को बुलाने के लिये भेजा। शूरसेन ने देखा कि उसका भाई बहुत दुखी है। उसने हाथ जोड़ कर अग्रसेन से कहा, 'क्या कारण है, जो इस असमय में आप इतने दुखी हैं। आपकी इस उदासीनता का क्या हेतु है?' इस पर अग्रसेन ने उत्तर दिया, 'वैश्यों का कर्तव्य तो पशु-रक्षा और पशु-पालन है। हिंसा करना बड़ा भारी पाप है, और वैश्यों के लिये इसका निषेध किया गया है। मैंने बड़ी गलती की, जो यज्ञ में पशु हिंसा की। न जाने इसका क्या फल मुझे भगवान देगा। न जाने मुझे कितने जन्म-जन्मान्तर नरक में बसना पड़ेगा। इस हिंसामय यज्ञ को बन्द करो। इसी में हमारा श्रेय है।' यह सुन कर शूरसेन ने उत्तर दिया— 'हे दुखियों पर दयालु, मेरे वचन को सुनो, अब केवल एक यज्ञ शेष बचा है। उसे पूर्ण कर लेना ही अच्छा है। फिर यज्ञ नहीं करना, यही मेरी भी सम्मति है। यज्ञ का समय टल रहा है। इसलिये शीघ्र ही वहां जाना चाहिये।'

इस पर अग्रसेन ने कहा 'तुम समझदार होकर भी ऐसी बात मुझे क्यों कहते हो। मनुष्य को जहां तक भी हो, पापकर्म से बचना चाहिये। जितना भी वह पाप से बचेगा उतना ही उसका कल्याण होगा। पशुहिंसा बड़ा पाप है। तुम्हें भी उसे रोक देना चाहिये। मेरी बात

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मानकर तुम्हें भी यह प्रतिज्ञा करनी चाहिये कि हमारे वंश में कोई आदमी हिंसा न करे।'

अग्रसेन की इस धर्मानुकूल संमति को सुनकर शूरसेन के हृदय में भी हिंसा के प्रति घृणा पैदा हो गई। वे दोनों भाई राजमहल से निकल कर यज्ञभूमि में आए। वहां ऋषि मुनि तथा दर्शकों की बहुत बड़ी भीड़ इकट्ठी थी। अग्रसेन के आते ही सारा मंडप जयध्वनि से गूंज उठा। सब लोगों ने हर्ष प्रकट किया। पण्डितों के आदेश से राजा अग्रसेन सिंहासन पर बैठ गया। अग्रसेन ने आदेश दिया कि उसके सब पुत्र तथा कन्यायें यज्ञ मंडप में उपस्थित हों। सब के उपस्थित होने पर राजा ने संबोधन करके इस प्रकार कहा 'यज्ञ में पशुहिंसा से मेरे हृदय में घृणा उत्पन्न हो गई है। अब मैं पशुहिंसा को उचित नहीं समझता। अतः अपने सब भाइयों, पुत्रों, कन्याओं और कुटुम्बियों को यही उपदेश करता हूँ, कि कोई हिंसा न करें।" यह यज्ञ अधूरा ही रह गया।

उरुचरितम् के इस विवरण से राजा अग्रसेन के यज्ञों का विस्तार से वर्णन मिलता है। भाटों के गीतों में भी अग्रसेन के नागकन्या के साथ स्वयंवर, इन्द्र के साथ संघर्ष तथा अठारह यज्ञों का हाल बहुत कुछ इसी ढंग से कहा जाता है। राजा अग्रसेन के जीवन की ये मुख्य घटनायें हैं, और इनसे उनके चरित्र के संबन्ध में महत्वपूर्ण प्रकाश पड़ता है। यज्ञों में हिंसा से अकस्मात् घृणा उत्पन्न होने से उनके जीवन में एक भारी परिवर्तन आ गया। ऐसे परिवर्तन के उदाहरण इतिहास में और भी मिलते हैं। मौर्यवंशी प्रसिद्ध सम्राट राजा अशोक

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

के जीवन में भी इसी तरह आकस्मिक परिवर्तन आया था। बौद्ध धर्म के इतिहास पर उसका बड़ा भारी प्रभाव हुवा। राजा अग्रसेन के इस विचार-परिवर्तन से भी वैश्य-जाति के भविष्य पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ा। अग्रवाल लोग आज तक अहिंसा-व्रत का पालन करते हैं, मांस नहीं खाते; दया-धर्म को मानते हैं, यह सब राजा अग्रसेन के विचार-परिवर्तन का ही परिणाम है।

अठारह या साढ़े सत्तरह यज्ञों को पूर्ण कर राजा अग्रसेन कुछ समय तक और राज्य करते रहे। आगे "अग्रवैश्य वंशानुकीर्तनम्" में लिखा है—

एक दिन जब राजा अग्रसेन पूजा-पाठ में लगे थे, देवी महालक्ष्मी प्रकट हुई। उसने उन्हें संबोधन करके कहा, 'अब तुम बूढ़े हो गए हो। धर्म का अनुसरण कर अब तुम्हें अपना राज्य अपने पुत्र को सुपुर्द करना चाहिए।' अग्रसेन ने यही किया। अपने बड़े लड़के विभु को राजगद्दी पर बिठाकर वह स्वयं अपनी पत्नी के साथ वन को चले गये। दक्षिण में गोदावरी नदी के तट पर जहां ब्रह्मसर है, वहां जाकर उसने घोर तप किया और अन्त में लक्ष्मी के आदेश से अपनी स्त्री के साथ स्वर्गलोक गया।

राजा अग्रसेन के सम्बन्ध में जो विविध किम्वदन्तियां या कथाएं प्रचलित हैं, उनका यही सार है। हमारे संस्कृत ग्रन्थ 'उरुचरितम्' में इन्द्र और अग्रसेन के पारस्परिक संघर्ष का वर्णन नहीं किया गया। इसके विपरीत 'अग्रवैश्य वंशानुकीर्तनम्' में अष्टादश यज्ञों का वर्णन बहुत संक्षेप से दिया गया है। 'उरुचरितम्' में अग्रसेन के भाई शूरसेन

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

का जो उल्लेख है, वह अन्यत्र कहीं नहीं मिलता। इन भेदों के होते हुवे भी अग्रसेन की कथा सर्वत्र एक सी पाई जाती है और ऊपर जो कथा हमने दी है, उसे पर्याप्त अंश तक प्रामाणिक समझा जा सकता है।

अग्रवाल जाति में अग्रसेन का स्थान बहुत महत्व का है। अनेक घरों में उनकी प्रतिमा व चित्र की पूजा की जाती है। अग्रसेन की स्थिति एक देवता से कम नहीं समझी जाती। इस दैवी रूप ने राजा अग्रसेन की वास्तविक ऐतिहासिक स्थिति पर एक प्रकार का पर्दा सा डाल दिया है। राजा अग्रसेन एक 'पृथक् वंशकर्त्ता' थे। उनसे एक नये वंश का, एक नये राज्य का प्रारम्भ हुवा था। प्राचीन भारत में बहुत से प्रतापी व महत्वाकांक्षी राजकुमार अपना अलग राज्य बनाकर नये वंश की स्थापना करते थे। महाभारत में ऐसे व्यक्तियों को 'पृथक वंशकर्तारः[1]' कहा गया है। निःसंदेह राजा अग्रसेन इसी प्रकार के व्यक्ति थे। अगले अध्याय में हम उनके वंश का वर्णन करेंगे। उसमें हम दिखायेंगे, कि वे प्राचीन भारत के प्रसिद्ध राजवंश वैशालक वंश की एक छोटी राज-शाखा में उत्पन्न हुवे थे। पर उन्होंने अपने प्रताप से एक नया राज्य कायम किया। अपने नाम से एक नये नगर की स्थापना की और एक नये राजवंश का प्रारम्भ किया। उनके राज्य का नाम उन्हीं के नाम पर पड़ा और आग्रेय कहाया। अब तक भी इस राज्य के प्रतिनिधि उनके नाम से अग्रवाल कहाते हैं।

---

1. महाभारत, आदि पर्व ६७—२७५८

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अग्रसेन की जो कथा हमने ऊपर दी है, उसके कुछ भाग ऐतिहासिक नहीं कहे जा सकते। इन्द्र के साथ युद्ध, महालक्ष्मी का प्रकट होना आदि बातें शायद आलंकारिक व कल्पनात्मक हैं। भारत की अन्य प्राचीन ऐतिहासिक अनुश्रुति के समान राजा अग्रसेन की कथा भी पौराणिक शैली में लिखी गई है। यदि पुराणों की शैली को दृष्टि में रक्खा जाय, तो 'अग्रवैश्य वंशानुकीर्तनम्' व 'उरुचरितम्' की कथा में कोई भी बात असाधारण व अद्भुत प्रतीत न होगी। इस कथा में से ऐतिहासिक सच्चाई को पृथक् कर लेना कोई भी कठिन बात नहीं है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

छटा अध्याय

राजा अग्रसेन का वंश

हमारे संस्कृत ग्रन्थ 'उरुचरितम्' और 'अग्रवैश्य वंशानुकीर्तनम्' में केवल राजा अग्रसेन की कथा ही नहीं दी गई, अपितु उनके पूर्वजों तथा वंश का भी वर्णन दिया है। यह वर्णन बहुत उपयोगी है। क्रुक महोदय ने अग्रसेन सम्बन्धी कथाओं का जो संग्रह किया है, उसके अनुसार उनका सब से पहला पूर्वज धनपाल था, जो प्रतापनगर का राजा था। पर 'उरुचरितम्' में धनपाल के पूर्वजों का भी वर्णन मिलता है। इस महत्वपूर्ण पुस्तक में धनपाल का सम्बन्ध पुराणों के प्रसिद्ध वैशालक वंश के साथ जोड़ा गया है। वैशालक वंश का प्रादुर्भाव मनु के अन्यतम पुत्र नेदिष्ट या नाभा-नेदिष्ट की सन्तति से हुआ था।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मनु के आठ पुत्र और एक कन्या थी। प्राचीन भारतीय अनुश्रुति के प्रायः सभी राजवंशों का प्रादुर्भाव मनु की इस सन्तति से माना गया है। मनु के लड़कों में चार मुख्य हैं। बड़ा लड़का इक्ष्वाकु अयोध्या में राज्य करता था। उसके दो पुत्र थे, विकुक्षि-शशाद और नेमि। पहले पुत्र से अयोध्या के प्रसिद्ध ऐक्ष्वाकव वंश का विकास हुवा। इसी को सूर्यवंश भी कहते हैं। दूसरे पुत्र नेमि से विदेह वंश चला। मनु के एक पुत्र शर्याति ने आनर्त में अपना राज्य कायम किया। तीसरे लड़के नाभाग से रथीतर वंश शुरू हुवा।[1] चौथे लड़के नेदिष्ट या नाभानेदिष्ट से उस प्रसिद्ध वंश का प्रारम्भ हुवा, जिसकी राजधानी वैशाली थी। वैशाली पर शासन करने के कारण ही ऐतिहासिक लोग इस वंश को वैशालक-वंश कहते हैं। अनेक पुराणों में इसका उल्लेख किया गया है। 'उरुचरितम्' ने धनपाल का सम्बन्ध इसी वैशालक वंश की एक छोटी राजशाखा के साथ जोड़ा है। हम इस पर विस्तार से प्रकाश डालेंगे।

पुराणों में वैशालक वंश की मुख्य शाखा का वर्णन इस प्रकार किया गया है। नाभानेदिष्ट[2] के, जिसे विविध पुराणों में नेदिष्ट[3], अरिष्ट[4], धृष्ट[5] या दिष्ट[6] भी लिखा गया है, लड़के का नाम नाभाग था। मार्कण्डेय

1. Pargiter, Ancient Indian Historical Tradition, pp. 84-85
2. तथा p. 96
3. उरुचरितम्,श्लोक ११
4. वायुपुराण ८६ । ३-२२
5. मार्कण्डेय पुराण १११ । ४
6. तथा ११३ । २

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पुराण के अनुसार नाभाग ने एक वैश्य कुमारी के साथ विवाह कर लिया। इसी कारण वह स्वयं भी वैश्य हो गया। उसका लड़का भनन्दन या भलन्दन हुवा। वह एक शक्तिशाली राजा था। मार्कण्डेय पुराण में लिखा है कि 'उसका चक्र सम्पूर्ण पृथिवी पर अप्रतिहत होकर चलता था और उसका मन कभी अनीति की ओर नहीं जाता था।[1]' उसका लड़का वात्सप्रिय था। वात्सप्रिय के बाद क्रमशः प्रांशु, प्रजाति और खनित्र हुवे। खनित्र के वंशजों का वृतान्त यहां लिखने की आवश्यकता नहीं। यही प्रसिद्ध वैशालक वंश है, जिसका वर्णन सात पुराणों में मिलता है। पुराणों के अतिरिक्त रामायण और महाभारत में भी इसका उल्लेख है।

पर 'उरुचरितम्' ने नाभानेदिष्ट, भलन्दन और वात्सप्रिय के वंशजों की एक अन्य शाखा का भी वर्णन किया है, और धनपाल तथा राजा अग्रसेन को इन वंशजों में सम्मिलित किया है। इससे पूर्व कि हम 'उरुचरितम्' के विवरण पर ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करें, यह उचित होगा कि उसे हम यहां संक्षेप से उल्लिखित कर दें—

संसार में सब से पहले ब्रह्मा उत्पन्न हुवे। उनका लड़का विवस्वान् था। उसके बाद मनु हुवा। सब वर्णों और आश्रमों का संस्थापक मनु ही था, मनु के एक पुत्र और एक कन्या थी। पुत्र का नाम नेदिष्ट और कन्या का नाम इला था। क्षात्रवंशों का प्रादुर्भाव इला द्वारा हुवा। नेदिष्ट के पुत्र का नाम अनुभाग था। उसका पुत्र भलन्दन हुवा। भलन्दन की

1. मार्कण्डेय पुराण १.१.६।५

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्त्री मरुद्वती थी। उनसे वत्सप्रिय उत्पन्न हुवा। वत्सप्रिय का लड़का मांकील था। यह बड़ा विद्वान् और मन्त्रद्रष्टा प्रसिद्ध हुवा। इसी मांकील के वंश में धनपाल उत्पन्न हुवा, जो बड़ा तेजस्वी और प्रतापी था। उसका चरित्र बड़ा ऊँचा था और ब्राह्मणों ने उसे स्वयं राज्य में प्रतिष्ठापित किया था। उसका राज्य प्रतापनगर में था। उसके आठ पुत्र हुवे, जिनके नाम निम्नलिखित हैं—शिव, नल, नन्द, अनल, कुमुद, कुन्द, वल्लभ और शेखर। उत्कृष्ट ज्ञान के कारण इनमें नल संयासी हो गया। उसने अपनी इच्छा से हिमालय पर्वत में जाकर तपस्या प्रारम्भ की। बाकी सातों पुत्र सातों द्वीपों के स्वामी बने। इन में से शिव जम्बु-द्वीप का राजा था। शिव के चार लड़के थे। बड़े लड़के का नाम आनंद था, वह राजा बना और बाकी तीनों योगी हो गये। आनन्द का पुत्र अय हुवा। अय का पुत्र विश्य था, विश्य के समय में वैश्य कुल की बड़ी उन्नति हुई। विश्य के वंश में सुदर्शन पैदा हुवा। उसकी दो रानियां थीं, सेवती और नलिनी। सेवती से धुरन्धर पैदा हुवा। धुरन्धर का लड़का नन्दिवर्धन था। नन्दिवर्धन से अशोक और फिर समाधि पैदा हुवा। समाधि बड़ा प्रतापी राजा था। संसार भर में उसकी कीर्ति प्रसिद्ध थी। उसके बाद वंश में क्षीणता आने लगी। आपस के द्वेष के कारण लोग राज्य को छोड़कर बाहर जाने लगे और पृथिवी के भिन्न-भिन्न भागों में बसने लगे। समाधि के वंशजों में आगे चलकर मोहनदास बहुत प्रसिद्ध हुवा। उसका पड़पोता नेमिनाथ था, उसने नयपाल (नैपाल ?) बसाया। नेमि का लड़का वृन्द हुवा। वृन्द का लड़का गुर्जर था। उसके वंश में आगे चल कर हरि उत्पन्न हुवा, जिसके

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सौ पुत्र थे। सब से बड़े पुत्र का नाम रङ्ग था। हरि शरीर में बहुत निर्बल था, इसलिये अपने बड़े लड़के रङ्ग को राज्य देकर वह स्वयं हिमालय में तपस्या करने चला गया। बाकी निन्यानवें लड़के इससे बहुत नाराज हुए, उन्होंने प्रजा को सताना शुरू किया। राज्य से शान्ति नष्ट हो गई। यज्ञ आदि रुक गये और जनता में असन्तोष फैल गया। आखिर लोग मुनि याज्ञवल्क्य के पास गये और उनसे सारा वृत्तान्त कहा। मुनि याज्ञवल्क्य राजा रङ्ग की राजसभा में आये और राजा के निन्यानवें भाइयों को शाप देकर शूद्र बना दिया। रङ्ग का लड़का विशोक था, उसके बाद मधु हुवा, मधु के बाद महीधर हुवा। महीधर के सात लड़के थे। सब से बड़े का नाम वल्लभ था। वल्लभ के दो पुत्र हुए, अग्रसेन और शूरसेन। अग्रसेन ने गौड़देश में अपना पृथक् राज्य स्थापित किया।

यह लिखने की आवश्यकता नहीं कि 'उरु चरितम्' का यह वर्णन क्रुक द्वारा दिये गये वृत्तान्त से बहुत कुछ मिलता जुलता है। यह निर्देश हम पहले ही कर चुके हैं कि क्रुक के वर्णन का मुख्य आधार भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र कृत 'अग्रवालों की उत्पत्ति' ग्रन्थ है। भारतेन्दु जी ने यह पुस्तिका 'महालक्ष्मी व्रत कथा' या 'अग्रवैश्यवंशानुकीर्तनम्' के आधार पर लिखी थी। इस संस्कृत ग्रन्थ का पूर्वार्ध हमें नहीं मिल सका। पर क्रुक और भारतेन्दु जी के वर्णन से तुलना करके हम सुगमता से समझ सकते हैं, कि अग्रसेन के वंश व पूर्वजों के सम्बन्ध में हमारे दोनों संस्कृत ग्रन्थों—उरुचरितम् और अग्रवैश्यवंशानुकीर्तनम् में विशेष भेद नहीं है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अब हम 'उरु चरितम्' के वर्णन की विवेचना प्रारम्भ करते हैं। ब्रह्मा, विवस्वान्, मनु, नेदिष्ट और नाभाग ये नाम प्राचीन पौराणिक अनुश्रुति के अनुकूल हैं। अनुभाग, नाभाग का ही रूपान्तर है। अनुभाग या नाभाग के बाद भलन्दन और वत्सप्रिय (वात्सप्रि) के नाम भी पौराणिक वृतान्त के अनुकूल ही हैं। पर वत्सप्रिय के बाद 'उरु चरितम्' में मांकील का नाम आता है। पौराणिक वंशावली में मांकील का नाम नहीं दिया गया। यह मांकील व सांकील प्राचीन वैदिक व संस्कृत साहित्य का बड़ा प्रसिद्ध व्यक्ति है। पुराणों में ही अन्यत्र उसका नाम भलन्दन और वात्सप्रिय के साथ एक ऋषि व मन्त्रकृत् के रूप में आया है। ब्रह्माण्ड[1] और मत्स्य[2] पुराणों में लिखा है, "भलन्दन, वत्स और सांकील ये तीन वैश्यों के प्रवर और मन्त्रकृत् समझने चाहिये।"

पुराणों ने वंशावली से मांकील का नाम सर्वथा छोड़ दिया है, पर 'उरु चरितम्' ने उसे ठीक स्थान पर रक्खा है। सम्भवतः मांकील से एक नई शाखा का प्रारम्भ हुवा, जो मुख्य वैशालक शाखा से भिन्न थी। वात्सप्रिय के बाद मुख्य शाखा प्रांशु और उसके वंशजों की है, जिसका वर्णन मार्कण्डेय आदि पुराणों में मिलता है। पर सम्भवतः इसी वंश की एक अन्य भी शाखा थी, जिसमें वात्सप्रिय के बाद मांकील

---

1. भलन्दनश्च वत्सश्च सांकीलश्चैव ते त्रयः।
   एते मन्त्रकृतश्चैव वैश्यानां प्रवराः स्मृताः॥
   (ब्रह्माण्ड पुराण २।३२।१२१-२)

2. मत्स्य पुराण १४५।११६-७

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और फिर धनपाल हुवा। इस शाखा का वर्णन 'उरु चरितम्' ने किया है। इस शाखा की ऐतिहासिक सत्ता से इन्कार नहीं किया जा सकता, क्योंकि मांकील एक इतिहास-प्रसिद्ध मनुष्य हुवा है।

पर यह भी सम्भव है, कि धनपाल वाली शाखा मांकील से पृथक् न होकर बाद में पृथक् हुई हो। 'वर्ण-विवेक-चन्द्रिका' के अनुसार प्रांशु (भलन्दन का वंशज) के छः पुत्र थे—मोद, प्रमोद, बाल, मोदन, प्रमोदन और शंखकर्ण। प्रमोदन के कोई सन्तान नहीं थी, अतः उसने शिव को प्रसन्न करने के लिये घोर तपश्चर्या की। महादेव उसकी भक्ति से प्रसन्न हुए और उसे यज्ञ करने का आदेश दिया। इस यज्ञ के अग्निकुण्ड से तीन पुत्र उत्पन्न हुए, जिनकी सन्तति अग्रवाल, खत्री और रोनियार कहाई।[1] इस कथन में कहां तक सचाई है, यह कहना बहुत कठिन है। विशेषतः अग्रवाल, खत्री और रोनियार जाति का एक ही वंश से होना कुछ संगत नहीं प्रतीत होता। पर यदि इसमें सचाई का कुछ भी अंश है, तो यह स्पष्ट है कि अग्रसेन और धनपाल का वंश वात्सप्रि के बाद मुख्य वैशालक वंश से पृथक् न होकर बाद में—प्रांशु और प्रमोदन के पीछे पृथक् हुवा। यह आश्चर्य की बात है कि 'वर्ण विवेक चन्द्रिका' ने अग्रवालों के अतिरिक्त दो अन्य व्यापारिक जातियों का सम्बन्ध पुराणों के वैशालक वंश के साथ जोड़ा है।

1. अग्निकुण्डात् समुद्भूताः त्रयः पुत्राः सुधार्मिकाः।
अग्रवालेति खत्री च रौनियारेति संज्ञकाः॥
(जाति भास्कर पृष्ठ २६९-७०)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पुराणों में बहुत सी वंशावलियां दी गई हैं। पर उनमें केवल वैशालक-वंश ही ऐसा है, जिसके कुछ राजा निश्चित रूप से वैश्य लिखे गये हैं। यह बात बड़े महत्व की है, कि अग्रसेन का वंश इसी वंशावली की एक शाखा है। उसका प्रादुर्भाव वैश्यों के प्रवर भलन्दन, वात्सप्रि और मांकील से हुआ है। मार्कण्डेय में कथा दी गई है, कि वैश्य कुमारी से विवाह करने के कारण नाभाग स्वयं वैश्य हो गया। उसका लड़का भनन्दन (भलन्दन) भी वैश्य था, पर वह आगे चल कर क्षत्रिय हो गया। वह क्षत्रिय किस प्रकार बना और वस्तुतः वह वैश्य न होकर क्षत्रिय ही था, इसकी व्याख्या बड़े विस्तार से मार्कण्डेय ने की है। हमारी सम्मति में इस सब व्याख्या की कोई आवश्यकता न थी। सम्भवतः मार्कण्डेय पुराण के लेखक को यह समझ न आता था कि वैश्य भनन्दन इतना शक्तिशाली राजा कैसे हो सकता है! मार्कण्डेय पुराण की इस व्याख्या के बावजूद भी अन्य अनेक पुराण भनन्दन को वैश्य ही लिखते हैं, और उसकी संतति आज भी वैश्य ही कहाती है।

धनपाल के वंशजों में अन्य राजाओं के सम्बन्ध में कोई बात निश्चित रूप से नहीं कही जा सकती। यद्यपि हमारे दोनों संस्कृत ग्रन्थ इनका वर्णन एक सा ही करते हैं, तथापि यह वंशावली पौराणिक साहित्य में अन्यत्र कहीं नहीं मिलती। रामायण, महाभारत आदि अन्य ऐतिहासिक ग्रन्थों में भी इसका कहीं पता नहीं चलता। संभवतः, पौराणिक साहित्य के संकलनकर्ता एक ऐसे वंश का वर्णन करना अपनी प्रतिष्ठा से नीचे की बात समझते थे, जो न ब्राह्मण ऋषियों का हो, और न क्षत्रिय राजाओं का हो। पौराणिक साहित्य में प्राचीन भारत के वार्ताशस्त्रोपजीवि गणों का

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कहीं उल्लेख नहीं। न ही गुप्त, वर्धन, नाग आदि (जिन्हें बौद्ध ग्रन्थ मंजुश्री मूलकल्प ने वैश्य लिखा है और जिनका वंश वृत्त भी उनमें दिया गया है) वैश्य वंश्यों का वर्णन है । वैशालक वंश का भी केवल निर्देश किया गया है। निःसन्देह, मार्कण्डेय पुराण में इस वंश का बहुत विस्तार से वर्णन है, पर यह वर्णन शुरू करने से पूर्व पुराण-लेखक ने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है, कि इस वंश के लोग वैश्य न होकर क्षत्रिय थे, केवल अगस्त्य के शाप से ही ये वैश्य हो गये थे।[1]

'उरु चरितम्' के अनुसार धनपाल के आठ लड़कों का विवाह राजा विशाल की आठ कन्याओं के साथ हुवा था । इन कन्याओं के नाम निम्नलिखित हैं—पद्मावती, मालती, कान्ति, शुभ्रा, भव्यका, रजा और सुन्दरी। इन राजकुमारियों का अग्रवाल लोगों की दन्त-कथाओं में बड़ा महत्व है। ये अग्रवालों की आठ मातृकाएँ मानी जाती हैं। जिस राजा विशाल की ये कन्यायें थीं, वह स्पष्ट ही वैशालक वंश का प्रसिद्ध राजा विशाल था। भागवत पुराण में विशाल को वंशकृत् कहा गया है, और यह भी लिखा है, कि वैशाली नगरी का निर्माण उसी ने किया था ।[2] निःसन्देह यह बड़ा शक्तिशाली राजा था । धनपाल उसका समकालीन था और उसके साथ विवाह-सम्बन्ध से संबद्ध था।

वैशालक वंश का वर्णन करते हुवे भागवत में एक राजा धनद का जिक्र आता है।[3] वह तृणबिन्दु की कन्या इडविडा का लड़का था।

1. मार्कण्डेय पुराण अध्याय ११४-११५

2. विशालो वंशकृत् राजा वैशालीं निर्ममे पुरीम्।
भागवत पुराण IX. 2. 33

3. तथा IX. 2. 32

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तृणबिन्दु के तीन पुत्र भी थे। उनमें सबसे बड़े का नाम विशाल था।[1] इस प्रकार भागवत के अनुसार धनद और विशाल समकालीन थे। सम्भवतः भागवत का धनद और उरुचरितम् तथा अन्य अग्रवाल किंवदन्तियों का धनपाल एक ही व्यक्ति है। मैं जानता हूं, कि भागवत के इस धनद का अर्थ कुबेर किया जाता है। अन्य पुराणों में कुबेर को इलविला का पुत्र भी लिखा गया है। पर यह बात ध्यान में रखनी चाहिए, कि कुबेर धन का देवता है। जिस प्रकार महालक्ष्मी धन की देवी है, वैसे ही कुबेर धन का मुख्य देवता है। सन् १८८९ में अगरोहा की जो खुदाई हुई थी, उसमें जो मूर्त्ति सब से महत्त्व की प्राप्त हुई थी, वह कुबेर की थी। इससे सूचित होता है कि अगरोहा के निवासी महालक्ष्मी के समान कुबेर के भी उपासक थे। इस दशा में यदि धनपाल धनद और कुबेर एक ही हों, तो कोई आश्चर्य नहीं।

उरुचरितम् में जो यह लिखा गया है, कि धनपाल के वंशज नेमिनाथ ने नयपाल या नैपाल बसाया, वह शायद ठीक नहीं है। अन्य पुराणों के अनुसार नैपाल इक्ष्वाकु के पुत्र निमि ने बसाया था।[2] उरुचरितम् को नाम साम्य के कारण यह भ्रम हुवा प्रतीत होता है।

---

1. भागवत पुराण IX, 2, 33
2. Pargiter-Ancient Indian Historical Tradition. p. 95

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सातवां अध्याय

राजा अग्रसेन का काल

अग्रवाल जाति के इतिहास में सब से जटिल समस्या राजा अग्रसेन के काल के सम्बन्ध में है। भारतीय तिथिक्रम में राजा अग्रसेन का क्या स्थान है, यह निश्चित करना बहुत कठिन है। उसका कोई शिलालेख व सिक्का अब तक उपलब्ध नहीं हुवा। न ही किसी अन्य राजा के शिलालेख आदि में उसका कहीं उल्लेख है। इस दशा में उसके काल का निश्चय केवल अनुश्रुति के आधार पर ही किया जा सकता है।

भाटों के अनुसार अग्रसेन का काल त्रेता के पहले भाग में है। भाट लोग इस सम्बन्ध में इतने निश्चय पूर्वक कहते हैं, कि वे अग्रवाल जाति की उत्पत्ति की ठीक तिथि तक बताते हैं। वे यह प्रसिद्ध दोहा सुनाते हैं-

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बदि मंगसिर शनि पञ्चमी त्रेता पहले चर्ण।
अग्रवाल उत्पन्न भए, सुनि भाखे शिवकर्ण॥

इस दोहे में भाट शिवकर्ण अनुश्रुति के अनुसार यह बताता है, कि त्रेता युग के पहले चरण में मार्गशीर्ष मास के कृष्ण पक्ष में पंचमी तिथि को शनिवार के दिन अग्रवालों की उत्पत्ति हुई। शिवकर्ण भाट की यह उक्ति व अनुश्रुति कहां तक सच है, इसकी समीक्षा करना बहुत कठिन है।

पर सौभाग्य से, तिथिक्रम सम्बन्धी समस्या का निर्णय करने के लिये हमारे पास और भी साधन हैं। अग्रवैश्यवंशानुकीर्तनम् के अनुसार राजा अग्रसेन ने कलियुग संवत् के १०८ वें वर्ष तक राज्य किया।[1] जब अग्रसेन ने राज्य त्याग किया, तब कलियुग को बीते १०८ वर्ष बीत चुके थे। एक अन्य स्थान पर इसी ग्रन्थ में लिखा है, कि राजा अग्रसेन ने अपने लड़के विभु को वैशाख मास की पूर्णिमा के दिन राजगद्दी पर अभिषिक्त किया।[2] इस प्रकार यह स्पष्ट है, कि अग्रवाल इतिहास के मुख्य आधार इस संस्कृत ग्रन्थ के अनुसार राजा अग्रसेन ने कलियुग संवत् १०८ में वैशाख मास की पूर्णिमा के दिन अपने लड़के को राजगद्दी पर बिठाकर स्वयं राज्य कार्य से विश्राम पाया। एक अन्य स्थान पर इसी ग्रन्थ में लिखा है, कि जब अग्रसेन राजगद्दी पर बैठा, तो द्वापर युग समाप्त हो चुका था,

1. तैरसार्धं स भुजे राज्यं कलौ चाष्टाधिकं शतम्।

श्लोक १४८

2. वैशाखे पूर्णमास्यां वै विभुं राज्येऽभिषिच्य च।

श्लोक १५३

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और कलि का प्रारम्भ हो चुका था।" इस तरह स्पष्ट है, कि महाभारत युद्ध की समाप्ति के बाद लगभग राजा जनमेजय के समय में राजा अग्रसेन गद्दी पर बैठे थे। अग्रवैश्यवंशानुकीर्तनम् के अनुसार राजा अग्रसेन को परीक्षित व जनमेजय का समकालीन समझना चाहिए।

एक और ढंग से हम तिथिक्रम की समस्या पर विचार करते हैं। हम ऊपर लिख चुके हैं कि अग्रसेन का पूर्वज धनपाल वैशालक वंश के राजा विशाल का समकालीन था। विशाल की आठ कन्याओं का विवाह धनपाल के आठ पुत्रों के साथ हुवा था। पुराणों में प्राप्त विविध वंशावलियों में जो समसामयिकता (Synchrouism) पार्जिटर ने स्थापित की है, उसके अनुसार विशाल के समकालीन राजा कल्माषपाद (अयोध्या का राजा) और धर्मकेतु (काशी का राजा) थे। पुराणों की वंशावलियों में (पार्जिटर के अनुसार) विशाल का नम्बर समय की दृष्टि से ५४ वां है।[2] अतः भारतीय तिथिक्रम में धनपाल का लगभग यही स्थान होना चाहिए। धनपाल के बाद अग्रसेन का नाम २१ राजाओं के बाद आता है। यदि पुराणों की अन्य वंशावलियों के राजाओं से, जिनका समय हमें ज्ञात है, अग्रसेन की समसामयिकता स्थापित करके देखा जाय, तो त्रेता युग के प्रारम्भ में उसका काल हो सकना सम्भव ही नहीं है। वह द्वापर के समाप्त होने के बाद ही आवेगा। पौराणिक चतुर्युगी अग्र-

1. द्वापरस्यान्त कालेषु कलावादिगते सति।

श्लोक १२१.

2. Pargiter Ancient Indian Historical Tradition
pp. 146-147

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सेन का समय त्रेता युग के पहले चरण में हो ही कैसे सकता है ? सम्भवतः, भाट शिवकर्ण ने पुरानी अनुश्रुति में 'कलि' को बदल कर भूल से त्रेता कर दिया होगा।

इस सम्बन्ध में यह भी ध्यान देने योग्य है, कि राजा अग्रसेन सम्बन्धी किंवदन्तियों व कथाओं में नागों का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। राजा अग्रसेन का विवाह नाग कुमारी के साथ हुवा था। भारतीय इतिहास में महाभारत के बाद का काल ऐसा है, जब नाग लोगों ने बहुत बड़ी संख्या में भारत पर आक्रमण किया था। राजा जनमेजय ने नागों को परास्त करने के लिये बड़ा भारी प्रयत्न किया था। नाग यद्यपि भारत के मध्यदेश को नहीं विजय कर सके थे, तथापि दक्षिण तथा पश्चिम में उनकी अनेक बस्तियां बस गई थीं। यदि राजा अग्रसेन के समय को कलियुग के प्रारम्भ होने के बाद में राजा जनमेजय के काल के लगभग माना जाय, तो नाग लोगों के साथ अग्रसेन के सम्बन्ध की बात भी बहुत कुछ समझ में आजाती है। नागों के सम्बन्ध में हम अधिक विस्तार से अगले एक अध्याय में विचार करेंगे।

जो बातें हमने लिखी हैं, उनसे भारतीय इतिहास में राजा अग्रसेन के काल के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण सूचनायें मिलती हैं। उनका काल जनमेजय के काल के लगभग है, और अग्रवैश्यवंशानुकीर्तनम् के अनुसार वैशाख पूर्णिमा कलि संवत् १०८ में उन्होंने राज्य त्याग किया था। अगरोहा की प्राचीनता को दृष्टि में रखते हुवे यह तिथि असम्भव कोटि में नहीं कही जा सकती।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कलियुग का प्रारम्भ कब हुवा, इस सम्बन्ध में ऐतिहासिकों में मतभेद है। प्राचीन परम्परा के अनुसार कलियुग का प्रारम्भ अब से लगभग पांच हजार वर्ष पूर्व हुवा था। पर आज कल के बहुत से विद्वान इसमें सन्देह करते हैं। उनकी सम्मति में ईस्वी सन के प्रारम्भ होने से १४०० व १२०० वर्ष पूर्व महाभारत युद्ध हुवा था, और उसी समय कलियुग का भी प्रारम्भ हुवा। इस मत के अनुसार कलियुग को शुरू हुवे ३२०० वर्ष के लगभग होते हैं। कुछ अन्य ऐतिहासिक कलियुग का समय इसके भी बाद मानते हैं। इनमें कौनसा मत ठीक है, इस विवादग्रस्त विषय पर विचार करने की हमें यहां आवश्यकता नहीं। यहां इतना ही निर्दिष्ट करना पर्याप्त है, कि राजा अग्रसेन का काल महाभारत युद्ध के बाद कलियुग प्रारम्भ होने पर लगभग १०० वर्ष पीछे है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आठवां अध्याय

राजा अग्रसेन के उत्तराधिकारी

क्रुक द्वारा संगृहीत किंवदन्तियों के अनुसार राजा अग्रसेन की अठारह रानियां थीं और उनसे चौवन पुत्र तथा अठारह कन्यायें हुईं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी ने भी 'अग्रवालों की उत्पत्ति' में यही लिखा है। अग्रवैश्यवंशानुकीर्तनम् में अग्रसेन की अठारह रानियों का उल्लेख किया गया है। वहां उनके नाम भी दिए गए हैं, जो निम्न लिखित हैं—मित्रा, चित्रा, शुभा, शीला, शिखा, शान्ता, रजा, चरा, शची, सखी, शिरा, रम्भा, भवानी, सरसा, समा और माधवी। ये नाम कुल सोलह हैं। शेष दो रानियों के नाम नहीं मिलते हैं। माधवी मुख्य रानी थी। संभवतः यही कोलपुर के नागराजा की कन्या थी। 'अग्रवैश्य-वंशानुकीर्तनम्' में इन विविध रानियों के पुत्रों के नाम भी दिये गए

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हैं। 'उरुचरितम्' में भी यही लिखा है, कि अग्रसेन की अठारह रानियां थीं और प्रत्येक रानी से तीन तीन लड़के और एक एक लड़की हुई। पर इस ग्रन्थ में इन पुत्र पुत्रियों के नाम नहीं दिये गए। भाटों के गीतों में भी राजा अग्रसेन की अठारह रानियां और बहुत से पुत्र पुत्रियां कही जाती हैं। प्राचीन समय में राजा लोगों में बहुविवाह की प्रथा प्रचलित थी, अतः यह बात कुछ असंभव नहीं कही जा सकती।

अग्रसेन के लड़कों में सब से बड़ा विभु था। महालक्ष्मी के आदेश से जब राजा अग्रसेन ने राज्य का परित्याग किया, तब विभु ही राजगद्दी पर बैठा। अपने पिता के समान विभु भी बड़ा शक्तिशाली राजा हुवा। अग्रवालों में जो यह कथा चली आती है, कि अगरोहा में अगर कोई घर ग़रीब हो जाता था, तो बाकी सब उसे पांच रुपये नकद और एक ईंट सहायता के रूप में देते थे,[1] वह शायद विभु के ही समय की है। 'अग्रवैश्य वंशानुकीर्तनम्' में लिखा है कि जब कोई आग्रेय (अग्रवाल) मनुष्य दरिद्र हो जाता था, तो उसे विभु की तरफ से एक लाख मुद्रा दी जाती थी।[2] विभु की आयु सौ वर्ष हुई। उसके बाद उसका लड़का नेमिनाथ राजा बना। उसके बाद विमल, शुकदेव, धनञ्जय, और श्रीनाथ क्रमशः राजगद्दी पर बैठे। इन राजाओं के केवल नाम ही मिलते हैं। कोई महत्व की घटना इनके सम्बन्ध में नहीं लिखी गई।

श्रीनाथ का लड़का दिवाकर था। इसने पुराने परम्परागत धर्म को छोड़ कर जैन धर्म की दीक्षा ली। जैन अग्रवालों में यह अनुश्रुति

---

1. Buchanan, Eastern India. Vol. II. p. 465

2. लक्षं ददौ मुद्रां ज्ञातौ दारिद्र्यमागते।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चली आती है, कि श्री लोहाचार्य स्वामी अगरोहा गए और वहां उन्होंने बहुत से अग्रवालों को जैनधर्म की दीक्षा दी। जैनों के अनुसार उस समय अगरोहा में राजा दिवाकर राज्य करते थे। वे श्री लोहाचार्य स्वामी के शिष्य हो गए और उनके अनुकरण में अन्य बहुत से अगरोहा-निवासियों ने जैन धर्म को स्वीकार किया। अग्रवालों में बहुत से लोग जैन धर्म के अनुयायी हैं। ये सब श्री लोहाचार्य स्वामी को अपना गुरु मानते हैं।

इस अनुश्रुति का प्रमाण जैन ग्रन्थों में ढूंढ सकना सुगम नहीं है। जैन पुस्तकों में दो लोहाचार्यों का उल्लेख आता है,[1] पहले चन्द्रगुप्त मौर्य के समकालीन भद्रबाहु स्वामी के शिष्य श्री लोहाचार्य और दूसरे श्री सावन्तभद्र स्वामी, जिनका अन्य नाम लोहाचार्य भी था।[2] ये आचार्य ईसा की दूसरी शताब्दी में हुए। यह कहना बहुत कठिन है, कि इन दो लोहाचार्यों में से किसने अगरोहा जाकर राजा दिवाकर को जैन धर्म में दीक्षित किया। पर 'अग्रवैश्य वंशानुकीर्तनम्' का भी राजा दिवाकर का उल्लेख करना और उसे जैन बताना सूचित करता है, कि जैन अग्रवालों में प्रचलित अनुश्रुति ऐतिहासिक तथ्य पर आश्रित है।

दिवाकर के बाद सुदर्शन राजा बना। इसके विषय में लिखा है, कि वृद्धावस्था में राजगद्दी छोड़ कर वह सन्यासी हो गया और काशी में निवास करने लगा। उसके बाद महादेव राजगद्दी पर बैठा, जो

1. बृहज्जैन शब्दार्णव पृष्ठ ६०६

2. श्रुतावतार कथा पृष्ठ १४

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

श्रीनाथ का पुत्र था। महादेव के बाद यमाधर और फिर मलय और वसु क्रमशः राजा बने। वसु के बहुत से पुत्र थे, जिन्होंने पृथक् आठ राजवंशों की स्थापना की। पर वसु का राज्य उसके भाई नन्द को मिला। नन्द के बाद चन्द्रशेखर और फिर उसका पुत्र अग्रचन्द्र राजा बना। अग्रचन्द्र के साथ 'अग्रवैश्य वंशानुकीर्तनम्' ने अग्रसेन की वंशावलि समाप्त कर दी है, और यह शुभ इच्छा प्रकट की है, कि अग्रचन्द्र के पुत्र पौत्र तथा वंशजों से यह नगर सदा सुशोभित रहे।

'अग्रवैश्यवंशानुकीर्तनम्' के अतिरिक्त अन्य किसी ग्रन्थ से अग्रसेन के वंशजों का परिचय नहीं मिलता है। भाटों के गीत केवल अग्रसेन की रानियों और पुत्रों के सम्बन्ध में वर्णन करते हैं। पर इस संस्कृत ग्रन्थ का विवरण सर्वथा निराधार नहीं कहा जा सकता, क्योंकि कम से कम राजा दिवाकर का नाम जैन अग्रवालों में अब तक भी प्रचलित है।

ऐसा प्रतीत होता है, कि अग्रसेन और अग्रचन्द्र के बीच में जिन राजाओं की नामावलि दी गई है, वह पूर्ण नही है। इस सूचि में अग्रसेन से दिवाकर तक केवल सात नाम हैं, जबकि इन दो राजाओं के बीच में कई शताब्दियों का अन्तर है। दिवाकर का काल तीसरी शताब्दी ईसवी पूर्व से पहले नहीं हो सकता। दूसरी तरफ अग्रसेन का काल कलियुग की पहली शताब्दी में है। संभवतः, 'अग्रवैश्यवंशानुकीर्तनम्' में केवल प्रसिद्ध राजाओं का ही उल्लेख है।

ऊपर की सूचि में जो नाम दिये गये हैं, वे संस्कृत-साहित्य और शिलालेखों आदि में अन्यत्र कहीं नहीं पाये जाते हैं। इसका कारण केवल यह है, कि आग्रेय गण एक छोटा सा राज्य था। भारत के

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इतिहास में इसने किसी विशाल साम्राज्य का निर्माण नहीं किया। आग्रेय के समान ही अन्य भी सैकड़ों गण राज्यों के राजाओं व शासकों के नाम भारतीय साहित्य में कहीं नहीं मिलते। मालव, यौधेय और क्षत्रिय आदि अत्यन्त प्रसिद्ध गणों के सम्बन्ध में भी हमें कोई ज्ञान नहीं है। अतः यह कोई आश्चर्य की बात नहीं, कि आग्रेय गण के शासकों के नाम भी विस्मृतप्राय हों। इस गण के सम्बन्ध में जो यह थोड़ा बहुत परिचय हमें मिल सका है, उसका कारण यही है कि अग्रवंश में अपने प्राचीन गौरव की कुछ कुछ स्मृति शेष है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नवां अध्याय

अग्रवाल जाति का नागों के साथ सम्बन्ध

अनुश्रुति के अनुसार राजा अग्रसेन का विवाह कोलपुर या अहिनगर के नाग राजा की कन्या के साथ हुवा था। इस प्रकार अग्रवाल लोग मातृपक्ष से नागों की सन्तान माने जाते हैं। अग्रवाल लोगों में इस नाग कुमारी की स्मृति बड़े आदर और गर्व की समझी जाती है। हमारे मामा का घर नाग वंश में है, ऐसा अग्रवाल लोग बड़े अभिमान के साथ कहते हैं। किम्वदन्ती के अनुसार राजा अग्रसेन के पुत्रों का विवाह भी नाग कुल की कुमारियों से हुवा था। अग्रवाल लोगों में वर्तमान समय में भी नागों व सर्पों का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। इस सम्बन्ध में कुछ बातें उल्लेख योग्य हैं—

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

१—अग्रवाल लोग चाहे वे वैष्णव, शैव, या जैन कोई भी हों, सांप को नहीं मारते। मारना तो दूर रहा, वे उसे चोट मारना या सताना भी बुरा समझते हैं।

२—अनेक स्थानों पर हिन्दू अग्रवाल अपने मकान के बाहरी दरवाजे के दोनों तरफ सांप की प्रतिमा बनाते हैं। इस प्रतिमा की फल फूल द्वारा पूजा भी की जाती है।

३—आस्तीक मुनि की पूजा अग्रवालों में प्रचलित है। इस पूजा का उनमें अपना एक विशेष ढंग भी है। आस्तीक मुनि जरत्कारु का पुत्र था। उसकी माता नागराज वासुकि की बहन थी। जब राजा जनमेजय ने नाग-यज्ञ किया, तब आस्तीक मुनि ने ही नाग तक्षक की प्राण रक्षा की थी।

४—अग्रवाल गूगा पीर के भी उपासक हैं। गूगा पीर उत्तरीय भारत का एक प्रसिद्ध देवता है, जिसका नागों के साथ घनिष्ट सम्बन्ध है। कुछ लोग उसे नागराज का अवतार समझते हैं।

५—आस्तीक और गूगा की पूजा के अतिरिक्त नागपञ्चमी के दिन भी अग्रवाल लोग नागों को पूजते हैं।

भारतीय इतिहास में नागों की समस्या बड़ी जटिल है। नाग लोग कौन थे, और नागों का सापों के साथ क्या सम्बन्ध था, यह निश्चित करना बड़ा कठिन है। जब हम ऐतिहासिक दृष्टि से इस समस्या पर विचार करते हैं, तो निम्नलिखित बातें हमारे सम्मुख आती हैं—

'मंजुश्रीमूलकल्प' नाम का एक बौद्ध ग्रन्थ पिछले दिनों प्रकाशित हुवा है। यह एक इतिहास-सम्बन्धी पुस्तक है, जिसमें भारत के अनेक

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्राचीन राजवंशों का ऐतिहासिक रूप में वर्णन किया गया है। बहुत से ऐसे राजवंश जिनका पौराणिक साहित्य में कहीं उल्लेख नहीं, पर शिला लेखों, सिक्कों आदि से जिनकी सत्ता सिद्ध होती है, इस ग्रन्थ में वर्णित है यथा गुप्त, वर्धन, पाल आदि वंश। इसी पुस्तक में नागवंश का भी वृत्तान्त दिया गया है, और नागों को वैश्य या वैश्यनाग लिखा गया है।[1] मंजु-श्री-मूलकल्प का यह उल्लेख बहुत महत्व का है। कारण यह है कि राजा अग्रसेन का वंश भी वैश्य लिखा गया है, और इस पुस्तक से नागों का भी वैश्य होना सूचित होता है।

श्रीयुत् काशीप्रसाद जायसवाल ने मंजुश्रीमूलकल्प के इन वैश्य-नागों की भारशिव वंश से एकता सिद्ध की है। भारशिव राजाओं का परिचय हमें सिक्कों और कुछ अन्य ऐतिहासिक साधनों से मिलता है। भारशिव राजाओं ने कुशानों की शक्ति को उत्तरीय भारत से उच्छिन्न कर देश को स्वतन्त्र किया था। कुशान विजेता जो पश्चिम की ओर से भारत विजय करने के लिये आये थे, धीरे-धीरे सारे देश को जीत चुके थे। विम कैडफिसस और कनिष्क इनमें सबसे प्रतापी राजा हुवे। विदेशियों के शासन से भारतीय जनता पीड़ित थी। भारशिवों ने भारत को स्वतन्त्र किया और विदेशी कुशानों को उच्छिन्न कर दस अश्वमेध यज्ञ किये। बनारस का दशाश्वमेध घाट इन्हीं दश अश्वमेधों की स्मृति है।

१. नागराज समाह्वयो गौड राजा भविष्यति।

अन्ते तस्य नृप तिष्ठं जयाद्यावर्णत द्विशौ ॥ ७५०

वैश्यैः परिवृता वैश्यं नागाह्वयो समन्ततः।

मंजु श्रीमूल कल्प पृ० ५५, ५६

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुशानों की शक्ति का मुकाबला करने के लिये भारशिवों की यह नीति थी, कि वे भारत के विविध पुरातन राज्यों की स्वतन्त्रता का पुनरुद्धार करते थे और उनके साथ स्थिर मैत्री स्थापित करने के लिये अपनी राजकुमारियों का विवाह उनके साथ कर देते थे। इन राज्यों के लिये भारशिव व नाग सम्राटों की राजकुमारियों के साथ विवाह करना बड़े अभिमान की बात थी। इसी लिये अनेक शिलालेखों में 'फणीन्द्र-सुता' व 'नागकन्या' के साथ विवाह करने की बात को बड़े गर्व के साथ लिखा गया है। कई बार मेरा विचार होता है, कि राजा अग्रसेन के नागकुमारी के साथ विवाह करने की जो बात अग्रवालों में इतने गर्व से स्मरण की जाती है, वह भी इसी काल के साथ सम्बन्ध रखती है। सम्भवतः अन्य बहुत से प्राचीन राज्यों के साथ आग्रेय गण की स्वतन्त्रता का भी इस समय पुनरुद्धार हुवा होगा। अगरोहा निश्चय ही कुशान साम्राज्य के आधीन था। विम कैडफिसस का तो अगरोहा से विशेष सम्बन्ध था। इस अवस्था में क्या आश्चर्य है, कि भारशिव नागों के साहाय्य से अगरोहा के आग्रेय गण ने भी पुनः स्वतन्त्रता प्राप्त की हो और उसके राजा के साथ भी नाग कन्या का विवाह हुवा हो। पर इस कल्पना में एक कठिनाई है। पिछले एक अध्याय में राजा अग्रसेन का समय हमने कलियुग के प्रारम्भिक भाग में सूचित किया है। यदि अग्रसेन का वह समय ठीक है, तो अग्रवाल-अनुश्रुति की नाग कन्या 'मंजुश्री मूलकल्प' के वैश्य नागों की कन्या नहीं हो सकती। सम्भवतः अग्रवालों को मातृपक्ष से सम्बन्ध रखने वाले नाग भारशिव नागों की अपेक्षा अधिक प्राचीन हैं। महाभारत की कथा में जिन लोगों ने

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आर्यावर्त पर आक्रमण किया था और जिनका ध्वंस राजा जनमेजय ने किया था, वे अग्रसेन के समकालीन थे। सम्भव है, कि उस समय आर्यावर्त के दक्षिण और पश्चिम में अनेक राज्य रहे हों और उन्हीं में से अन्यतम कोलपुर के नागराज की कन्या के साथ अग्रसेन का सम्बन्ध हुवा हो। भारशिव लोग भी आर्यावर्त के दक्षिण प्रदेश के निवासी थे। यदि वे महाभारत के प्राचीन नागों के वंशज हों, तो इसमें आश्चर्य की बात नहीं।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दसवां अध्याय

अग्रवालों के गोत्र

अग्रवालों के कुल अठारह या जैसा सामान्यतया लोगों में प्रचलित है, साढ़े सत्तरह गोत्र हैं। इनके नामों के सम्बन्ध में विविध लेखकों में मतभेद है।

श्रीयुत शेरिंग[1], श्री रिसले[2] और श्री क्रुक[3] ने अग्रवालों के गोत्रों की जो सूचियां दी हैं, उन्हें यहां देना उपयोगी होगा। ये सूचियां इस प्रकार हैं—

1. Sherring, Hindu Tribes and Castes as represented in Benaras, (देखो अग्रवाल)
2. Risley, The people of India (देखो अग्रवाल)
3. Crooke, Tribes and Castes of the North-Western Provinces and Oudh, p. 16.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

श्रीयुत् शेरिंग की सूचि		श्रीयुत् रिसले की सूचि	श्रीयुत् ग्रुक की सूचि
१.	गर्ग	गर्ग	गर्ग
२.	गोभिल	गोभिल	गोभिल
३.	गरवाल	गावाल	गौतम
४.	बत्सिल	वात्सिल	वासल
५.	कासिल	कासिल	कौशिक
६.	सिंहल	सिंहल	सैंगल
७.	मङ्गल	मङ्गल	मुद्गल
८.	भदल	भद्दल	जैमिनि
९.	दिंगल	तिंगल	तैतरीय
१०.	एरण	ऐरण	औरण
११.	तायल	तायल	धान्याश
१२.	टैरण	टैरण	ढेलन
१३.	ढिंगल	ढिंगल	कौशिक
१४.	तित्तिल	तित्तल	ताण्डेय
१५.	मित्तल	मित्तल	मैत्रेय
१६.	तुन्दल	तुन्दल	कश्यप
१७.	गोयल	गोयल	माण्डव्य
१७॥.	बिन्दल	गोयन	नागेन्द्र

इन गोत्र सूचियों को उद्धृत करते हुवे आवश्यकतानुसार क्रम-परिवर्तन कर दिया गया है। जहां तक कि श्रीयुत् शेरिंग तथा श्री० रिसले की सूचियों का सम्बन्ध है, उनमें भेद बहुत कम है। पर श्रीयुत्

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्रुक की सूचि पहली दो से बहुत भिन्न है। हमें यह ज्ञात नहीं, कि श्री० क्रुक ने किस आधार पर गोत्रों के नाम दिये हैं। जहां तक हमें ज्ञात है, अग्रवालों में प्रचलित गोत्रों के नाम वे ही हैं, जो श्री० शेरिंग व रिसले ने दिये हैं। इसमें सन्देह नहीं, कि एक ही गोत्र को भिन्न-भिन्न स्थानों पर कुछ उच्चारण भेद से बोला जाता है। जैसे एक ही गोत्र को कहीं बंसल, कहीं बांसल, कहीं बत्सिल, बात्सिल व बासल कहते हैं। अग्रवाल लोग उत्तरी भारत में दूर-दूर तक फैले हुवे हैं। स्थान भेद से उच्चारण में भेद आ जाना स्वभाविक ही है। पर क्रुक ने जो नाम दिये हैं, उनमें कौशिक, मैत्रैय, कश्यप आदि नाम अग्रवालों में कहीं प्रचलित हों, ऐसा हमारा विचार नहीं है। सम्भवतः किसी पण्डित ने प्रचलित गोत्रों के शुद्ध संस्कृत नाम ढूंढने का प्रयास किया होगा, और उसी के आधार पर श्री० क्रुक ने उन्हें अपनी सूचि में दे दिया होगा। यह ध्यान रखना चाहिये, कि अग्रवालों में गोत्र जीवित जागृत हैं। वे अब तक केवल लोगों को स्मरण ही नहीं हैं, पर व्यावहारिक जीवन में उनका प्रतिदिन प्रयोग होता है। विशेषतया, सगाई विवाह आदि के निश्चय में तो उनके बिना कार्य चल ही नहीं सकता। अतः ऐसा ही प्रयत्न होना चाहिये, कि प्रचलित नामों को ही लिया जावे।

प्रचलित गोत्रों का शुद्ध संस्कृत रूप ढूंढने का एक प्रयत्न अजमेर निवासी श्री० रामचन्द्र ने किया था। उन्होंने अपनी छोटी सी पुस्तिका 'अग्रवाल-उत्पत्ति' में एक नक्शा दिया है, जिसमें न केवल गोत्रों के शुद्ध-रूप ही दिये हैं, पर साथ ही अग्रवालों के वेद, शाखा, सूत्र तथा प्रवर भी दिये हैं। इस नक्शे को यहां उद्धृत करना उपयोगी होगा—

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गोत्र

अशुद्ध	शुद्ध	वेद	शाखा	सूत्र	प्रवर
गर्ग	गर्ग	यजुर्	माध्यन्दनि	कात्यायन	५
गोयल	गोभिल	यजुर्	माध्यन्दनि	कात्यायन	३
गोयन	गोतुम	यजुर्	माध्यन्दनि	कात्यायन	३
मीतल	मैत्रेय	यजुर्	माध्यन्दनि	कात्यायन	३
जीतल	जैमिन	यजुर्	माध्यन्दनि	कात्यायन	३
सिंगल	शैंगल	साम	कौसथमी	गोभिल	३
बासल	वत्स्य	साम	कौसथमी	गोभिल	५
एरन	श्रौर्व	यजुर्	माध्यन्दनि	कात्यायन	३
कांसल	कौशिक	यजुर्	माध्यन्दनि	कात्यायन	३
कंछल	कश्यप	साम	कौसथमी	गोभिल	३
बुङ्गल	ताण्डेय	यजुर्	माध्यन्दनि	कात्यायन	३
मङ्गल	माण्डव्य	ऋग्	शाकिल	अश्विलायन	३
बिन्दल	वशिष्ठ	यजुर्	माध्यन्दनि	कात्यायन	३
ढेलन	धौम	यजुर्	माध्यन्दनि	कात्यायन	३
मुधकल	मुद्गल	ऋग्	शाकिल	आश्विलायन	३
टैरन	धान्याश	यजुर्	माध्यन्दनि	कात्यायन	३
तायल	तैत्तिरीय	यजुर्	माध्यन्दनि	कात्यायन	३
नागल	नागेन्द्र	साम	कौसथमी	गोभिल	३

श्रीयुत रामचन्द्र ने किस आधार पर गोत्र नामों को शुद्ध किया है, और शाखा वेद, सूत्र, प्रवर आदि दिये हैं, यह जानना बहुत कठिन

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

है। हमारे विचार में गोत्रों को इस प्रकार शुद्ध करने की कोई आवश्यकता नहीं है। सौभाग्यवश, हमारे संस्कृत ग्रन्थ 'अग्रवैश्य वंशानुकीर्तनम्' में पूरे अठारह गोत्रों की सूचि दी गई है, जो निम्न लिखित है—

१. गर्ग २. गोइल ३. गावाल ४. वात्सिल ५. कासिल ६. सिंहल ७. मंगल ८. भंदल ९. तिंगल १०. ऐरण ११. धैरण १२. ढिंगल १३. तित्तल १४. मित्तल १६. तायल १७. गोभिल १८. गवन।

इस सूचि में जो नाम हैं, वे आजकल अग्रवालों में प्रचलित गोत्रों से बहुत मिलते हैं। कहीं कहीं भेद अवश्य है। यथा, वात्सिल की जगह अब बंसल, कासिल की जगह कंसल, भंदल की जगह भद्दल बोला जाता है। पर इसमें ऐसा भेद नहीं है, कि कासल को कौशिल और मंगल को मारण्डव्य बना दिया गया हो। हमारी सम्मति में इसी सूचि को प्रामाणिक रूप से स्वीकृत किया जाना उचित है।

अग्रवालों में गोत्र का बड़ा महत्व है। विवाह सबन्ध निश्चित करते हुवे अग्रवाल लोग केवल पिता का गोत्र ही नहीं बचाते, अपितु मामा का भी गोत्र बचाते हैं। सगोत्रों में विवाह की कल्पना भी अग्रवालों में असम्भव है। इसलिये प्रत्येक परिवार अपने गोत्र को स्मरण रखता है, और एक गोत्र के स्त्री पुरुष आपस में बहन भाई के सदृश समझे जाते हैं।

गोत्र की समस्या बड़ी जटिल है। जहां तक ब्राह्मणों के गोत्रों का सम्बन्ध है, वहां उनमें बहुत विवाद नहीं। पर ब्राह्मण-भिन्न क्षत्रिय, वैश्य आदि जातियों में गोत्र की समस्या बड़ी कठिन तथा विवादास्पद

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

है। विज्ञानेश्वर ने मिताक्षरा में प्रतिपादित किया है, कि क्षत्रिय जातियों के अपने गोत्र व प्रवर नहीं हैं।[1] उनके पुरोहितों के जो गोत्र व प्रवर हैं, वही क्षत्रियों के भी हैं। यही बात वैश्य जातियों के सम्बन्ध में भी मानी जाती है। गोत्र के ऊपर संस्कृत में बहुत सी पुस्तकें पाई जाती हैं। इन पुस्तकों में यह सिद्धान्त माना गया है, कि मूल गोत्र आठ हैं। अगस्त्य को मिलाकर (जो सप्तर्षियों में नहीं है) सप्तर्षियों (इस प्रकार कुल आठ ऋषियों) के जो पुत्र व सन्तान हैं, वही गोत्र कहाते हैं।[2] इस प्रकार जो कुल आठ गोत्र हुवे, उनके नाम निम्न-लिखित हैं—

१. विश्वामित्र २. जमदग्नि ३. भारद्वाज ४. गौतम ५. अत्रि ६. वशिष्ठ ७. काश्यप ८. अगस्त्य।

यह सिद्धान्त कि वस्तुतः अपने गोत्र ब्राह्मणों के ही होते हैं, और अन्य जातियां (क्षत्रिय वैश्य आदि) अपने पुरोहितों से ही गोत्र लेती हैं, धर्मसूत्रों में वर्णित है। पर प्रसिद्ध ऐतिहासिक श्रीयुत चिन्तामणि विनायक वैद्य ने बड़े विस्तार के साथ ऐतिहासिक दृष्टि से इसकी समीक्षा की है। उन्होंने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ मध्यकालीन हिन्दू भारत के इतिहास में सिद्ध किया है, कि राजपूतों में बहुत से गोत्र ऐसे हैं, जो ब्राह्मणों में नहीं पाये जाते, जो ब्राह्मणों व पुरोहितों से न लेकर स्वयं राजपूतों के अपने

---

1. पुरोहित प्रवरोहि राज्ञाम्

2. सप्तानां सप्तर्षीणाम् अगस्त्याष्टमानां यदपत्यं तद्गोत्रम् इत्याचक्षते

(बौधायन)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ही गोत्र हैं। यहां हमें श्रीयुत वैद्य महोदय की युक्तियों को दोहराने की आवश्यकता नहीं। पर जो बात राजपूतों के सम्बन्ध में सत्य है, वह अन्य ब्राह्मण-भिन्न वैश्य अग्रवाल आदि जातियों के सम्बन्ध में भी सत्य है। यहां यह निर्दिष्ट करना पर्याप्त है, कि अग्रवालों के अठारह गोत्रों में से अधिकांश ऐसे हैं, जो ब्राह्मणों में हैं ही नहीं। अग्रवालों के गौड़ पुरोहितों के जो गोत्र हैं, वे उनके यजमान अग्रवालों के नहीं हैं। बंसल, एरण आदि गोत्र ब्राह्मणों में नहीं पाये जाते। इस दशा में यह मानना कि अग्रवालों के गोत्र पुरोहितों से चले, कहां तक युक्तिसंगत हो सकता है? सामान्यता, यह समझा जाता है, कि अग्रवालों के अठारह गोत्र उन ऋषियों के नाम से चले, जो राजा अग्रसेन के अठारह यज्ञों में पुरोहित बने थे। 'उरु चरितम्' में भी यही बात लिखी गई है। पर विचारणीय बात यह है, कि 'गोत्र प्रवर मञ्जरी' आदि गोत्र विषयक पुस्तकों में उन सब गोत्रों की सूचि दी गई है, जो अब ब्राह्मणों में प्रचलित हैं, या कभी पुराने समय में भी ब्राह्मणों व ऋषियों में प्रचलित थे। उनमें अग्रवालों के बहुत से गोत्रों का नाम भी नहीं है। राजपूतों के अधिकांश गोत्र भी उनमें नहीं मिलते हैं। इस दशा में यह कैसे माना जा सकता है, कि अग्रवालों के गोत्र उन ऋषियों के नामों से चले, जो अग्रसेन के अठारह यज्ञों में पुरोहित थे। यदि उन ऋषियों के नाम गर्ग, गोइल, वात्सिल, कासिल, तिंगल आदि होते, तो उनका प्राचीन ब्राह्मण गोत्र सूचियों में नाम अवश्य होना चाहिये था। वर्तमान समय में भी सब अग्रवाल परिवारों के वंश क्रमानुगत पुरोहित प्राचीन समय से चले आ रहे हैं। उनके आवश्यक रूप से वे गोत्र नहीं हैं, जो उनके यजमानों के हैं।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अतः पुरोहितों से गोत्र चलने का मत निर्विवाद रूप से स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

गोत्र का ऐतिहासिक दृष्टि से क्या अभिप्राय है, इस विषय पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने की आवश्यकता है। भारत के क्रियात्मक जीवन में न केवल आज कल गोत्र का बड़ा भारी महत्व है, पर प्राचीन-काल में भी इसका ऐसा ही महत्व था। मैं इस विषय पर एक नई दृष्टि से विचार करता हूँ।

संस्कृत के प्रसिद्ध वैयाकरण पाणिनि मुनि ने गोत्र का लक्षण इस प्रकार किया है—

"अपत्यं पौत्र प्रभृति गोत्रम्"[1]

इसका मतलब यह है, कि पौत्र से शुरू करके सन्तति व वंशजों को गोत्र कहते हैं।

इसे और अच्छी तरह इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है। मान लीजिये, कि गर्ग नाम का कोई आदमी है। उसका लड़का (अनन्तरा-पत्य = जिसके बीच में अन्य कोई सन्तति न हो) गार्गिः[2] कहावेगा। गार्गिः का लड़का (या गर्ग का पोता) गार्ग्य कहावेगा। इस गार्ग्य से शुरू करके आगे जो भी सन्तति होगी, वे सब गोत्र व गोत्रापत्य कहावेंगे, अनन्तरापत्य नहीं।

पर एक समय में केवल एक ही गार्ग्य होगा। यदि गर्ग का एक से अधिक पोता हो, गार्ग्य का कोई छोटा भाई हो, तो वह गार्ग्य नहीं

---

1. अष्टाध्यायी ४-१.१६२
2. अत इञ् (अष्टाध्यायी ४-१-९५)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कहावेगा। वह गोत्रापत्य न कहा कर युवापत्य कहावेगा, और इसी लिये उसे गार्ग्य के स्थान पर गार्ग्यायण कहेंगे।[1] और यदि गर्ग के पोते गार्ग्य की कोई सन्तान भी हो, तो अपने पिता गार्ग्य के जीते हुवे वह गार्ग्यायण कहावेगी, गार्ग्य नहीं। एक समय में केवल एक ही व्यक्ति गोत्र व गोत्रापत्य कहावेगा—शेष सब युवापत्य होंगे।

अपने उदाहरण को और स्पष्ट करने के लिये हम गर्ग के वंश में पन्द्रहवीं पीढ़ी के आदमी को लेते हैं। निस्सन्देह, 'अपत्यं पौत्र प्रभृति गोत्रम्' सूत्र के अनुसार वह गोत्र व गोत्रापत्य कहाना चाहिये। इसी अर्थ में उसकी संज्ञा गार्ग्य होनी चाहिये। पर यदि उसका पिता (पीढ़ी नम्बर १४) जीता है, तो वह पिता गोत्र (गार्ग्य) कहावेगा, लड़का (पीढ़ी नं० १५) युवापत्य (गार्ग्यायण) कहावेगा। यदि पीढ़ी नं० १४ का कोई छोटा भाई हो (उसे हम नं०१४ क कहते हैं,) तो वह भी युवापत्य अर्थ में गार्ग्यायण ही कहावेगा।[2]

पाणिनि मुनि ने अष्टाध्यायी में अनन्तरापत्य, गोत्रापत्य और युवापत्य अर्थ में भिन्न भिन्न शब्दों के विविध प्रत्यय लगाके जो विविध रूप बनते हैं, उन्हें बड़े विस्तार के साथ प्रदर्शित किया है। इस प्रकार के सैकड़ों शब्द अष्टाध्यायी और गणपाठ में दिये गये हैं। अष्टाध्यायी में सब से बड़ा प्रकरण तद्धित का है, और उसका मुख्य भाग इसी विषय पर है। पाणिनि ने गोत्रापत्य और युवापत्य में भेद दिखाने का

---

1. यञिञोश्च (अष्टाध्यायी ४-१-१०१)
2. भ्रातरि च ज्यायसि (अष्टाध्यायी ४, १, १६५)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जो इतना कष्ट किया है, इतने शब्द संगृहीत किये हैं, उसका कुछ विशेष हेतु होना चाहिये। हमें मालूम है, कि पाणिनि मुनि के समय में भारत में बहुत से गण व संघ राज्य विद्यमान थे। श्री काशी प्रसाद जायसवाल ने अष्टाध्यायी के आधार पर तत्कालीन बहुत से गणराज्यों की सत्ता सिद्ध की है।[1] इन गणराज्यों का शासन प्रायः श्रेणितन्त्र (Aristocracy या Oligarchy) होता था। गण सभा में विविध कुलों के प्रतिनिधि एकत्र होते थे, और राज्य कार्य की चिन्ता करते थे। ये प्रतिनिधि वोटों द्वारा नहीं चुने जाते थे, अपितु प्रत्येक कुल का नेतृत्व उसका मुखिया (गोत्रापत्य या वृद्ध[2]) करता था। इसलिये एक कुल में एक समय एक ही गोत्रापत्य व वृद्ध होता था, उस कुल के बाकी सब आदमी युवापत्य कहाते थे। कुल के इस वृद्ध की विशेष संज्ञा होती थी, जैसे गर्ग द्वारा स्थापित कुल के गोत्रापत्य व वृद्ध की विशेष संज्ञा गार्ग्य थी, उसी कुल के शेष सब लोग गार्ग्यायण कहाते थे।

पाणिनि का गोत्र से यही अभिप्राय है। संक्षेप से हम यूं कह सकते हैं, कि एक गोत्रकृत् (जिस आदमी का अपना पृथक् गोत्र चला हो) के सब वंशज—उसके अपने लड़के (अनन्तरापत्य) को छोड़कर—गोत्र कहावेंगे, उनमें दो भेद होंगे, गोत्रापत्य (जो विद्यमान सन्तति में सब से वृद्ध हो) और युवापत्य।

इस विवेचना के बाद हम धर्मसूत्रों व स्मृतियों में वर्णित गोत्र पर विचार करते हैं। हम अभी लिख चुके हैं, कि बौधायन के अनुसार शुरू

1. K. P. Jayaswal, Hindu Polity, Vol. I Chap. IV-X

2. वृद्धस्य च पूजायाम् (अष्टाध्यायी ४, १, १६६)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

में कुल आठ परिवार थे, जिनसे शेष सब का उद्भव हुवा। जब गोत्र का अभिप्राय सन्तति है, तो यही मानना होगा कि आठ ऋषियों की सन्तान ही सब आर्य लोग थे। आर्य जाति के सब लोग, चाहे वे किसी वर्ण के हों, चाहे उनमें कोई भेद, उपभेद आदि हों, इन्हीं आठ ऋषियों की सन्तान हैं।

महाभारत में एक श्लोक आता है, जो इस प्रकार है:—

मूल गोत्राणि चत्वारि समुत्पन्नानि भारत
अंगिराः कश्यपश्चैव वशिष्ठो भृगुरेव च ॥[1]

इस श्लोक के अनुसार मूल गोत्र केवल चार हैं, अंगिरा, कश्यप, वशिष्ठ और भृगु। उन्हीं से शेष सब कुलों व लोगों की उत्पत्ति हुई। बौधायन में जो आठ मूलगोत्र दिये गये हैं, उनमें अंगिरा के स्थान पर उसके दो पोतों—भारद्वाज और गौतम के नाम हैं। भृगु के स्थान पर उसके वंशज जमदग्नि का नाम है। कश्यप और वशिष्ठ का नाम उनमें है ही। तीन नाम नये हैं, जिनका महाभारत के चार गोत्रों से कोई सीधा सम्बन्ध प्रतीत नहीं होता। ये तीन नाम अत्रि, विश्वामित्र और अगस्त्य के हैं।

आजकल भारत में गोत्रों की संख्या चार व आठ तक सीमित नहीं है। यदि आजकल के ब्राह्मणों के गोत्रों का ही संग्रह किया जाय, तो उनकी संख्या सैकड़ों में जावेगी। और यदि सब जातियों के लोगों के गोत्रों की सूचि बनाई जाय, तब तो वह हज़ारों में पहुँचेगी। इन सैकड़ों हजारों गोत्रों का सम्बन्ध मूल चार व आठ गोत्रों से ढूंढ सकना सम्भव

1. महाभारत, शान्ति पर्व अध्याय २९६

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नहीं है। पर यदि हम पाणिनीय अष्टाध्यायी के आधार पर प्रतिपादित गोत्र के अभिप्राय को दृष्टि में रखें, तो यह समस्या बहुत कठिन प्रतीत न होगी। प्राचीन भारत में ज्यों ज्यों आबादी बढ़ती गई, और समाज का विकास होता गया, स्वाभाविक रूप से त्यों त्यों कुलों व परिवारों की संख्या भी अधिक होती गई। पहले से विद्यमान कुलों के विभाग होने लगे। विशेष योग्यता के प्रतापी पुरुषों ने अपना पृथक् कुल स्थापित किया और इस तरह एक नये गोत्र का प्रारम्भ हुवा। पुराने राज्यों ने भी नई बस्तियां बसाईं। अनेक महात्वाकांक्षी, प्रतापी मनुष्य नये स्थानों पर जाकर बसने लगे, वहां एक पृथक् राज्य बन गया। इन प्रतापी मनुष्यों के नेता से एक नया वंश चला, और विविध मनुष्यों ने अपने नये पृथक् गोत्र शुरू किये। धर्मशास्त्र के लेखक भी इस तथ्य को आंखों से ओझल नहीं कर सके। उन्होंने भी अनुभव किया, कि गोत्र कोई चार व आठ तक सीमित नहीं हैं, उनकी संख्या तो हजारों लाखों में हैं। प्रवर मञ्जरी में लिखा है:—

गोत्राणां तु सहस्राणि प्रयुतान्यर्बुदानि च
ऊन पञ्चाशदेवैषां प्रवरा ऋषि दर्शनात् ॥[1]

धर्मशास्त्र के लेखकों ने गोत्रों की इतनी अधिक संख्या को देखकर ही यह अनुभव किया था, कि उसे धार्मिक विधिविधान में आधार रूप से ग्रहण नहीं किया जा सकता। इसीलिये उन्होंने धार्मिक कृत्यों के लिये मुख्य आधार प्रवर को माना है। किसी के पूर्वजों में यदि कोई

1. प्रवरमञ्जरी पृष्ठ ६

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ऐसा ऋषि हुवा हो, जिसने वैदिक मन्त्रों का निर्माण किया हो, और वेद मन्त्रों द्वारा अग्नि की स्तुति की हो, तो उसे उस वंश का 'प्रवर' कहते हैं। जब कोई आदमी कोई धार्मिक कृत्य करने बैठता है, तो वह अपने प्रवर ऋषि का नाम लेकर अग्नि को यह स्मरण दिलाता है, कि मेरे इस पूर्वज ने वैदिक मन्त्रों द्वारा आपकी स्तुति की थी, और मैं उसी ऋषि की सन्तान हूँ। प्रवरों की संख्या पचास से कम है। वैदिक मन्त्रों की रचना एक विशेष काल के बाद समाप्त हो गई थी। इसलिये प्रवर ऋषियों की संख्या निश्चित रही और पचास से ऊपर न बढ़ सकी। पर गोत्र ऋषियों के लिये ऐसी कोई रुकावट न थी। कोई भी प्रतापी व्यक्ति जिसने अपनी पृथक् सत्ता कायम की, जिसने अपने कुल से पृथक् हो नया कुल बनाया, वह नया गोत्रकृत् हो गया। इस तरह गोत्रों की संख्या बढ़ती ही गई। यही कारण है, कि आजकल हजारों गोत्र पाये जाते हैं।

इस सम्बन्ध में हमें वंशकृत् और गोत्रकृत् का भेद भी दृष्टि में रखना चाहिये। महाभारत में कुछ मनुष्यों को वंशकृत्, वंशकर या पृथक् वंशकर्ता के नाम से कहा गया है। ऐसे ही दूसरे कुछ मनुष्य गोत्रकृत् कहाये हैं। इनमें क्या भेद था? वंशकृत् केवल राजा ही होते थे। जब कोई प्रतापी राजकुमार व अन्य व्यक्ति अपना कोई पृथक् राज्य कायम कर अपना नया वंश चलाता था, तो उसे पृथक् वंशकर्ता या वंशकर कहते थे। इसके विपरीत, जब राज्य के अन्दर कोई प्रतापी मनुष्य अपना नया कुल, नया घराना पृथक् रूप से कायम करता था, या नये

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्थापित हुवे राज्य में नये वंशकर्ता राजा के साथ जो लोग अपना नया कुल कायम करते थे, तो उन्हें गोत्रकृत् कहते थे।

राजा अग्रसेन एक नये वंशकर राजा थे। धनपाल के वंश में उत्पन्न होकर उन्होंने देवी महालक्ष्मी की भक्ति से उन्हें प्रसन्न कर अद्भुत शक्ति प्राप्त की और अपने नाम से एक नया नगर बसाकर वहां नवीन राज्य तथा नवीन राजवंश स्थापित किया। इसीलिये उनके नाम से नया राज्य तथा नया वंश चला। उनके नव स्थापित आग्रेय राज्य में जो लोग बसे, जो कुल व घराने सम्मिलित हुवे, वे पहले से विद्यमान थे। सम्भव है, कुछ घराने नये भी हों, पर आग्रेय गण में सम्मिलित कुल सब अग्रसेन की सन्तान नहीं थे।

यह बात एक अन्य प्रमाण से पुष्ट की जा सकती है। वर्णवाल या बारनवाल नाम की एक अन्य वैश्य-जाति आज कल है। इस जाति में कई गोत्र ऐसे हैं, जो अग्रवालों में भी हैं, जैसे वात्सिल, गोयल और गाविल। वर्णवाल जाति की अनुश्रुति के अनुसार इस जाति का उद्भव राजा गुणधी से हुवा। गुणधी राजा समाधि का पुत्र था। समाधि के दो लड़के थे, मोहन और गुणधी। मोहन के वंश में राजा अग्रसेन हुवे, और गुणधी से जो पृथक् वंश चला, वह आगे चलकर उस वंश के राजा वर्ण के नाम से वर्णवाल व बारनवाल कहाया, राजा समाधि तथा उसके पूर्वजों का वर्णन हम अग्रसेन के वंश का वृत्तान्त लिखते हुवे लिख चुके हैं। वर्णवालों का समाधि के छोटे पुत्र गुणधी से उद्भूत होना सूचित करता है, कि वे भी वैशालक वंश की एक छोटी शाखा हैं। वे भी वैश्य भलन्दन, वात्सप्रि और मांकील की सन्तान हैं। अब एक ही वंश की

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दो शाखाओं और वर्णवालों में एक समान गोत्रों की सत्ता का यही समाधान हो सकता है, कि ये समान गोत्र (कुल व घराने) उस समय से पहले विद्यमान थे, जब गुणधी ने अपना पृथक् वंश कायम किया। गुणधी का काल अग्रसेन से पहले है। अन्य गोत्रों का उद्भव गुणधी और अग्रसेन के काल के बीच में हुवा समझा जा सकता है।

अग्रवालों के गोत्रों के सम्बन्ध में जो विचार सामान्यतया प्रचलित है, मैं उसे स्वीकार करने में संकोच करता हूं। राजा अग्रसेन के अठारह यज्ञों (सतरह पूर्ण और एक अपूर्ण) में जिन ब्राह्मण ऋषियों ने पुरोहित कार्य किया, उनसे नये गोत्र कैसे चले, यह समझना कठिन है। फिर अग्रवालों के ये गोत्र किन्हीं ब्राह्मण ऋषियों में थे भी नहीं। महाभारत रामायण, पुराण, अष्टाध्यायी, प्रवरमञ्जरी, बौधायन आदि धर्म सूत्र, स्मृति ग्रन्थों आदि में प्राचीन ब्राह्मण ऋषियों के सैकड़ों हजारों वंश व गोत्रों के नाम मिलते हैं। उनमें अग्रवालों के गोत्रों (कुछ को छोड़कर) के नाम कहीं नहीं पाये जाते। अग्रसेन के पुत्रों के नाम से गोत्रों के चलने की बात भी सङ्गत नहीं होती है। प्रथम तो अग्रसेन के कितने पुत्र थे, इसमें भी बड़ा मतभेद है। अनेक स्थानों पर अग्रसेन के ५४ पुत्रों की बात लिखी गई है। फिर अग्रसेन के बड़े लड़के राजा विभु के नाम से कोई गोत्र नहीं चला, यह बात तो स्पष्ट ही है। हां, यदि आग्रेय गण के अठारह प्रधान कुलों को आलङ्कारिक रूप से राजा अग्रसेन के पुत्र कहा गया हो, तो दूसरी बात है।

मेरा विचार यह है, कि वैश्य भलन्दन, वात्सप्रि और मांकील—जो तीनों मन्त्रकृत् होने से वैश्यों के प्रवर कहे जाते हैं—के वंशजों में अनेक

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रतापी मनुष्य अपना पृथक् कुल कायम करके गोत्रकृत् की पदवी को प्राप्त करते रहे। गर्ग, गोयल, वात्सिल आदि इसी प्रकार के गोत्रकृत् प्रतापी पुरुष थे। इनके कुल राजा धनपाल के वंश के आधीन—राजा धनपाल के राज्य में—विद्यमान थे। जब राजा गुणाधी ने अपना पृथक् वंश चलाकर नया राज्य कायम किया, तो इनमें से कुछ कुल उसके साथ हो गये। फिर जब राजा अग्रसेन ने अपना पृथक वंश चलाकर नया राज्य कायम किया, तो गर्ग, गोयल आदि अठारह प्रधान कुल उसके साथ नये राज्य में सम्मिलित हुवे।

उसी प्रक्रिया का एक उदाहरण बिलकुल पिछले इतिहास से दिया जा सकता है। हम इस पुस्तक के पहले अध्याय में राजाशाही अग्रवालों का जिक्र कर चुके हैं। वहां हमने यह भी बताया था, कि इनका प्रारम्भ फरुखसियर के जमाने में राजा रतनचन्द्र द्वारा हुवा था। बादशाही दरबार में उसका बड़ा मान था। मुसलमानों के साथ अधिक मेल जोल होने के कारण उसका रहन सहन अग्रवाल बिरादरी के लोगों को पसन्द न था। उन्होंने उसे जाति से बहिष्कृत कर देना चाहा। पर राजा रतनचन्द्र जैसे प्रतापी पुरुष ने इस बात की परवाह न कर अपनी बिरादरी ही पृथक् कायम करली, जो उसके नाम से 'राजाशाही' कहाने लगी। अग्रवालों में पहले से विद्यमान कुछ गोत्रों के लोग उसके साथ सम्मिलित हुवे। राजाशाही अग्रवालों में पूरे अठारह गोत्र नहीं पाये जाते हैं—जो लोग रतनचंद्र के प्रभाव में थे, वे ही उसकी बिरादरी में शामिल हुवे थे। हम कह सकते हैं, कि राजा रतनचन्द्र भी एक 'वंशकृत्' था। उसके जमाने में भारत में छोटे राज्यों का युग समाप्त हो चुका था।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अतः उसने कोई नया राज्य तो कायम नहीं किया, पर सामाजिक क्षेत्र में एक पृथक् बिरादरी कायम की। उसकी स्थिति सामाजिक क्षेत्र में वंशकृत् की ही है।

अग्रवालों का चार व आठ मूल गोत्रों के साथ क्या सम्बन्ध है, इस प्रश्न पर विचार करते हुवे यह ध्यान में रखना चाहिये, कि अग्रवाल कश्यप की सन्तान में से हैं। कश्यप की गिनती महाभारत के चार मूल गोत्र और बौधायन के आठ मूल गोत्र—दोनों में हैं। कश्यप के चार लड़के थे—अवत्सार, असित, विवस्वान् और मित्रावरुण। विवस्वान् का लड़का मनु था। मनु के विविध पुत्रों में अन्यतम नेदिष्ट था। नेदिष्ट से नाभाग और नाभाग से वैश्य भलन्दन उत्पन्न हुवा। उसी के वंश में प्रसिद्ध वैशालक वंश तथा अन्य अनेक वैश्य वंशों का प्रादुर्भाव हुवा।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्यारहवां अध्याय

अगरोहा पर विदेशी आक्रमण

भाटों के गीतों के अनुसार सिकन्दर नाम के किसी राजा ने अगरोहा पर आक्रमण कर उसे परास्त किया था। भाट लोग बड़े विस्तार से सुनाते हैं, कि किस प्रकार सिकन्दर ने अगरोहा पर हमला किया और आपस की फूट की वजह से अग्रवाल लोग परास्त हुवे। भाट लोग उन कुमारों के नाम भी बताते हैं, जो सिकन्दर के साथ जा मिले थे। ऐसे कुमारों का मुखिया गोकुलचन्द था। युद्ध में बहुत से अग्रवाल मारे गये और उन की स्त्रियां अपने को अग्नि में भस्म कर सती हो गईं। वह स्थान जहां वीर अग्रवाल-स्त्रियों ने अपने को अग्निदेव के अर्पण किया था, अब तक भी अग्रसेन के खण्डहरों के समीप विद्यमान हैं, वहां सतियों की बहुत सी समाधें हैं, और उसके समीप ही लखी-तालाब है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जिस सिकन्दर के सम्बन्ध में भाटों की यह किंवदन्ती पाई जाती है, वह कौन था, यह निश्चित कर सकना बहुत कठिन है। सामान्यतया सिकन्दर से प्रसिद्ध मेसिडोनियन आक्रान्ता 'अलेग्ज़ेण्डर दि ग्रेट' (ईसा से पूर्व चौथी शताब्दी में) का ग्रहण होता है। पर उस के अतिरिक्त सिकन्दर नाम के दो सुलतान भारतीय इतिहास के अफ़ग़ान काल में भी हुवे हैं। संभव है, कि जिस सिकन्दर के हमले का हाल भाट लोग सुनाते हैं, वह अफ़ग़ान सुलतान सिकन्दर लोदी ही हो। पर उसके समय से बहुत पहले ही अगरोहा का ह्रास शुरू हो चुका था। अतः इस सम्भावना पर भी विचार करने की जरूरत है, कि भाटों के सिकन्दर का अभिप्राय 'अलेग्ज़ेण्डर दि ग्रेट' हो सकता है।

अलेग्जेण्डर के भारतीय आक्रमण का जो हाल ग्रीक ऐतिहासिकों ने लिखा है, उसमें भारत के उन राज्यों का नाम दिया गया है, जिनसे अलेग्ज़ेण्डर की लड़ाई हुई थी। इनमें से एक अगलस्सि (Agalassi या जिसे विविध लेखकों ने भिन्न प्रकार से Agesinae, Hiacensanae, Argesinae, Agiri, Acensoni और Gegssonae भी लिखा है) भी था।[1] शिवि राज्य को जीतने के बाद अलेग्ज़ेण्डर ने अगलस्सि पर आक्रमण किया। फ्रेंच ऐतिहासिक सां मार्ता के अनुसार अगलस्सि लोग शिवि के पूरब में रहते थे।[2]

---

1. McCrindle—Invasion of India by Alexander the Great. p. 367

2. Saint Martin—Etude. p. 115

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्रीक लेखकों द्वारा लिखे हुवे ये अगलस्सि लोग कौन थे ? इस सम्बन्ध में अनेक मतभेद हैं। मिक्रन्डल के अनुसार अगलस्सि आर्जुनायन का ग्रीक रूप है। आर्जुनायन गण का उल्लेख पाणिनि की अष्टाध्यायी और अलाहाबाद में उपलब्ध समुद्रगुप्त प्रशस्ति में मिलता है। श्रीयुत काशी प्रसाद जायसवाल ने अगलस्सि को अग्रश्रेणि से मिलाया है।[1] उन्होंने कौटलीय अर्थशास्त्र के 'वार्ताशस्त्रोपजीवि' संघों में परिगणित 'श्रेणि' को लेकर यह कल्पना की है, कि श्रेणि नामक राज्य के एक से अधिक भाग थे। जो मुख्य श्रेणि गण था, उसे अग्रश्रेणि कहते थे और ग्रीक लेखकों का अगलस्सि यही अग्रश्रेणि या मुख्य श्रेणि राज्य है। मेरी सम्मति में ये दोनों पहचानें ठीक नहीं हैं। आर्जुनायन और अगलस्सि में कोई समता नहीं है। भाषा-शास्त्र की दृष्टि से ये दोनों एक नहीं कहे जा सकते। जायसवाल जी की कल्पना बड़ी अद्भुत है। इसमें सन्देह नहीं कि श्रेणि नाम का गणराज्य प्राचीन भारत में विद्यमान था। हमने ऊपर प्रदर्शित किया है कि इस गण के वर्तमान प्रतिनिधि सैनी जाति के लोग हैं। पर अगलस्सि की पहचान करने के लिये ही श्रेणि गण के अनेक भागों की कल्पना करना और उनमें प्रधान भाग को अग्रश्रेणि कहना कुछ युक्ति-संगत नहीं प्रतीत होता।

मेरे विचार में ग्रीक लेखकों का अगलस्सि अग्रसैनीय (अग्रसेन का) या आग्रेय होना चाहिये। अगलस्सि निवासियों का नाम था और अगलस उस स्थान का। अगलस और अगरोहा में बड़ी समानता है। ल और र तथा स और ह भाषा शास्त्र की दृष्टि से एक ही हैं। यदि

1. K. P. Jayaswal—Hindu Pality, Part I, p. 73

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यह पहचान ठीक है, तो भाटों के गीत एक बहुत पुरानी ऐतिहासिक घटना का स्मरण दिलाते हैं। पर इस पहचान में एक कठिनाई भी उपस्थित होती है। यह कठिनाई अगलस्सि की भौगोलिक स्थिति के सम्बन्ध में है। इसमें सन्देह नहीं, कि अगलस्सि गण शिवि गण के पूर्व में था। पर यदि, जैसा कि सां मतों ने लिखा है, कि उन लोगों का निवासस्थान हाईडेस्पस (झेलम) और अकिसनीज (चनाब) नदियों के संगम के समीप पूर्व की ओर था, तो वे उस जगह से कुछ दूरी पर थे, जहां अब अगरोहा के खण्डहर पाए जाते हैं। पर इस सम्बन्ध में हमें यह ध्यान रखना चाहिए, कि अलेग्जेण्डर के आक्रमण का वृतान्त लिखने वाले ग्रीक ऐतिहासिकों के विवरण बहुत कुछ अस्पष्ट हैं।[1] मिक्रण्डल ने स्वयं लिखा है, कि अनेक बातों की तो संगति लगा सकना भी कठिन है। अगरोहा सतलुज नदी के पूर्व दक्षिण में है। हो सकता है, कि उस समय अगरोहा का राजनीतिक प्रभाव सतलज के पश्चिम में भी विस्तृत हो, ग्रीक वृत्तान्तों के अनुसार अगलस्सि बड़ा शक्तिशाली राज्य था। अलेग्ज़ेण्डर का उन्होंने बड़ी वीरता से मुक़ाबला किया था। कोई आश्चर्य नहीं, कि उस युग में उनका प्रभुत्व अगरोहा से पश्चिम की ओर दूर तक फैला हुवा हो। महाभारत में भी आग्रेय गण के बाद मालव गण का उल्लेख है। इसी मालव को ग्रीक लेखकों ने मल्लोइ लिखा है। अलेग्जेण्डर ने मध्य पंजाब के इस शक्तिशाली राज्य मल्लोइ या मालव को जीता। उसके बाद वह पूरब में सीधा अगलस्सि या

---

1. McCrindle, The Invasion of India by Alexander the great. p. 233

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आग्रेय पर आक्रमण कर सकता था। अगर वह ऐसा करता तो उसकी विजय-यात्रा का मार्ग महाभारत की कर्ण दिग्विजय के मार्ग से ठीक उलटा पड़ता। पर मालव के बाद उसने पहले शिवि पर आक्रमण किया, जो मालव की अपेक्षा दक्षिण में था और फिर पूरब में अगलस्सि का विजय किया। मेरी सम्मति में अगलस्सि और आग्रेय की एकता बहुत संभव है, और भौगोलिक दृष्टि से भी इसमें कोई बड़ी बाधा नहीं।

दूसरा विदेशी राजा, जिसका अगरोहा के साथ संबन्ध है, कुशान वंशी विम कैडफिसस है, जिसे पंजाब की दन्तकथाओं में रिसालू कहा गया है। उसकी राजधानी सियालकोट (प्राचीन शाकल) थी। कैप्टेन आर० सी० टेम्पल ने सियालकोट के राजा रिसालु और अगरोहा की राजकुमारी शीलो की कथा अविकल रूप से संकलित की है। कैप्टेन टेम्पल की पुस्तक में यह कथा एक सौ चौबीस पृष्ठ में है। यह संभव नहीं है, कि इस सारी कथा को यहां उद्धृत किया जाय। पर इसका संक्षिप्त सार देना उपयोगी होगा।

शीलादेवी अगरोहा के हरवंशसहाय की लड़की थी, उसका विवाह सियालकोट के राजा रिसाल के दीवान महिता के साथ हुवा था। शीला बड़ी सदाचारिणी और धर्मप्राण स्त्री थी। दोनों पति-पत्नी एक दूसरे के साथ हृदय से स्नेह करते थे। जब राजा रिसाल को मालूम हुवा कि उसके दीवान की पत्नी इतनी गुणवती है, तब वह उस पर मुग्ध हो गया। उसने चाहा कि वह स्वयं शीलादेवी के साथ विवाह कर ले। पर महिता के समीप रहते हुवे यह संभव नहीं था, कि वह अपनी इच्छा को पूर्ण कर सके। अतः राजा रिसाल ने किसी राजकीय कार्य पर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

महिता को सियालकोट से बहुत दूर रोहतासगढ़ भेज दिया। महिता को कोई भी सन्देह नहीं हुवा और वह अपनी शीलवती पत्नी शीला को अकेला छोड़कर दूर देश में चला गया। राजा रिसाल ने महिता की अनुपस्थिति से पूरा लाभ उठाया और शीला के घर में आने लगा। उसने हजार कोशिश की, कि शीला को धर्म भ्रष्ट कर अपने साथ विवाह करने के लिये राजी कर ले। पर उसकी एक न चली। शीला किसी भी तरह राजी न हुई। आखिर निराश होकर राजा रिसाल ने अपनी अंगूठी जिस पर उसका नाम खुदा हुवा था, शीला के शयनागार में छिपाकर रख दी। जब महिता रोहतासगढ़ से घर वापस आया तो एक दिन उसकी निगाह इस अंगूठी पर पड़ गई। महिता को सन्देह हो गया। शीला ने सब बात साफ साफ कह दी, पर महिता का सन्देह दूर नहीं हुवा। कई तरह से शीला की पवित्रता की परीक्षा ली गई। उसे दैवी परीक्षाओं में से भी गुजारा गया। सब में वह निष्पाप और पवित्र सिद्ध हुई। पर महिता को इतने से भी संतोष न हुवा, उसका सन्देह बना ही रहा। जब यह बात शीला के पिता हरबंससहाय को मालूम हुई, तब वह अगरोहा से सियालकोट गया और अपनी कन्या को अपने साथ लिवा लाया। महिता को इस सारी घटना से बड़ा दुःख हुवा। शीला के प्रति उसके हृदय में सच्चा प्रेम था। वह उसके वियोग को न सह सका। वह वैरागी हो गया और इधर उधर भटकता हुवा वह आखिर अगरोहा गया और वहीं निराशा और दुःख में प्राण त्याग कर दिया। जब शीला ने यह सुना, तो वह भी अपने पति के शव के साथ सती हो गई। उधर राजा रिसाल को जब यह समाचार ज्ञात हुए,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तब उसका हृदय भी पिघल गया। वह अगरोहा आया। अपने दीवान महिता के साथ उसका भी सच्चा स्नेह था। वह भी निराश होकर प्राण-त्याग करने के लिये तैयार हो गया। इन सच्चे प्रेमियों के स्नेह को देख कर गुरु गोरखनाथ वहां आये और उनकी प्रार्थना से शिव और पार्वती वहां प्रकट हुवे। उन्होंने न केवल रिसाल की रक्षा की, पर महिता और शीला को भी पुनरुज्जीवित कर दिया।

यह बात बड़े महत्व की है, कि उपर्युक्त कथा के साथ संबद्ध स्थान अब तक अगरोहा में विद्यमान हैं। रिसालू खेड़ा नामक स्थान जो अगरोहा के साथ लगा हुवा है, इसी कथा के साथ संबद्ध है। सती शीला का नाम अग्रवालों में बड़े सन्मान के साथ लिया जाता है। यह निश्चित कर सकना सुगम नहीं है, कि इस कथा में ऐतिहासिक सत्य का अंश कितना है ? पर यह निश्चित है, कि अगरोहा कुशान साम्राज्य के अन्तर्गत था और यह सर्वथा सम्भव है, कि राजा विम कैडफिसस या रिसालू का सम्बन्ध विशेष रूप से अगरोहा से रहा हो। कुशान राजाओं के अनेक सिक्के अगरोहा के खण्डहरों में मिले हैं। इससे यह संभावना और भी पुष्ट होती है।

अगरोहा पर अन्य आक्रमण तोमार व तुअँर राजपूतों व गौरी आक्रान्ताओं के हुए। इन पर हम अगले अध्याय में प्रकाश डालेंगे।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बारहवां अध्याय

अगरोहा का पतन और अन्त

साम्राज्यवाद के युग से पूर्व जब भारत में बहुत से छोटे-छोटे गण-राज्य थे, तब आग्रेय गण भी उनमें से एक था। उस पर पहला साम्राज्यवादी आक्रमण मेसीडोन के राजा सिकन्दर द्वारा हुवा। मगध व मध्यदेश के शक्तिशाली सम्राट पश्चिम में इतनी दूर तक विजय नहीं कर सके। महापद्मनन्द जैसा 'सर्वक्षत्रान्तकृत्' राजा भी इतनी दूर तक अपने साम्राज्य का विस्तार नहीं कर सकता था। उसके साम्राज्य की पश्चिमी सीमा गङ्गा तक ही थी। आग्रेय तथा पंजाब के अन्य गण-राज्यों को पहले-पहल सिकन्दर के ही आक्रमणों का सामना करना पड़ा था। हम प्रदर्शित कर चुके हैं, कि अन्य गणों के साथ आग्रेय या अगलस्सि भी सिकन्दर द्वारा परास्त हुवा और मेसिडोनियन साम्राज्य के आधीन हो

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गया। पर पञ्जाब देर तक सिकन्दर के आधीन न रहा। चन्द्रगुप्त मौर्य्य और आचार्य चाणक्य के नेतृत्व में पंजाब के विविध गणराज्यों ने विद्रोह किया और विदेशी शासन से स्वतन्त्र हो गए। पर जैसे कि ग्रीक ऐतिहासिक जस्टिन ने लिखा है,[1] कि आगे चलकर इसी चन्द्रगुप्त ने जिन राज्यों को विदेशियों की दासता से मुक्त किया था, उन्हें अपने आधीन कर लिया और इस प्रकार वह स्वाधीनता का विधायक न होकर स्वयं सम्राट हो गया।

इसमें सन्देह नहीं कि आग्नेय गण मौर्य साम्राज्य के अन्तर्गत था। चन्द्रगुप्त और अशोक जैसे शक्तिशाली सम्राटों का साम्राज्य पश्चिम में हिन्दुकुश पर्वत माला तक फैला हुवा था। पर इस विस्तृत साम्राज्य में विविध गण व संघ-राज्यों की अन्तः स्वतन्त्रता कायम रही और सम्भवतः आग्नेय गण भी नष्ट नहीं हुवा। अगरोहा का राजा दिवाकर जिसके विषय में यह किम्वदन्ती प्रचलित हैं, कि उसे श्री लोहाचार्य स्वामी ने जैनधर्म में दीक्षित किया था, संभवतः मागध-साम्राज्य का अधीनस्थ राजा ही था। भारतीय इतिहास में ईसवी सन् के प्रारम्भ होने से पांच सदी पूर्व से लगाकर ईसवी सन् के पांच सदी बाद तक का काल साम्राज्यवाद का काल है। इसमें शैशुनाग, नन्द, मौर्य, शुंग, कण्व, आन्ध्र, गुप्त आदि विविध वंशों के मागध-सम्राट भारत के बड़े भाग पर अपना एकच्छत्र साम्राज्य कायम रखने में समर्थ रहे। बीच में कुछ समय तक विदेशी कुशानों ने भी भारत पर शासन किया। मतलब यह है कि इस सुदीर्घ काल में भारत में छोटे गण-राज्य प्रायः शक्तिशाली सम्राटों

1. McCrindle, The Invasion of India by Alexander the Great. p- 327

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

की आधीनता में रहे। जब कभी कोई सम्राट निर्बल हुए, तो इस अवसर से लाभ उठाकर अपनी राजनीतिक सत्ता को पुनः स्थापित करने से भी गणराज्य चूके नहीं। केन्द्रीभाव (Centralisation) और अकेन्द्रीभाव (Decentralisation) की प्रवृत्तियों में निरन्तर संघर्ष चलता रहा। जब भी गणराज्यों को अवसर मिला, वे स्वतन्त्र हो गये। पर ज्यों ही कोई सम्राट शक्तिशाली हुवा, उसने उन्हें जीतकर पुनः अपने आधीन कर लिया। इस दीर्घकाल में अगरोहा के आग्रेय गण की भी यही गति होती रही होगी। मागध और कुशान साम्राज्यों की वह आधीनता में ही रहा होगा। गुप्त और वर्धन वंशों के क्षीण होने पर भारत में कोई एक शक्तिशाली साम्राज्य नहीं रहा। अब फिर भारत अनेक राज्यों में विभक्त हो गया। पर इस समय जो नये विविध राज्य स्थापित हुवे, उनके संस्थापक राजपूत लोग थे, जो भारतीय इतिहास के रङ्ग-मञ्च पर नवीन प्रगट हुवे थे। भारत के पुराने गण-राज्य इतनी शताब्दियों के संघर्ष तथा आधीनता के कारण अपनी राजनीतिक सत्ता खो चुके थे। उनका स्थान अब नई राजनीतिक शक्तियों ने लिया, जो राजपूत कहाती हैं। ये राजपूत कौन थे? ये उन विदेशी हूण जातियों के प्रतिनिधि थे, जिन्होंने अपने निरन्तर आक्रमण से मागध साम्राज्य को छिन्न-भिन्न कर दिया था, या भारत की कुछ ऐसी प्राचीन जातियों के वंशज थे, जिनकी राजनैतिक व सैन्य-शक्ति मागध और कुशान साम्राज्यों द्वारा नष्ट होने से रह गई थी—इस विवादास्पद प्रश्न पर विचार करने की हमें यहां आवश्यकता नहीं है। पर यह स्पष्ट है, कि तोमर या तुंअर नाम की एक राजपूत जाति से आठवीं सदी के समाप्त

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होने से पहले ही, दिल्ली तथा उसके समीपवर्ती प्रदेशों को जीतकर वहां अपना राज्य स्थापित कर लिया था। दिल्ली नगरी के सम्बन्ध में भी यह अनुश्रुति है, कि उसका निर्माण तोमारों द्वारा ही हुवा था।[1] दिल्ली में अपनी शक्ति स्थापित करने के अनन्तर तोमार राजपूतों ने अगरोहा के ऊपर आक्रमण किया था। दिल्ली पर तोमारों का अधिकार किस समय हुवा, इस सम्बन्ध में ऐतिहासिकों में मतभेद है, ईलियट के अनुसार यह अधिकार सात सौ छत्तीस ईसवी में और टाड के अनुसार सात सौ बानवें ईसवी में स्थापित हुवा था। तोमार राजपूतों ने इसके कुछ ही समय बाद अगरोहा का विजय किया। अनुश्रुति के अनुसार जिस तोमार राजा ने अगरोहा तथा उसके समीपवर्ती देश को विजय किया, उसका नाम विजयपाल था।[2]

अग्रवालों के भाट बताते हैं कि समरजीत नामक एक राजपूत राजा ने अगरोहा पर आक्रमण कर उसको विजय किया था। समरजीत किस वंश का था और किस देश का राजा था, इस सम्बन्ध में कोई सूचना भाटों की गीतों से नहीं मिलती। पर भारतीय इतिहास के राजपूत-काल में तोमार राजपूतों ने ही पहले-पहल उस प्रदेश को जीता, जिसमें

---

1. देशोऽस्ति हरियानाख्यः पृथिव्यां स्वर्ग सन्निभः।
ढिल्लिकाख्या पुरी तत्र तौमारैरस्ति निर्मिता ॥

देखो C. V. Vaidya, History of Mediacal Hindu India, Vol.III. p. 304.

देखो Cambridge History of India, Vol. III, p. 507 और 517

2, Hissar District Gazateer (History विषयक अध्याय)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अगरोहा स्थित था। दुर्भाग्यवश तुंअर राजपूतों की प्राचीन वंशावलि उपलब्ध नहीं है, और अब तक की खोज से कोई ऐसे साधन प्राप्त नहीं हुवे हैं, जिनसे तोमारों के प्रारम्भिक इतिहास का पता चल सके। अन्यथा भाट गीतों के समरजीत को पहचानना संभव हो सकता। पर यह निश्चित है, कि तुंअर व तोमार राजपूतों ने अगरोहा को विजय किया और उस पर अपना अधिकार कर लिया। इसके बाद जब चौहान राजपूतों का उत्कर्ष हुवा और उन्होंने तोमारों को परास्त कर दिल्ली तथा उसके समीपवर्ती प्रदेशों पर अपना अधिकार जमा लिया, तब अगरोहा भी तोमारों के साथ से निकल कर चौहानों के आधीन हो गया।

भारतीय इतिहास के प्रारम्भिक मध्यकाल में अगरोहा निश्चय ही तोमार और फिर चौहानों के आधीन रहा। कुछ अग्रवाल इसी काल में अगरोहा छोड़कर अन्य स्थानों पर बसने लगे। पर अगरोहा अभी उजड़ा नहीं था। अधिकांश अग्रवाल अभी अगरोहा में ही रहते थे। राजनैतिक सत्ता नष्ट हो जाने के बावजूद भी वहां उनकी अपनी बस्ती थी। दसवीं शताब्दी के अन्त में मुसलमानों के आक्रमण भारत पर शुरू हुवे। सन् एक हजार सैंतीस में महमूद गज़नवी के लड़के मसूद गज़नवी ने हांसी पर आक्रमण किया। हांसी अगरोहे के बहुत समीप है, और उन दिनों वहां एक बड़ा मशहूर दुर्ग था। मसूद ने उसका घेरा डाल दिया और उसे जीतने में समर्थ हुवा। पर अगरोहा ग़ज़नवी आक्रान्ताओं के आक्रमणों से बचा रहा।

बारहवीं सदी के अन्त में गौरी पठानों के आक्रमण शुरू हुए। इन्हीं आक्रमणों के समय में अगरोहा का वास्तविक रूप से विनाश हुवा।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शाहबुद्दीन गौरी और दिल्ली के राजा पृथ्वीराज चौहान के पारस्परिक युद्धों का वर्णन करने की यहां कोई आवश्यकता नहीं। ये युद्ध मुख्यतया दिल्ली के पश्चिम में करनाल और हिसार जिलों में ही लड़े गये थे। अगरोहा इस भयङ्कर संघर्ष के प्रभाव से नहीं बच सका। भाटों के गीत सर्वसम्मति से बताते हैं, कि गौरी आक्रान्ता ने अगरोहा पर भी हमला किया और उसे नष्ट किया। इस समय अगरोहा का वास्तविक ध्वंस हुवा और उसका पुराना वैभव उसे फिर कभी प्राप्त नहीं हुवा।

परन्तु फिर भी अगरोहा एक छोटे से नगर के रूप में विद्यमान रहा। जैसा कि हम पहले एक अध्याय में प्रदर्शित कर चुके हैं, तुग़लक-वंश के शासन काल में अगरोहा भी एक ज़िला था। परन्तु एक ज़िले का मुख्य नगर होते हुए भी अगरोहा का ह्रास रुका नहीं। इस समय यह एक पुराने खण्डहरों का ढेर मात्र ही शेष रह गया है, जिसके समीप एक बहुत छोटा सा उसी नाम का गांव अगरोहा के अतीत वैभव का उपहास सा कर रहा है। इस गांव में थोड़े से किसान बसते हैं, और आग्रेय गण का कोई भी वंशज वहां विद्यमान नहीं। पुराना अगरोहा विस्तृत खेड़े के नीचे दबा पड़ा है।

गौरी आक्रान्ताओं से अगरोहा के नष्ट किये जाने के बाद अग्रवालों ने वहां से जाकर दूसरे स्थानों पर बसना शुरू किया। अपना प्राचीन घर छोड़ कर वे उत्तरीय भारत में सर्वत्र फैलने लगे। उनका एक बड़ा भाग अगरोहा के समीप ही दक्षिण की तरफ राजपूताने में चला गया। वहां जाकर मारवाड़ में उन्होंने अपनी बस्तियां बसाई। राजपूताने के अन्य भी अनेक स्थानों पर वे गए। दूसरे अग्रवाल पूर्व और उत्तर की तरफ जाकर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दिल्ली तथा उस के आसपास के प्रदेशों में बसने लगे। धीरे धीरे वे और प्रदेशों में भी जाने लगे और इस प्रकार प्रायः सर्वत्र उत्तरीय भारत में फैल गए।

पर यह नहीं समझना चाहिए, कि शाहबुद्दीन ग़ौरी के आक्रमण से पूर्व अग्रवाल लोग अगरोहा से बाहर जाकर नहीं बसे थे। तोमारों से परास्त होजाने के बाद व उस से पहले से ही उन्होंने अन्यत्र बसना शुरू कर दिया था। बिजनौर ज़िले के मंडावर कस्बे की स्थानीय किम्वदन्ती के अनुसार सन् ग्यारह सौ चौतीस में अग्रवालों ने उस कस्बे को फिर से बसाया था। वहां पर जिस पुराने क़िले के खण्डहर मिलते हैं, वह इन्हीं अग्रवालों ने बनाया था। मंडावर एक बहुत पुरानी बस्ती है। युआन चुआङ्ग (सम्राट हर्षवर्धन के समय का प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्यूनत्सांग) ने भी इस शहर का उल्लेख किया है।[1] ऐसा प्रतीत होता है, कि बाद में यह नगर उजड़ गया था और अग्रवालों ने उसे फिर से बसाया था। अब भी मण्डावर की आबादी में अग्रवालों का मुख्य स्थान है। इसी तरह मेरठ, अलीगढ़, बनारस आदि के कई पुराने अग्रवाल खान्दानों के पास अपने पूर्वजों की वंशावलियां सुरक्षित हैं। ऐसी कुछ वंशावलियां एक हजार बरस से भी कुछ पहले तक चली जाती हैं। इन का प्रारम्भ सम्भवतः उस समय से हुवा, जब कि इनके किसी पूर्वज ने अगरोहा छोड़ कर नई जगह अपना घर बसाया था। ऐसी वंशावलियों का संग्रह बड़ा उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

1. Watters. T. On Yuan Chwang. Vol. I. p.322.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

परिशिष्ट

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अग्रवाल जाति का प्राचीन इतिहास

पहिला परिशिष्ट

महालक्ष्मी व्रत कथा

(*अग्रवैश्य वंशानुकीर्तनम्*)

[इस हस्तलिखित ग्रन्थ के पहले १२ पृष्ठ या ६ वर्के उपलब्ध नहीं हो सके हैं। कुल १२ पृष्ठ—१३ से २४ तक—प्राप्त हुवे हैं। नीचे जो श्लोक दिये जाते हैं, उनमें संस्कृत व्याकरण की अनेक गल्तियां हैं। उन्हें शुद्ध करने का प्रयत्न नहीं किया गया। ये सब अशुद्धियां मूल-ग्रन्थ में हैं। जिस महानुभाव ने अग्रवैश्यवंशानुकीर्तनम् की यह प्रति नकल की, उन्होंने सावधानी से कार्य लिया प्रतीत नहीं होता।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विषय को स्पष्ट करने के लिये हमने इसमें कहीं कहीं शीर्षक दे दिये हैं, और कुछ ऐसी पंक्तियां छोड़ भी दी हैं, जिनका प्रकरण में कोई अभिप्राय प्रतीत नहीं होता ।]

महालक्ष्मी का महात्म्य

तस्य नश्यन्ति पापानि श्री लक्ष्मी अचला भवेत्
अचिरेण जयते शत्रून् पुत्रान् पौत्रान् यशो लभेत् ॥८५
वद्दते विभवो नित्यं वशं यान्ति महीतलम्
आयुरारोग्य नितरामन्ते मोक्षमवाप्नुयात् ॥८६

राजा अग्र लक्ष्मी की उपासना के लिये गए

ततो.......गत्वा राजा पूजां समारभत्
शीर्षस्य नन्दाम् (?) आरभ्य पौर्णमासी तिथावधि ॥८७
मासपर्यन्तमकरोत् राजाग्रो विशांपतिः ॥८८

उसके पाप नष्ट हो जाते हैं, श्री लक्ष्मी उसमें अचल हो जाती है। वह शीघ्र ही शत्रुओं को जीत लेता है, वह पुत्र, पौत्र और यश को प्राप्त करता है, वह सदा धनी व वैभवपूर्ण रहता है, और अन्त में वह मोक्ष को प्राप्त कर लेता है। (८५–८६)

विशों के स्वामी राजा अग्र ने (इस लक्ष्मी की) पूजा का मार्गशीर्ष मास की प्रथमा के दिन प्रारम्भ किया, और मार्गशीर्ष पूर्णिमा तक पूरे एक मास तक पूजा की। (८७–८८)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

देवी महालक्ष्मी प्रगट हुई

मासान्ते पौर्णमासीषु तारापत्युदये सति

आविर्भूता महालक्ष्मी कोटिचन्द्र समा द्युतिः ॥८६

उवाच मधुरा वाणी साधूनामभयंकरी

श्री उवाच

वरं ब्रूहि महाराज यस्ते मनसि वर्तते

ददाम्यद्यैव सकलं तव पूजा प्रतोषिता ॥६०

राजोवाच

यदि देहि वरं देवि शक्रं मम वशं नय ॥६१

श्री उवाच

तव कुलं न विमोक्ष्यामि यावच्चन्द्रदिवाकरौ

एक मास पूर्ण होने पर पूर्णमासी के दिन जब चन्द्रमा का उदय हो गया, तो देवी महालक्ष्मी प्रगट हुई, उसकी द्युति करोड़ चन्द्रमाओं के समान थी। ८९

उस महालक्ष्मी ने अपनी ऐसी मधुर वाणी से, जो सत्पुरुषों के लिये अभयंकर थी,इस प्रकार कहा—

'हे महाराज, वह वर मांगो, जो तुम्हारे हृदय में है।'

राजा ने कहा—

'हे देवि, यदि वर देती हो, तो इन्द्र को मेरे वश में ले आओ।'

लक्ष्मी ने कहा—

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वशं भवतु ते शक्रो सदेवो बलवाहनः ॥९२

आधार अभवत्येषा कथाममुतवान्विता (?)
भुवि येषां गृहे पूजा लिखिता चापि पुस्तकी (?) ॥९३

तदहं न विमोक्ष्यामि यावती पृथिवीमिमा
[प्रसादं च स्वयं भुक्त्वा नान्यस्मै प्रतिपादयेत् ॥९४

विप्रान् भोजयेत् विद्वान् श्रीरजं भालके दधन्
यस्य गेहे भवेत् पूजा तस्य दारिद्रयनाशनम् ॥९५

शत्रुरोग भयं नास्ति कुलकीर्ति प्रवर्धनम् ।]
पुत्र पौत्र कुलैः सार्धं भुंक्ष्व राज्यमकण्टकम् ॥९६

'जब तक चन्द्र और सूर्य हैं, मैं तेरे कुल को नहीं छोड़ूंगी। सब देवताओं, सेना तथा वाहन के साथ इन्द्र तेरे वश में हो जावे।'

इस संसार में जिनके घर में (लक्ष्मी की) पूजा होती है, या जिन के पास (इस पूजा की) पुस्तिका भी है, उन के मैं सदा साथ रहूंगी। जब तक यह पृथ्वी है, मैं उन्हें न छोड़ूंगी। ९३-९४

[(लक्ष्मी पूजा का) प्रासाद पहले स्वयं खाकर फिर दूसरे को न दे। विद्वान पुरुष को चाहिए कि अपने मस्तक पर लक्ष्मी की रज धारण कर ब्राह्मणों को भोजन करावे। जिस के घर में लक्ष्मी पूजा होती है, उस का दरिद्र नष्ट हो जाता है। उसे शत्रु या रोग का भय नहीं रहता, उस की कुल तथा कीर्ति बढ़ती है। ९४-९६]

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सदेहेन च गोलोकमन्ते यास्यसि निश्चितम् ।
ध्रुवस्थ पूर्वे द्वीतारौ (?) भविष्ये च प्रिया सह ॥९७
अवतारो नागराजस्य अस्ति कश्चिन्महीरथः
कोलविध्वंसि भूपस्य कन्यका वामलोचना ॥९८
तासां गृहणीश्व पाणीश्च त्वदर्थे तपसि स्थिता
तासां पुत्रैश्च मही व्याप्ता भविष्यति
यथा तारागणैर्व्योम शतचन्द्रैर्विरोचते ॥९९

महालक्ष्मी अन्तर्धान होगई और राजा कोलपुर की ओर गया

इत्युक्त्वान्तर्दधे लक्ष्मी राजा पूर्णमनोरथः
प्रणाम्य दण्डभृत् भूमौ राजा स्वनगरं ययौ ॥१००

तू पुत्र, पौत्र तथा अपने कुल के साथ बिना किसी बिघ्न बाधा के राज्य का भोग कर, और फिर सदेह स्वर्ग लोक को प्राप्त हो । स्वर्ग लोक में तेरी पत्नी भी तेरे साथ रहे । ९६-९७

नागराज का अवतार महीरथ नाम का एक राजा है, कोल का विध्वंस करने वाले उस राजा की कन्यायें अत्यन्त सुन्दर हैं । तू जाकर उनका पाणि ग्रहण कर, वे तेरे लिए ही तपस्या कर रही हैं । उनके पुत्रों से यह पृथ्वी वैसे ही व्याप्त हो जावेगी, जैसे कि यह आकाश तारों के समूह तथा सैकड़ों चन्द्रमाओं से शोभायमान होता है । ९८-९९

यह कह कर लक्ष्मी अन्तर्धान हो गई और राजा का मनोरथ पूर्ण हो गया । पृथ्वी पर दण्डवत् प्रणाम कर वह दण्डधर राजा अपने नगर की ओर वापिस हुवा । १००

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पथि कोलपुरं दृष्ट्वा राजा यत्र महीरथः
तग्देहे सर्वराजानो विवाहार्थं समागताः ॥१०१
सिंहासनस्थिताः सर्वे रंगभूमौ महोत्सवे
अग्रोऽपि तत्र निवसल्लक्ष्मीवाचानुदीरितः ॥१०२
एतस्मिन्नन्तरे कन्या सर्वा (?) वामलोचना
जयमालामग्रग्रीवायाम् अर्पयामास प्रेमतः ॥१०३
नदत्सु राजतूर्येषु पश्यत्सु सर्वराजसु
विवाह मकरोत् राजा वैशाखे मृगमाधवे ॥१०४
........अददत् राजा गजाश्व रथ भूरिशः
पादाति दास दासीश्च स्वर्णरत्न परिच्छदान् ॥१०५
आदाय स गतो राजा सागरेव पयोनिधिम्

मार्ग में कोलपुर देखा, जहां कि महीरथ राजा था। उस के घर पर सब राजा लोग विवाह के लिए आए हुए थे। वे सब महान् उत्सव में रंगभूमि में ऊंचे ऊंचे सिंहासनों पर विराजमान ये। राजा अग्र भी वहां ही बैठ गया, जैसा कि उसे लक्ष्मी के वचन से प्रेरणा हुई थी। १०१-१०२

इस बीच में, सुन्दर आंखों वाली कन्या ने जयमाला प्रेम के साथ अग्र की ग्रीवा में अर्पित की। उस समय राजकीय तुरहियां बज रहीं थीं। और सब राजा देख रहे थे। वैशाख मास में मृग (नक्षत्र) के समय राजा का विवाह हुवा। १०३-१०४

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शूरसेने गते देशे वैश्यनाथे शचीपतिः ॥१०६
नारदात् सर्वमाश्रुत्य कारणं पूर्वभाषितम्
ऐरावतं समारूढः सन्ध्यर्थे सह नारदः ॥१०७
दृष्ट्वा तपोनिधिं नत्वा प्रपूज्य प्रसृतोऽब्रवीत्
ब्रह्मर्षे ! अनुजानीहि मानवानुचरं परम् ॥१०८
करोमि मनसा वाचा कर्मणा तेऽनुशासनम् ।

नारद उवाच

सन्धिं कुरु त्वमिन्द्रेण वृथा द्रोहेण भूपते

राजा (महीरथ ने) बहुत से हाथी, घोड़े, रथ, पदाति, दास, दासी, स्वर्ण, रत्न, उत्तम वस्त्र, आदि प्रदान किये । जिस प्रकार सागर महासमुद्र की ओर जाता है, वैसे ही इन सब (उपहारों) को लेकर राजा वापिस चला गया । १०५-१०६

जब वैश्यों का स्वामी (राजा अग्र) शूरसेन देश को चला गया, तो शची पति (इन्द्र) ने यह सब वृत्तान्त नारद से सुना । ऐरावत पर चढ़ कर सन्धि के लिये वह नारद के साथ आगया । १०६-१०७

तपोनिधि (नारद) को देख कर राजा ने उसे प्रणाम किया, और उसकी भलीभांति पूजा सत्कार कर उसे कहा— 'हे ब्रह्मर्षे ! मुझे आप पूरी तरह अपना सेवक समझें । जो कुछ आप आज्ञा करेंगे वह मन, वचन, कर्म से पालन करूंगा ।' १०८-१०९

नारद ने कहा—

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तथा कृत्वा स सभामध्ये शक्रम्....आनयत् ऋषिः ॥१०६
आलिङ्ग्य चाप्सरां दत्त्वा सुन्दरीं मधुशालिनीम्
अर्हयामास विधिना ययौ स्वर्गं च नारदः ११०

राजा अग्रसेन पुनः लक्ष्मी पूजा के लिये यमुना तट पर गये

राजा राज्ञीं समाहूत्य नागकन्यां यशस्विनीम्
पूर्वां प्रवहणास्थां च सार्धसप्तदशैः सह ॥१११
तावदराये....सुतपसा तोषयतां हरिम्
श्वासैश्च निराहारैः यमुनोपवने वसन् ॥११२
(ऋषिना महदैसेन पड् उर्मीरहितेन च
तोगस्स उवाचेदं हरिश्चन्द्रं महीपतिम् ॥११३

तुम इन्द्र के साथ सन्धि कर लो, वृथा द्रोह से क्या लाभ है ?

यह कह कर वे ऋषि (नारद) सभा के बीच में शक्र (इन्द्र) को लाये। वहां (अग्र) ने उन का आलिंगन किया, और सुन्दरी, मधुशालिनी अक्षरा (?) देकर उनकी भलीभांति पूजा की। यह सब कर के नारद मुनि स्वर्ग को चले गये। १०९-११०

राजा (अग्र) अपनी मुख्य रानी यशस्विनी नागकन्या को लेकर सब साढ़े सतरह (रानियों) के साथ प्रवहण (नौका) पर आये और यमुना नदी के तट पर एक जङ्गल में तपस्या, श्वास (-निग्रह) तथा निराहार व्रत द्वारा हरि को सन्तुष्ट करना शुरू किया। १११-११२

[तोग ने इस प्रकार राजा हरिश्चन्द्र को कहा—तू भी यही पूजा कर, जा और अपना राज्य फिर प्राप्तकर। ऋषि के साथ तेरी फिर प्रीति

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

त्वं चापि कुरु तां पूजां याहि राज्यमवाप्नुहि
प्रीतिर्भवतु ऋषिणा ग्रायोध्यां पुनरेष्यसि ॥११५

अथ सन्मार्गमुद्दिश्यागात् तोगः स्वमालयम्
तथा कृत्वा महीपस्तु ययौ राज्यस्थलीं शुभाम् ॥११५)

श्रीकृष्ण उवाच

अथ ते कथितं राजन् व्रतानां व्रतमुत्तमम्
यत्कृत्वा श्री हरिश्चन्द्रो लेभे सौख्यं श्रियं निजाम् ॥११६

श्रिय चेदिच्छसि परां धनधान्ययशः सुतान्
तत्कुरुष्व महाबाहो व्रतमेतत् स्वबन्धुभिः ॥११७

मयाप्येतत् व्रतं राजन् क्रियते भक्तितस्सदा
नरेशेसु भाग्यवान् सोऽपि आर्यावर्ते भविष्यति ॥११८

हो जावे। तू फिर अयोध्या चला जावे। इस तरह सन्मार्ग का उपदेश कर तोग अपने घर चला गया। राजा (हरिश्चन्द्र) ने ऐसा ही किया और वह फिर अपनी शुभ राजधानी को चला गया। ११३-११५

हे राजन्! मैंने तुम्हें सब व्रतों में उत्तम व्रत का कथन किया है, जिसे करके श्री हरिश्चन्द्र ने सौख्य और अपनी श्री को प्राप्त किया था। यदि तुम भी उत्कृष्ट श्री, धन, धान्य, यश और पुत्रों की इच्छा करते हो, तो हे महाबाहो! तुम भी अपने बन्धुवों के साथ इस व्रत का पालन करो। मैं भी, हे राजन्! यह व्रत सदा भक्ति के साथ करता हूँ। ११६-११८

जो कोई राजाओं में (इस व्रत को करेगा), वह आर्यावर्त में

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्राप्त सौभाग्य हीनास्ते करिष्यन्ति व्रतं न ये
धन पुत्र सुखैर्हीना जन्मजन्मान्तरे सदा ॥११६

आदिश्य श्रीव्रतं कृष्ण अनुज्ञाप्य च पाण्डवान्
जगाम रथमारूढो माधवः स्वकुशस्थलीम् ॥१२०
राजा तथाविधिं कृत्वा हस्तिनापुरमाययौ ।

शौनक उवाच

ततः किमकरोत् राजा सूत ब्रूहि तपोनिधे ॥ १२१

सूत उवाच

युगद्वयं तपस्तेपे कालिन्दी कलकानने

भाग्यवान होगा। जो यह व्रत नहीं करते, वे सौभाग्य से रहित हैं, वे जन्म जन्मान्तर में भी धन, पुत्र तथा सुख से हीन होते हैं। ११८-११९

इस लक्ष्मीव्रत का पाण्डवों को अनुज्ञापन करके कृष्ण अपनी कुशस्थली में चले गये। राजा (पाण्डव) भी विधिपूर्वक यह व्रत कर के हस्तिनापुर चले आये। १२०-१२१

शौनक ने कहा—

हे तपोनिधे ! सूत ! यह बताओ, कि तब राजा (अग्र) ने क्या किया ? १२१

सूत ने कहा—

उसने यमुना के सुन्दर तट पर दो युग तक तपस्या की। उसके बाद सम्पूर्ण वन के मध्यभाग को प्रकाशित करती हुई देवी (लक्ष्मी)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ततो आविरभवत् देवी द्योतयन्ती वनांतरम् ॥ १२२

उवाच मधुरा वाणी प्रीता लक्ष्मी दयान्विता

श्री उवाच

तपसो विरमतां राजन्·······वैश्यवंश····॥ १२३

गार्हस्थ्यस्थमनौपम्यं धर्मं विद्धि सनातनम् ॥ १२४

आश्रमाः सर्ववर्णाश्च गृहस्थे हि व्यवस्थिताः

कुरु त्वमाज्ञया तुभ्यं दास्यामि सकलाधिकाम् ॥ ११५

तव वंशे मही सर्वा पूरिता च भविष्यति

तव वंशे जातिवर्णेषु कुलनेता भविष्यति ॥ १२६

अद्यारभ्य कुले···तव नाम्ना प्रसिध्यति

अग्रवंशीया हि प्रजाः प्रसिद्धाः भुवन त्रये ॥ १२७

प्रगट हुई । दया से पूर्ण, प्रसन्न हुई लक्ष्मी ने मधुर वाणी से इस प्रकार कहा । १२२-१२३

लक्ष्मी ने कहा—

हे राजन् ! हे वैश्य वंश के (प्रकाश) ! इस तप को बन्द करो । गृहस्थ धर्म बड़ा अनुपम है, इस सनातन धर्म को समझो । सब आश्रम और सब वर्ण गृहस्थ में ही व्यवस्थित हैं । तुम मेरी आज्ञा के अनुसार करो, मैं तुम्हें सब वैभव, ऋद्धि प्रदान करूंगी । १२३-१२५

यह सारी पृथिवी तेरे वंश से पूरित होगी । तेरे वंश में सब जाति और वर्णों के कुल नेता होंगे । आज से लगाकर यह कुल तेरे नाम से प्रसिद्ध होगा । अग्रवंशी प्रजा तीनों लोकों में प्रसिद्ध होगी । १२६-१२७

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भुजा प्रसादं तव वसेत् नान्यस्मै प्रतिदापयत् (?)
येन सा सफला सिद्धिर्भूयात् तव युगे युगे ॥ १२८
मम पूजा कुले यस्य सोऽग्रवंशो भविष्यति
इत्युक्त्वान्तर्दधे लक्ष्मी समुद्दिश्य महावरम् ॥ १२६

अग्रसेन ने अग्रनगर की स्थापना की

हरिद्वारात् पश्चिमायां दिशि क्रोश चतुर्दशे
गंगा यमुनयोर्मध्ये पुण्य पुण्यांतरे शुभे
चक्रे चाग्रानगरं यत्र शक्रो वश गतः ॥ १३०
द्वादश योजन विस्तीर्णाम् आयतं·······शुभम्
द्वापरस्यांतकालेषु कलावादि गते सति । १३१
अकरोद्वंशविस्तारं ज्ञातीन् संवर्धयन् ततः

तेरी भुजाओं में सदा प्रसाद रहे। इससे युग-युग में तेरी सब सिद्धि सफल होवे। जिस कुल में सदा मेरी पूजा होती है, ऐसा वह अग्रवंश है। १२८-१२९

ऐसा कहकर, यह महान् वर देकर लक्ष्मी अन्तर्धान हो गई। महालक्ष्मी के प्रसाद से कभी आयु की हानि नहीं होने पाती। १२९

हरिद्वार से पश्चिम की ओर चौदह कोस की दूरी पर, गङ्गा यमुना के बीच में अत्यन्त पुण्य स्थान पर, उस जगह पर जहां कि शक्र को वश में किया था, (राजा ने) अग्रानगर की स्थापना की। १३०

यह नगर द्वादश योजन विस्तीर्ण और बड़ा शुभ है। उस समय द्वापर का अन्त हो चुका था और कलि का प्रारम्भ हो गया था। वहां

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कोटिं कोटिं च·······मुद्रास्तत्र निवेशयत् ॥ १३२

प्रसादमाला सुखदा वीथिकाश्च चतुष्पथाः

वाटिकाः पुष्पवाटीश्च सरः पंकज शोभितम् ॥ १३३

देवमंदिर वापी च गोपुर द्वारशोभिताः

पारावतैः सारसैश्च हंसैः शाटिक मयूरकैः

कल कोकिल गणैस्तत्र नाना·······विराजते

प्रसून माला फल पल्लवैः·······द्रुमाः ॥ १३४

पुरी विशाला गजवाजिशोभिता

सुवर्ण रत्नाभरणादि संकुला

प्रभूतयज्ञैः धनधान्यपूरिता

(राजा ने) अपने वंश का विस्तार किया और ज्ञातियों का सब प्रकार से संवर्धन किया। वहां करोड़ों मुद्रायें लगाई गईं। १३१-१३२

बड़े सुखदायक महलों की पंक्तियां बनाई गई, गलियां, चतुष्पथ (चौराहे), बाग, फूलों के बगीचे, कमलों से सुशोभित तालाब, देव-मन्दिर, बावड़ियां आदि बनवाई गई। वे गोपुर और द्वार से सुशोभित थीं। पारावत, सारस, हंस, शाटिका, मयूर, कोकिल आदि सुन्दर विविध पक्षियों के समूह वहां विराजते थे। वृक्ष फूलों,फलों तथा पत्तों से सुशोभित थे। १३३-१३४

वह विशाल पुरी हाथी घोड़ों से शोभित है, सुवर्ण, रत्न, आभरण आदि से परिपूर्ण है, वहां बहुत यज्ञ होते हैं, वह धनधान्य से भरी हुई

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यथेन्द्रदेवैर्भुवि चामरावती ॥१३५

नगरे मध्यदेशे च महालक्ष्म्यालयं शुभम्

तन्मध्ये कमलादेवीं पूजयेन्निशिवासरम् ॥१३६

सार्धसप्तदशैर्यज्ञैस्तोषयेन् मधुसूदनम्

एकदा यज्ञमध्ये तु वाजिमांसोऽब्रवीन्नृप ॥१३७

न मांसैर्जय वैकुण्ठं मद्येन दयानिधे

उभाभ्यां रहितो जीवो न हि पापेन लिप्यते ॥१३८

इसके अनन्तर राजा अग्रसेन के पुत्रों का वर्णन है—

अग्र पुत्रान् अमी वेद यज्ञादष्टादश कन्यका ॥

रूपवन्तः गुणाढ्याश्च धनधान्यप्रसंकुलाः ॥१३९

है, मानो इन्द्रदेव की अमरावती ही पृथिवी के ऊपर आ गई हो। १३५

उस नगर के ठीक मध्य देश में महालक्ष्मी का शुभ मन्दिर बनवाया गया, जिसमें देवी लक्ष्मी की रात दिन पूजा होती है। १३६

साढ़े सतरह यज्ञों से मधुसूदन (विष्णु) संतुष्ट किया। एक बार यज्ञ के बीच में घोड़े के मांस ने इस प्रकार कहा—'हे राजन्! मांस तथा मद्य द्वारा स्वर्ग को जय मत करो। हे दयानिधे! इन दोनों चीजों से रहित जीव कभी पाप से लिप्त नहीं होता।' १३७–१३८

अग्र की सन्तानों को इस प्रकार समझो, जो पुत्र व अठारह कन्यायें यज्ञ द्वारा हुईं थीं, वे सब रूपवान्, गुणों से परिपूर्ण तथा धन धान्य से समृद्ध थे। उनमें से कोई धन से रहित नहीं था, कोई सन्तान से रहित

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नाधना: नाप्रजा: सर्वे देवद्युति विभूषिता:
उदारा: कीर्तिर्विमला वारग्गोन्द्रसमा: भुवि ॥१४०
मित्रा चित्रा शुभा शीला शिखा शान्ता रजा चरा
शिरा शची सखी रम्भा भवानी सरसा समा ॥
माधवी प्रमुखाश्चैव महिष्य: सार्धसप्तका: ।
दशोत्तरा: शुभा: राज्ञ: तासां पुत्रास्तथा त्रय: ॥
तावग्दोत्रा: समाजाता: व्यहृता: विविधाध्वरं
गर्ग गोयलगावालो वात्सिल: कासिलस्तथा
सिंहलो मंगलश्चैव भंदलो तित्तलोऽपि च ॥
एरणो धेरणश्चापि ढिंगलस्तिंगलस्तथा
गोभिलो मीतलो तायलस्तुन्दलस्तथा ॥
गवनार्धश्च गोत्राणां सार्धसप्तदशोत्तरा: ॥१४१

नहीं था। सब दैवी द्युति से विभूषित थे। वे सब उदार तथा निर्मल कीर्ति वाले थे, मानो पृथिवी पर देवताओं के समान थे। १३६–१४०

(राजा अग्र की) साढ़े सतरह रानियां ये थीं—मित्रा, चित्रा, शुभा, शीला, शिखा, शान्ता, रजा, चरा, शिरा, शची, सखी, रम्भा, भवानी, सरसा, समा, माधवी। माधवी इनमें प्रमुख थी।

इन सब के तीन तीन पुत्र हुवे। इनके इतने ही (साढ़े सतरह ही) गोत्र हुवे, जो यज्ञों से प्रारम्भ हुवे थे। (गोत्रों के नाम ये हैं—) गर्ग, गोयल, गावाल, वात्सिल, कासिल, सिंहल, मंगल, भंदल, तित्तल,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विभुर्विरोचनो वाणी पावकोऽनिल केशवाः
[सत्यं च धर्मं च युग....च
भूतानुकम्पां प्रियवादितां च
द्विजाति सेवातिथि पूजनं च
वैकुण्ठ....मुनिनारदोक्ताः]
विशालरक्तौ धन्वी च धामापामा पयोनिधिः
कुमारो दवनो माली मन्दोकनकुण्डलौ ॥१४२
कुशो विकाशो विरणो विनोदो वपुनो बली
वीरो हरो रवो दन्ती दाडिमीदन्तसुन्दरौ ॥१४३
करो खरो गरः शुभ्रः पलशोनिलसुन्दरौ

एरण, धेरण, ढिंगल, तिंगल, गोभिल, मीतल, तायल, तुन्दल। आधा गोत्र गवन है। ये साढ़े सतरह गोत्र हैं। १४१

[सत्य, धर्म, भूतों पर दया, प्रिय भाषण, द्विजातियों की सेवा और अतिथियों की सेवा—ये बातें स्वर्ग की (साधिका) हैं, ऐसा मुनि नारद ने कहा है।]

(अग्र के पुत्र निम्नलिखित हैं—) विभु, विरोचन, वार्णी, पावक, अनिल, केशव, विशाल, रक्त, धन्वी, धामा, पामा, पयोनिधि, कुमार, दवन, माली, मन्दोकन, कुण्डल, कुश, विकाश, विरण, विनोद, वपुन, बली, वीर, हर, रव, दन्ती, दाडिमीदन्त, सुन्दर, कर, खर, गर, शुभ्र, पलश, अनिल सुन्दर, धर, प्रखर, मल्लीनाथ, नन्द, कुन्द, कुलुम्बक,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

धनप्रखरो मल्लीनाथो नन्दो कुन्दः कुलुम्बकः ॥१४४

कान्तिः शान्तिः क्षमाशाली पथ्यमाली विलासदः

कुमारौ द्वौ पुत्रीश्च शृणु सौनक वच्मि ते ॥१४५

दया शान्तिः कला कान्तिः तितिक्षा चाधरामला

शिखा मही रमा रामा यामिनी जलदा शिवा ॥१४६

अमृता अर्जिका पुण्याष्टादश सुताः शुभाः

त्रीन् त्रीन् पुत्रान् सुतैकैका सर्वास्त्वग्रसमुद्भवाः ॥१४७

तेषु तेषु त्रयः पुत्राः पौत्राः तावच्च पौतृकाः

तैस्सार्धं स भुजे राज्यं कलौ चाष्टाधिकं शतम् ॥१४८

कान्ति, शान्ति, क्षमाशाली, पथ्यमाली, और विलासद तथा अन्य दो कुमार। १४२,१४५

हे सौनक! अब मैं पुत्रियों को कहता हूँ, वह भी सुनो—दया, शान्ति, कला, कान्ती, तितिक्षा, अधरा, अमला, शिखा, मही, रमा, रामा, यामिनी, जलदा, शिवा, अमृता, और अर्जिका—ये पुण्यरूप शुभ अठारह कन्यायें थीं। १४६,१४७

प्रत्येक रानी के तीन तीन पुत्र और एक एक कन्या हुई, ये सब अग्र की ही सन्तान थे। इन सब से तीन तीन पुत्र, पौत्र तथा प्रपौत्र हुवे। उन सब के साथ (राजा अग्र ने) कलि के १०८ वर्ष बीतने तक राज्य का उपभोग किया। १४७-१४८

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गौडं पुरोहितं कृत्वा वेदविद्यातपोनिधिम्
अनायासेन पृथिवीं जित्वा कीर्तिमवाप्नुयात् ॥१४६

राजा अग्रसेन ने राज्य छोड़कर विभु को राज्य में अभिषिक्त किया

अथैकदा तु पूजायां लक्ष्मी तमुदीरयत्

लक्ष्मी उवाच

राजन् पाहि स्वधर्मं त्वं पुत्रं देहि नृपासनम् ॥१५०
वैशाखे पौर्णमास्यां वै विभुं राज्येभिषिच्य च
राजसिंहासने स्थित्वा वैश्यविप्रगणैर्वृतः ॥१५१
ज्ञातीन् सर्वान् अनुज्ञाप्य ययौ सः भार्यया सह
पञ्च गोदावरी यत्र यत्र ब्रह्मसरः शुभम् ॥१५२

गौड़ को अपना पुरोहित बनाया, जोकि वेद विद्या तथा तपका निधि रूप था। बिना किसी श्रम के पृथिवी को जीत कर उसने कीर्ति को प्राप्त किया। १४९

एक बार पूजा में लक्ष्मी ने उसे (राजा अग्र को) कहा — 'हे राजन्! तुम अपने स्वधर्म का पालन करो। पुत्र को अब राजसिंहासन प्रदान करो।' १५०

वैशाख मास की पूर्णमासी को विभु को राज्याभिषिक्त कर स्वयं वैश्यों तथा ब्राह्मणों के समूह से घिरा हुवा सब कुटुम्बी जनों से अनुमति लेकर वह अपनी पत्नी के साथ बन को चला गया, जहां पंच गोदावरी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तत्र भूरिस्तपस्तेपे गोलोकं परतः परम्
जगाम....सस्त्रीकः कमलाज्ञया ॥१११५

राजा अग्रसेन के उत्तराधिकारी—

विभुस्तु राज्यमकरोत् पैत्र्यं च नव········
········लक्षं ददौ मुद्रां ज्ञातो दारिद्र्यमागते ॥ १५६
शतवर्षगते राज्ञे पुत्रं नेमिरथं तथा
अभिषिच्य गतो मृत्युं गता राज्ञी हुताशनम् ॥ १५७
विमलः शुकदेवश्च तस्य पुत्रो धनञ्जयः
तस्य श्रीनाथ पुत्रोऽभूत् श्रीनाथस्य दिवाकरः ॥ १५८
दिवाकरो जैनमते शिखिनं पर्वतं गतः

तथा ब्रह्मसर है, वहां जाकर उसने बहुत तप किया तथा लक्ष्मी की आज्ञा से सदेह तथा सस्त्रीक स्वर्गधाम को गया । १५३-१५५

विभु ने अपने पिता के राज्य का शासन किया। जब कोई कुटुम्बी दरिद्र होजाता था, तब उसे वह लाख मुद्रायें देता था। १५६

सौ वर्ष बीत जाने पर जब वह अपने पुत्र नेमिरथ को राज्य में अभिषिक्त कर चुका, तो उस की मृत्यु हुई, और उसके साथ ही उसकी रानी ने भी अग्नि में प्रवेश किया। १५७

फिर विमल, शुकदेव, फिर उस का लड़का धनञ्जय—ये (राजा) हुवे। उसका पुत्र श्रीनाथ हुवा। श्रीनाथ का (पुत्र) दिवाकर हुवा। १५८

दिवाकर जैन मत में (गया), उसने पर्वतशिखर पर जाकर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तन्मतं पालयामास जनैः सर्वं गणैः वृतः ॥ १५६

अथो सुदर्शनो राजा पुत्रान्‌ ··· नृपासनम्‌
गतो वाराणसी तीर्थे सन्यासेन जहौ तनुम्‌ ॥ १६०

श्रीनाथस्य महादेवः तत्पुत्रस्तु यमाधरः
तस्यासीत्‌ ··· शुभांगो मलयो वसुः ॥ १६१

वसोर्दाशीदशा (?) पुत्राः शाखास्तस्याष्टधाभवन्‌
मलयस्य कवेर्नन्दो विरागी चन्द्रशेखरः ॥ १४२

यस्याग्रचन्द्रोऽभूत्‌ यस्मात्‌ राज्यं ··· कलौ
यत्पुत्रपौत्रवंश्यैश्च सुखी स्यान्नगरः सदा ॥१६३

जैनों के समूह से घिरा रह कर जैन मत का पालन किया। १५९

उसके अनन्तर सुदर्शन राजा हुवा। उसने पुत्रों को सिंहासन पर (बिठाकर) स्वयं वाराणसी तीर्थ में जाकर सन्यास द्वारा शरीर त्याग किया। १६०

श्रीनाथ का महादेव, उसका लड़का यमाधर, उसका शुभांग, फिर मलय और वसु हुवे। १६१

वसु के दाशीदश (?) (अनेक) पुत्र हुवे, जिनसे आठ शाखायें होगई। मलय कवि के नन्दी, फिर विरागी चन्द्र शेखर हुवा। १६२

उसके अग्रचन्द्र हुवा। जिससे कलि में राज्य......। उसके पुत्र, पौत्र तथा वंशजों से नगर सदा सुखी रहे। १६३

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इति श्री लक्ष्मी पूजा मया प्रोक्ता तव सन्निधौ
अग्रो अग्रहने मासे कृत्वागात् हरिमन्दिरम् ॥१६४

लक्ष्मीपूजा का माहात्म्य

ब्रह्मघाती सुरापायी····पतितस्तथा
गोत्रद्रोही कुलच्छेदी मिथ्याचारी च पातकः ।
पवित्रो भवति सततं लक्ष्मीपूजा कृतं मति ॥१६५
····भयं नास्ति महापापस्य का कथा
अपुत्रो लभते पुत्रान् बद्धो मुच्येत बन्धनात्
रोगी भीतो भयाच्चैव सर्वंजीववशं नयेत् ॥१६६
इति श्रीभविष्यपुराणे लक्ष्मीमाहात्म्ये केदारखण्डे अग्रवैश्य वंशा-

---

श्री लक्ष्मी की यह पूजा मैंने तुम्हारे पास कही है । इसे अगहन मास में सम्पादित करके अग्र हरिमन्दिर को गया था । १६४

चाहे कोई ब्रह्मघाती हो, सुरा पीने वाला हो, पतित हो, गोत्र (कुल) का द्रोही हो, कुल का विनाश करने वाला हो, मिथ्याचारी हो, पातक हो, वह लक्ष्मी की पूजा कर लेने पर पवित्र होजाता है । उसे किसी का भी भय नहीं रहता, महा पातक की तो बात ही क्या है ? जिसके पुत्र न हो, उसे पुत्र होजाता है । जो बद्ध हो, वह बन्धन से छूट जाता है । रोगी और भीत भय से छुटकारा पाजाता है । सब प्राणी उसके वश में आजाते हैं । १६५-१६६

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नुकीर्तनं नाम षोडषोऽध्यायः ॥१६ समाप्तम् ।

शुभमस्तु संवत् १६११ चैत्रस्य द्वादश्यां गुरुवासरे ।

यह भविष्यपुराण में, लक्ष्मी माहात्म्य प्रकरण में, केदारखण्ड में अग्रवैश्यवंशानुकीर्तन नाम का सोलहवां अध्याय है ।। १६ समाप्त हुवा ।

शुभ हो । संवत् १९११ चैत्र मास की द्वादशी के दिन गुरुवार को ।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

टिप्पणी

(१)

महालक्ष्मीव्रतकथा या अग्रवैश्यवंशानुकीर्तनम् में जिस राजा की लक्ष्मीपूजा की कथा उल्लिखित है, उसका नाम 'अग्र' दिया गया है। अग्रसेन नाम उसमें नहीं है। इससे सूचित होता है, कि राजा अग्रसेन को केवल 'अग्र' भी कहते थे। सम्भवतः, उसका असली नाम अग्र ही था। अग्रसेन नाम बाद का है। यही कारण है, कि उसने जो अपना पृथक् वंश चलाया, वह अग्रवंश कहाया। उसके गणराज्य का नाम भी 'आग्रेय' पड़ा। इस संस्कृत ग्रन्थ में केवल 'अग्र' नाम होना महत्व की बात है। जो लोग यह युक्ति करते हैं, कि अग्रसेन द्वारा स्थापित गण-राज्य का नाम 'अग्रसेनिय' होना चाहिये, आग्रेय नहीं, उनकी शंका का समाधान इस बात से हो जाता है। पाणिनि की अष्टाध्यायी में भी केवल 'अग्र' का उल्लेख आता है। असली पुराना नाम 'अग्र' ही प्रतीत होता है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(२)

महालक्ष्मीव्रतकथा में राजा अग्र द्वारा स्थापित नगरी का नाम 'अग्रा' दिया गया है। यह बात भी बड़े महत्व की है। 'अग्रा' नाम राजा अग्र ने अपने नाम पर ही रखा। आग्रेय शब्द इस 'अग्रा' से ही बना। 'अग्रा' के निवासी 'अग्रायां भवः' अर्थ में आग्रेय कहाये। अग्र शब्द से आग्रिः और आग्रायण बनते हैं, पर अग्रा से पाणिनीय व्याकरण के अनुसार आग्रेय शब्द बनता है। राजा अग्र के वंशज जहां अग्रवंशी कहाये वहां अग्रा के वासी होने से वे आग्रेय भी कहाये।

अग्रा नगरी की स्थिति महालक्ष्मीव्रतकथा में गंगा और यमुना नदियों के बीच में हरिद्वार से चौदह कोस पश्चिम की तरफ कही गई है। यह ठीक प्रतीत नहीं होता। हरिद्वार के पास गंगा यमुना के बीच में कोई ऐसा प्राचीन नगर नहीं है, जिसका राजा अग्रसेन के साथ सम्बन्ध हो। यहां स्पष्ट ही महालक्ष्मीव्रतकथा के लेखक को भ्रम हुवा है। सम्भवतः, यह अग्रा नगरी वही है, जिसका नाम आगे चलकर अगरोहा पड़ा, और जिसके विस्तृत खण्डहर इस समय भी उपलब्ध होते हैं। आग्रेय गण का यही स्थान था, और अग्रवाल लोग अब भी इसे अपनी मातृभूमि मानते हैं।

(३)

महालक्ष्मीव्रतकथा में महाराज अग्र की साढ़े सतरह रानियों का उल्लेख है। पर उनके नाम गिनाते हुवे केवल सोलह रानियों के नाम दिये गये हैं। इसी तरह, यह लिखकर कि प्रत्येक रानी के तीन तीन

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पुत्र और एक एक कन्या हुई, जब नाम गिनाये गये, तो कुल ४८ पुत्रों तथा १६ कन्याओं के नाम दिये गये हैं। इससे सूचित होता है, कि वस्तुतः राजा अग्र के साढ़े सतरह रानियां नहीं थीं। साढ़े सतरह यह गिनती अग्रवालों के इतिहास में बड़े महत्व की है। राजा अग्रसेन के साढ़े सतरह रानियां थीं, उन्होंने साढ़े सतरह यज्ञ किये। उनसे साढ़े सतरह गोत्र चले और कुछ अनुश्रुतियों के अनुसार उनके साढ़े सतरह ही पुत्र थे। यह साढ़े सतरह की गिनती अग्रवालों में जो इतने महत्व को प्राप्त हुई, उसका कारण उनमें साढ़े सतरह गोत्रों का होना ही है। इतने गोत्र क्यों चले, इसी की व्याख्या के लिये रानियों, यज्ञों आदि में भी यह गिनती जोड़ी गई प्रतीत होती है। जैसा कि हम पहले लिख चुके हैं, अग्रवालों में ये गोत्र प्राचीन आग्रेय गण के विविध कुलों व परिवारों को सूचित करते हैं, जिनका कि गणशासन में बड़ महत्व था। इस विषय को यहां दुहराने की आवश्यकता नहीं। गोत्रों के अतिरिक्त अन्य स्थानों पर साढ़े सतरह की संख्या को ले आना ऐतिहासिक तथ्य पर आश्रित प्रतीत नहीं होता। यही कारण है, कि परम्परागत अनुश्रुति के अनुसार रानियों की संख्या साढ़े सतरह या अठारह लिख कर भी महालक्ष्मीव्रत कथा का लेखक उनके नामों की गिनती पूरी नहीं कर सका। इस ग्रन्थ में राजा अग्र की रानियों, पुत्रों व कन्याओं के जो नाम दिये गये हैं, वे कहां तक सत्य हैं, यह कहना कठिन है। अग्रवाल-इतिहास के अन्य कई लेखकों ने अग्रसेन के पुत्रों के जो नाम दिये हैं, उनसे ये नाम भिन्न हैं। उन लेखकों ने अपने नामों के लिये कोई प्रमाण उपस्थित नहीं किये। पर यहां एक पुराने

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्रन्थ में जो नाम पाये जाते हैं, वे यदि किसी सत्य अनुश्रुति पर आश्रित हों, तो कोई विशेष आश्चर्य की बात नहीं।

(४)

महालक्ष्मीव्रतकथा में राजा अग्र के जीवन चरित्र का वर्णन करते हुवे कुछ तिथियां दी गई हैं, वे महत्व की हैं—

१—राजा अग्र ने मार्गशीर्ष मास में लक्ष्मी पूजा की। लक्ष्मीव्रत मार्गशीर्ष प्रथमा से मार्गशीर्ष पूर्णिमा तक रखा गया। पूर्णिमा के दिन देवी महालक्ष्मी प्रगट हुई।

२—एक अन्य स्थान पर फिर लिखा है, राजा अग्र ने अग्रहण (मार्गशीर्ष) मास में लक्ष्मी की पूजा कर हरि मन्दिर को प्राप्त किया। इससे सूचित होता है, कि लक्ष्मीपूजा का मास मार्गशीर्ष है, और मार्गशीर्ष पूर्णिमा का अग्रवालों के इतिहास में विशेष महत्व है, क्योंकि इसी दिन देवी लक्ष्मी का वर राजा अग्र को प्राप्त हुवा था।

३—वैशाख मास की पूर्णिमा को राजा अग्रसेन ने अपने ज्येष्ठ पुत्र विभु को राजगद्दी पर बिठाकर स्वयं तापस जीवन का प्रारम्भ किया था।

हमारे इतिहास के लिये जो संस्कृत पुस्तकें मिलती हैं, उनमें राजा अग्रसेन के जीवन के साथ केवल दो तिथियों का सम्बन्ध है, मार्गशीर्ष पूर्णिमा और वैसाख पूर्णिमा। दोनों ही तिथियां महत्व की हैं। इनमें से कोई एक राजा अग्रसेन की जयन्ती की तिथि मानी जा सकती है। मार्गशीर्ष पूर्णिमा का महत्व अधिक है, क्योंकि इसी दिन राजा अग्रसेन के भावी महत्व की नींव पड़ी थी, और उनके उत्कर्ष का वस्तुतः प्रारम्भ हुवा था।

For Private and Personal Use Only

दूसरा परिशिष्ट

उरु चरितम्

विद्याधरो हस्त बद्धः स्वगुरुं पृष्ठवान् तदा
उरोर्नृपस्य चारित्र्यं वंशवृत्तं तथोद्भवम् ॥१॥
श्रुतं मया महाराज भवतां कृपया ननु
तस्य सचिवस्येदानीं शूरसेनस्य वै पुनः ॥२॥
वृत्तान्तं श्रोतुमिच्छामि कृपया परयातव (?)

हाथ जोड़ कर विद्याधर ने तब अपने गुरु से पूछा—हे महाराज ! राजा उरु का चरित्र, वंश वृत्त तथा उद्भव मैंने आपकी कृपा से सुन लिया। अब उसके सचिव शूरसेन का वृतान्त मैं सुनना चाहता हूं। हे दूसरों पर दया करने वाले ! वह अपना देश छोड़ कर मथुरा किस तरह

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्वदेशं वै परित्यज्य मथुरां कथमागतः ॥३॥
कथं च सचिवो जातः कार्यं वै विदधौ कथम् ।
एतत् सर्वं महाराज, वर्ण्यतां कृपया मम ॥४॥
शिष्यस्येत्थं रुचिं दृष्ट्वा उवाच हरिहरस्तदा
वैश्यवंशे समुत्पन्नः व्यापारे कुशलस्तथा ॥५॥
शास्त्रज्ञो यज्ञकर्ता च गुरुभक्तश्च पुत्रक
शूरसेनो महात्मा वै चरित्रं तस्य श्रूयताम् ॥६॥
पुरोहितोऽहं तस्यैव वंशस्य निश्चयं ननु ।
पूर्वमेव ममोत्कण्ठा चरित्रं श्रावयाम्यहम् ॥७॥
वत्स प्रश्नस्तव ह्ययं मम मानस हर्षदः

आया ? वह किस तरह सचिव बन गया और उसने राज्य कार्य का संचालन किस प्रकार किया ? हे महाराज ! यह सब बातें कृपा करके मुझे बताइये । १–४

अपने शिष्य की इस प्रकार की रुचि देख कर हरिहर ने कहा—

शूरसेन वैश्य वंश में उत्पन्न हुवा था, व्यापार में कुशल था, शास्त्रों का ज्ञाता था, यज्ञ करने वाला था, गुरु का भक्त था। हे पुत्रक ! उस शूरसेन महात्मा के चरित्र का श्रवण करो। मैं निश्चय से उसी वंश का पुरोहित हूँ। मेरी तो पहले से ही इसके लिये उत्कण्ठा है। अतः मैं उसके चरित्र को सुनाता हूँ। हे वत्स ! तुम्हारा यह प्रश्न मेरे मन में प्रसन्नता को उत्पन्न करने वाला है। तुम्हारे लिये भी यह

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तथापि सुरुचिकरं ध्यानेन शृणु सत्तम ॥८॥
प्रारब्धं हरिहरेण गौडेनेत्थं स्वया गिरा ।
सृष्ट्यादौ....ब्रह्मा पूर्वं जातः पितामहः ॥९॥
चतुर्वेदपरिज्ञाता प्राणिमात्रोद्भवः स्मृतः
ब्रह्मणस्तु विवस्वान् वै ततो मनुरजायत ॥१०॥
वर्णानामाश्रमाणां च क्रमशः स्थापको मनुः
तस्य पुत्रद्वयं जातं नेदिष्टश्च इला तथा ॥११॥
इलातः क्षात्रवंशस्य प्रारम्भो हि तदाह्यभूत्
नेदिष्टादनुभागो वै ततो जातः भलन्दनः ॥१२

सुरुचिकर है । अतः तुम्हें इसका श्रवण ध्यान के साथ करना चाहिये । ५–८

इस प्रकार गौड़ हरिहर ने अपनी वाणी से कहना प्रारम्भ किया—

सृष्टि के आदि में सब से पूर्व ब्रह्मा उत्पन्न हुवा, जो सबका पितामह है, जो चारों वेदों का परिज्ञाता है, और सारे प्राणी जिससे उत्पन्न हुवे कहे गये हैं । उस ब्रह्मा से विवस्वान् और फिर उससे मनु उत्पन्न हुवा । ९–१०

सब वर्णों और आश्रमों का संस्थापक मनु हुवा है । उसके दो संतान थे—नेदिष्ट और इला । ११

इला से सब क्षात्र वंशों का प्रारम्भ हुवा । नेदिष्ट से अनुभाग और अनुभाग से भलन्दन उत्पन्न हुवा । १२

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मरुत्वती तस्य भार्या ततो वत्सप्रियः सुतः

मांकीलो मंत्रद्रष्टा तु महाविद्वानभूत् सुतः ॥१३

धनपालेन नाम्ना वै प्रसिद्धस्तत्कुले ह्यभूत्

तेजस्वी पुरुषो....सच्चरित्रस्य कारणात् ॥१४

ब्राह्मणैः हि तदा श्रेष्ठैः राज्ये प्रस्थापितः स्वयम्

नगरस्य प्रतापस्य ततः स्वामी ह्यभूतदम् ॥१५

तस्याष्टौ सूनवो जाताः ह्यमी तेजस्विनः स्मृताः

तेषां नामानि चैतानि कथ्यन्ते द्विजसत्तमैः ॥१६

शिवो नलश्च नन्दश्च ह्यनलः कुमुदस्तथा

कुंदश्च वल्लभश्चैव शेखरः परिकीर्त्तितः ॥१७

सन्यासी तु नलश्चाभूत्....विज्ञानहेतुना ।

उस भलन्दन की स्त्री मरुत्वती थी। उनका पुत्र वत्सप्रिय हुवा। उसका लड़का मांकील हुवा, जो महा विद्वान और मन्त्रद्रष्टा था। १३

उसके कुल में धनपाल नाम का प्रसिद्ध पुरुष हुवा, जो बड़ा तेजस्वी था। उसका चरित्र बड़ा ऊंचा था। श्रेष्ठ ब्राह्मणों ने उसे स्वयं राजगद्दी पर स्थापित किया और वह प्रतापनगर का राजा बना। १४—१५

उसके आठ लड़के हुवे, जो सब बड़े तेजस्वी कहे गये हैं। उनके नाम श्रेष्ठ ब्राह्मण इस प्रकार सुनाते हैं—शिव, नल, नन्द, अनल, कुमुद, कुन्द, वल्लभ और शेखर। १६—१७

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हिमालयं गतस्तत्र तपस्तप्त निजेच्छया ॥१८
सप्तभिः भ्रातृभिः पश्चात् अधिकारः कृतः स्वयम्
सप्तद्वीपेषु वै तावत् स्वामिनो ह्यभवन् तदा ॥१६
जम्बुद्वीपे च स्वामित्वं शिवस्य प्रोच्यते बुधैः
कुलं तस्यैव श्रेष्ठस्य विस्तारं प्राप्नुयात् सदा ॥२०
शिवस्य पुत्राश्चत्वारः आनन्दः प्रथमः स्मृतः।
स्वेच्छयैव च शेषैस्तु योगस्य···कृतम् ॥२१
आनन्दादयो जात; ततो विश्यः समाभवत्।
ततो वैश्य समाजज्ञे (?) धर्मनीतिश्च शाश्वतम् ॥२२
प्रसूतोऽभूच्च वैश्यानां कुलं तावदशंसयम्।

इनमें से नल उत्कृष्ट ज्ञान के कारण सन्यासी हो गया। वह हिमालय चला गया और वहां अपनी इच्छा से तप करने लगा। १८

शेष सात भाइयों ने सातों द्वीपों पर स्वयं अधिकार कर लिया। वे सात द्वीपों के स्वामी हुवे। जम्बु द्वीप में शिव का स्वामित्व कहा जाता है। उसी श्रेष्ठ राजा का कुल वहां विस्तार को प्राप्त हुवा। १६-२०

शिव के चार पुत्र थे, उनमें आनन्द सब से बड़ा था। बाकी तीन ने अपनी इच्छा से योग मार्ग ग्रहण किया। २१

आनन्द का पुत्र अय हुवा, उससे विश्य पैदा हुवा। वह सदा धर्म की नीति का पालन करता था। बिना किसी सन्देह के, वैश्यों का कुल उससे बहुत विस्तृत हुवा। २२–२३

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सुदर्शनो नृपस्तस्य वंशे समभवत् तदा ॥२३

तस्य पत्नीद्वयं जातं सेवती नलिनी तथा ।

धुरंधरस्तस्य सूनुः सेवतीगर्भसंभवः ॥१४

प्रशस्तरूपो विद्वांश्च लोकोपकरणे रतः ।

धुरंधरात् समजनि नन्दिवर्धनस्तदा ॥२५

ततोऽशोकोऽशोकात्तु समाधिरभवत् तदा ।

संसारे महती कीर्तिर्येन प्राप्ता प्रतिष्ठिता ॥२६

पश्चाद् वंशस्य क्षीणत्वं समाधेः क्रमशोह्यभूत् ।

पारस्परिक द्वेषेण नगरं परितत्यजुः ॥२७

पृथिव्याः भिन्नभागेषु वसतिं परिचक्रतुः ।

शतानां चैव वर्षाणां व्यतीते····जनः ॥२८

उसके वंश में सुदर्शन नाम का राजा हुवा, उसकी दो पत्नियां थीं, सेवती और नलिनी। सुदर्शन के सेवती के गर्भ से धुरन्धर पैदा हुवा, वह बड़ा विद्वान् था, उसका रूप बड़ा सुन्दर था और वह सदा संसार के उपकार में व्यापृत रहता था। २३–२५

धुरन्धर का पुत्र नन्दिवर्धन हुवा। उसके अशोक और अशोक का पुत्र समाधि हुवा। इस समाधि ने संसार में बड़ी भारी कीर्ति प्राप्त की। २५–२७

समाधि के बाद क्रमशः वंश में क्षीणता आने लगी। आपस के द्वेष से कुछ ने नगर को छोड़ना प्रारम्भ किया, और पृथिवी के विभिन्न भागों में अपनी बस्तियां बसानी शुरू कीं। २७–२८

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मोहनदासेन नाम्ना स वै विष्णुपरायणः
दाक्षिणात्ये प्रदेशे वै यशस्तेनोपपादितम् ॥२९
नेमिनाथो प्रपौत्रो वै ततस्तस्य बभूव ह।
सुकीर्तिस्तेन प्राप्ता तु नयपालमवासयत् ॥३०
नेमिपुत्रोऽभवद् वृन्दो वृन्दतो गुर्जरः स्मृतः
गुर्जरस्य कुले शुद्धे हरिर्नामा ह्यभून्नृपः ॥३१
तस्य रंगादयः पुत्राः शतं हि परिकीर्त्यते ।
हरिः शरीरतः क्षीणो ह्यल्पायुश्चापि प्रोच्यते ॥३२
वार्धक्यमात्मनो दृष्ट्वा राज्यं रंगाय चाददत्
हिमालयं हि गतवान् पर्वतं स हरिस्तदा ॥३३
जनकस्येदृशे कार्ये ह्यप्रसन्नाः बभूविरे

कई सौ वर्ष बीत जाने के बाद मोहनदास नाम का एक राजा हुवा, जो विष्णु का बड़ा भक्त था। उसने दाक्षिणात्य देश में बड़ी कीर्ति प्राप्त की। २८–२९

उसका पड़पोता नेमिनाथ था। उसकी भी बड़ी कीर्ति फैली। उसने नयपाल बसाया।

नेमि का लड़का वृन्द हुवा। वृन्द से गुर्जर हुवा कहा जाता है। गुर्जर के शुद्ध कुल में हरि नाम का राजा हुवा। ३१

हरि के रंग आदि १०० पुत्र कहे जाते हैं। हरि शरीर से कमज़ोर था, उसकी आयु भी कम थी। जब उसने देखा कि अपना बुढ़ापा आ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नवाधिकाश्च नवतिः सुतास्तस्य महीपतेः ॥३४
प्रजासु ते ह्यनाचारमकुर्वन् वै निजेच्छया
तेनैव....इयं प्रजा चातीव दुःखिता ॥३५
यज्ञादयः प्रनष्टाश्च देशेऽशांतिः समजनि
याज्ञवल्क्यांतिकं गत्वा प्रजावर्गेण भाषितम् ॥३६
सर्वं वृत्तं समाकर्ण्य याज्ञवल्क्यो महामुनिः
दयालुश्चैव धर्मात्मा सभां रंगस्य चागमत् ॥३७
ऋषिं दृष्ट्वा नृपो रंगः मुनिन्तु समुवाच ह
स्वकीयागमनहेतुर्हि कथ्यतां मुनिसत्तम ॥३८

गया है, तो राज्य रंग को देकर स्वयं हिमालय पर्वत को चला गया। ३२-३३

अपने पिता के इस कार्य से उसके (रंग को छोड़ कर शेष) ९९ पुत्र बहुत अप्रसन्न हुवे। उन्होंने अपनी इच्छा पूर्वक प्रजा के ऊपर बहुत अत्याचार शुरू किये। इनके कारण प्रजा बहुत दुखी होगई। यज्ञ आदि सब नष्ट होगये और देश में अशान्ति मचगई। ३४-३६

लोग मुनि याज्ञवल्क्य के पास गये, और सब बात कही। दयालु महामुनि महात्मा याज्ञवल्क्य सब वृत्तान्त सुन कर राजा रंग की सभा में आये। ३६-३७

राजा रंग ने जब ऋषि को देखा, तो उनसे निवेदन किया—हे मुनियों में श्रेष्ठ! अपने पधारने का कारण कहिये। ३८

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रजासु ह्यतिवर्तन्ते क्षितीश तव भ्रातरः
यज्ञादयः प्रनष्टा वै याज्ञवल्क्योऽब्रवीदिति ॥३९
अस्मिन् काले प्रकृतिषु नाना क्लेशा ह्युपस्थिताः
एषां तावदुपायो हि क्रियतां नृपसत्तम ॥४०
याज्ञवल्क्यं तु भाषन्तं तदा मधुरया गिरा
तस्य वै भ्रातरः सर्वे सभायां पर्युपस्थिताः ॥४१
स्वापमानं तु वै श्रुत्वा नग्नेनैकेन साधुना
क्रुद्धाश्च रक्तनेत्राश्च याज्ञवल्क्यमथाब्रुवन् ॥४२
धूर्त किं भाषसे त्वं हि इतः शीघ्रं प्रगम्यताम्
अन्यथा त्वच्छिरोह्येतत खड्गच्छिन्नं भविष्यति ॥४३

याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया—हे पृथ्वी के स्वामी ! तुम्हारे भाई प्रजा पर अत्याचार करते हैं। यज्ञ आदि भी नष्ट हो गये हैं। इस समय लोगों पर अनेक कष्ट उपस्थित हो रहे हैं। हे राजाओं में श्रेष्ठ ! तुम्हें इसका उपाय करना चाहिये। ३९–४०

जब याज्ञवल्क्य अपनी मधुर वाणी से ये बातें कर रहे थे, उसी समय (रंग के) भाई सभा में आ उपस्थित हुवे। ४१

एक नंगे साधु से अपना अपमान सुन कर वे बड़े क्रुद्ध हुवे और लाल लाल आंखें कर याज्ञवल्क्य को इस प्रकार बोले—ऐ धूर्त ! तू क्या बोलता है। यहां से शीघ्र चला जा। अन्यथा, तेरा सिर तलवार से काट दिया जायगा ४२–४३

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

राजवंशं निन्दयन्त्वं भयं कस्मान्न मन्यसे
इत्थं क्रोधेन पूर्णानि वचांसि मुनिरश्रृणोत् ॥४४
अथाब्रवीत् मुनिः·······एते धनमदोद्धताः
स्वीयं सुखं प्रमन्यन्ते ह्यनाचारे······· ॥ ४५
अनर्थं वै करिष्यन्ति योग्योपायेन वै विना ॥४६
कमण्डलुं समादाय मन्युपूर्णो मुनिस्तदा
भ्रातृन् आलोक्य शापं वै प्राददत् मुनि सत्तमः ॥४७
अस्मिन्नेव क्षणे सर्वे भवेयुः शूद्रका इति ॥४८
यथा मुनिना चाशापि अभवन् शूद्रसंज्ञकाः
यज्ञोपवीतं तेषांतु स्वयमेवापतत् भुवि ॥४९
इत्थमात्मानमद्राक्षुः मदस्तेषां हि खण्डितम्

राजवंश की निन्दा करते हुवे तू भय क्यों नहीं अनुभव करता । ४४

मुनि ने क्रोध से भरे हुवे ये वचन सुने और कहा—ये सब धन के मद से उद्धत हो गये हैं । अपने ही सुख को मानते हैं, और अत्याचार में (व्यापृत हैं) । अगर इनका योग्य उपाय न किया जायगा, तो ये बहुत अनर्थ करेंगे । ४४-४६

क्रोध से भरे हुवे मुनि ने तब कमण्डल लेकर उन भाइयों की तरफ देखकर यह शाप दिया—तुम सब इसी क्षण शूद्र बन जाओगे । ४७-४८

जैसा मुनि ने शाप दिया, वैसा ही हुवा । वे सब शूद्र कहाने लगे । उनका यज्ञोपवीत स्वयमेव पृथ्वी पर गिर पड़ा । ४९

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पश्चात्तापं प्रकुर्वन्तः………… ॥५०

पाणिबद्धाः प्रभाषन्ते पापो नः क्षम्यतां मुने

दयालो.... मन्युयोग्याः वयं न हि ॥५१

वचनं दीनमाकर्ण्य तदा वै मुनिरब्रवीत् ॥५२

मम शापस्य यत्....कदापि न भविष्यति

अवश्यमेव भोक्तव्यं भवद्भिः नात्र संशयः ॥५३

एकस्वरेण वै प्रोचुः रंगस्य भ्रातरस्तदा

कथं शापेन....उद्धारो भविष्यति ॥५४

बदरिकाश्रमं गत्वा पूर्णं वर्षसहस्रकम्

तपस्यां चरथ यूयं मनः कृत्वा.... ॥५५

अपनी ऐसी दशा देख कर उन का मद चूर्ण हो गया, और पश्चात्ताप करते हुवे हाथ जोड़ कर यह बोले— हे मुनि ! हमारे पाप को क्षमा करो हे दयालो ! हम लोग क्रोध के लायक नहीं हैं। ५०-५१

उनके दीन वचनों को सुन कर तब मुनि बोले— मेरा शाप अब (अन्यथा) कदापि न होगा। उसे तुम्हें भोगना ही पड़ेगा, इसमें सन्देह नहीं। ५२-५३

इस पर रंग के भाई सब एक स्वर से कहने लगे— हमारा शाप से उद्धार किस प्रकार होगा। ५४

(मुनि ने कहा) तुम बदरिकाश्रम जाओ, और वहां जाकर पूरे हज़ार वर्ष तक मन को (वश में) करके तपस्या करो। ५५

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सहस्राब्दं तपश्चर्यां कृत्वा रंगस्य भ्रातरः
पुनः द्विजत्वं वै प्रापुः शिष्य त्वं शृणु मद्वचः ॥५६
अनादरं प्रकुर्वन्ति ब्राह्मणानान्तु ये नराः
इयमेव दशा तेषां शिष्य सत्यं हि मन्यताम् ॥५७
रंगस्य वै पुत्रो विशोकस्तस्य वै मधुः
मधोर्महीधरो जातो यो महद्शिवभक्तिमान् ॥६०
येन बहु वरं लब्धं महादेवं प्रतोष्य हि
यस्य वै सप्तपुत्रास्तु धनवन्तः प्रवीणकाः ॥६१
तेषु वै वल्लभो नाम पितुर्द्रव्यस्य स प्रभुः
अग्रसेनः शूरसेनः वल्लभस्य सुतद्वयम् ॥६२

रंग के भाई हज़ार वर्ष तक तपस्या करके फिर द्विजत्व को प्राप्त हुवे। हे शिष्य ! मेरे इस वचन को सुनो। जो लोग ब्राह्मणों का अनादर करते हैं, उनकी यही दशा होती है। मेरी इस बात को सत्य मानो। ५६-५७

रंग का पुत्र विशोक हुवा। उसका लड़का मधु था। मधु से महीधर उत्पन्न हुवा। वह शिव का बड़ा भारी उपासक था। उसने महादेव को प्रसन्न करके बहुभ से वर प्राप्त किये। इसके सात पुत्र हुवे, जो सब बड़े धनवान तथा प्रवीण थे। ६०-६१

उनमें वल्लभ नाम का लड़का पिता की सम्पत्ति का मालिक बना। वल्लभ के दो लड़के हुवे—अग्रसेन और शूरसेन। ६२

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अग्रसेनस्य नार्यस्तु अष्टादश प्रकीर्तिताः
प्रत्येकस्याः महिष्यास्तु तस्य वै पृथिवीपतेः ॥६३
त्रिपुत्राश्चैका दुहिता अभवन् हर्षदायकाः
सुपात्रा चैव माद्री च शूरसेनस्य कथ्यते ॥६४
प्रथमायाः महिष्यास्तु प्राभवत् तनयत्रिकम्
सप्तपुत्राः द्वितीयातः शूरसेनस्य भूपतेः ॥६५
प्रतापशालिनः सर्वे पितुरानन्ददायिनः
दृष्ट्वा वंशस्य वृद्धिं हि ज्येष्ठो भ्राताग्रसेनकः ॥६६
स्वस्य चायं निवासार्थे गौडदेशं प्रमन्यत
तत्र देशे महापूते राज्यमस्थापयत स्वयम् ॥६७

अग्रसेन की अठारह स्त्रियां थीं, यह कहा जाता है। उनमें से प्रत्येक के तीन तीन पुत्र और एक एक कन्या हुई, जो सब हर्षप्रदायक थीं। ६३–६४

शूरसेन की दो स्त्रियां थीं—सुपात्रा और माद्री। पहली रानी के तीन पुत्र हुवे। दूसरी रानी के सात पुत्र हुवे। ये सब बड़े प्रतापशाली और पिता को आनन्द देने वाले थे। ६४–६६

जब बड़े भाई अग्रसेन ने देखा, कि उसके वंश की बहुत वृद्धि हो गई है, तो उसने अपने निवास के लिये गौड़ देश को निश्चय किया। उस अत्यन्त पवित्र देश में अग्रसेन ने अपना राज्य स्थापित किया। ६६–६७

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शिष्य स हि गौडो देशः हिमस्थानाद्धि संवृतः ।
गंगया यमुनया च जायते सुप्रवाहितः ॥६८
इत्थं वै भ्रातरौ द्वौ हि राज्यस्थानं प्रचक्रतुः ॥६९
मुनिर्गर्गस्य ह्यादेशात् यज्ञं कर्तुं मनो दधे ॥७०
प्रेषितं सर्वदेशेषु सवनस्य निमन्त्रणम् ।
वृत्तान्तं तस्य वै ज्ञात्वा मुनयो देवतास्तथा ॥७१
विद्वांसः ऋषयश्चैव प्रारुह्य स्व स्व वाहने
यागे सम्मिलिताः सर्वे हर्ष निर्भर मानसाः ॥७२
प्रत्येकस्मै शूरसेनः सादरं वासमाददत्
अग्रसेनः सवनस्याधिष्ठाता सर्वसम्मतः ॥७३
सवनस्य च ब्रह्माभूत् मुनिर्गर्गस्तथैव च

हे शिष्य ! यह गौड़ देश हिमालय से संवृत है। गंगा और यमुना नदियां इसमें बहती है। ६८

इस प्रकार दोनों भाइयों ने अपने राज्य के स्थान बनाये। ६९

फिर (अग्रसेन ने) मुनि गर्ग के आदेश से यज्ञ करने को मन बनाया। सब देशों में यज्ञ के निमन्त्रण भेजे गये। यज्ञ का वृतान्त जान कर सब देवता और मुनि, विद्वान् और ऋषि अपनी अपनी सवारी पर चढ़ कर, हर्ष से पूर्ण हो यज्ञ में सम्मिलित हुवे। ७०–७२

शूरसेन ने सब के लिये वास का स्थान सादर दिया। सब की सम्मति से अग्रसेन यज्ञ का अधिष्ठाता नियत हुवा। ७३

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दशाधिकाः सप्त यागाः वत्स पूर्णास्तदाभवन् ॥७४
अष्टादशतमो यागो···अभूच्च महर्षिभिः
हिंसातो ह्यग्रसेनस्य अकस्मात्तु घृणा हृदि ॥७५
यया हिंसया नरकं गच्छन्ति पुरुषाधमाः
तस्यामेव प्रवृत्तोऽहमेवं राजा ह्यचिन्तयत् ॥७६
वैश्यानां परमो धर्मः प्राधान्येन प्रकीर्तितः
पशूनां पालनं चैव सर्वतः परिरक्षणम् ॥७७
यागे पशुवधश्चास्ति अतोऽहं पापभाक् स्मृतः
प्रतिक्षणं विचारोऽयं दृढत्वं प्राप्तवान् इति ॥७८
तस्य दिवसस्य कृत्यं तु अग्रसेनः समापयत् ।
शयनागारे प्रविष्टः स···········परिचिन्तयत् ॥७९

यज्ञ का ब्रह्मा मुनि गर्ग बना । सतरह यज्ञ तो हे वत्स ! तब पूर्ण हो गये । जब अठारहवां यज्ञ महर्षियों ने शुरू किया, तो अग्रसेन के हृदय में हिंसा से अकस्मात् घृणा उत्पन्न हो गई । ७४–७५

राजा ने सोचा, कि जिस हिंसा से नीच पुरुष नरक को प्राप्त होते हैं, मैं उसी में प्रवृत्त हुवा हूँ । ७६

वैश्यों का प्रधान धर्म मुख्यतया यह कहा गया है, कि वे पशुओं का पालन तथा उनकी सब ओर से रक्षा करें । यज्ञ में पशु बध होता है, इस लिये मैं पाप का भागी हूँ । यह विचार प्रति क्षण मेरे हृदय में दृढ़ होता जारहा है । ७७-७८

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

द्वितीयेऽहनि प्रातर्वै नोत्थितः पृथिवीपतिः
परस्परमपृच्छन्त यज्ञकर्तार एव हि ॥८०
कथं नहि समायातोऽद्य यागे नराधिपः ।
कालो गच्छति यागस्य प्रतीक्षन्तो महीपतिम् ॥८१
एको वै प्रहरो जातः प्रतीक्षन्तः परस्परम
राजानन्तु समाह्वातु शूरसेनो हि प्रेषितः ॥८२
पण्डितैः शूरसेनस्तु गतो राजगृहेषु वै
विषण्णं भ्रातरं दृष्ट्वा चकितः खिन्नमानसम ॥८३
करबद्धः शूरसेनः भ्रातरमुक्तवान् तदा

उस दिन का कृत्य तो अग्रसेन ने समाप्त कर दिया। शयनागार में प्रविष्ट होकर वह सोचने लगा। ७९

दूसरे दिन पृथिवी का स्वामी सुबह के समय उठा नहीं। यज्ञ कर्ता लोग आपस में पूछने लगे, क्या बात है, जो आज पृथिवी पति यज्ञ में नहीं आया। ८०-८१

राजा की प्रतीक्षा करते हुवे समय गुज़रने लगा। (यज्ञ कर्ताओं के) इस प्रकार बात चीत करते हुवे एक प्रहर बीत गया। राजा को बुलाने के लिये शूरसेन को पण्डितों ने भेजा। शूरसेन राजमहल में गया और वहां जाकर अपने भाई को दुखी तथा खिन्नमन देखकर चकित रह गया। ८२-८३

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

असमयं भवतामेतत् औदास्यं किं नु हेतुकम् ॥८४

अग्रसेनस्तदाब्रवीत्

वैश्यानां ननु कर्तव्यं पशुरक्षा प्रपालनम् ॥८५

हिंसनं हि महत्पापं वैश्यानां प्रतिषेधितम् ॥८६

मया महान् भ्रमोऽकारि यद्यागे पशुहिंसनम् ।

न जाने ह्यस्य...........भगवान् किं प्रदास्यति ॥८७

कियज्जन्मावधि मम नरके वसनं भवेत्

अलं हिंसामयात् यागात्.......श्रेय उच्यते ॥८८

इत्थं भ्रातृवचः श्रुत्वा शूरसेनोऽब्रवीत् तदा

दुःखितेषु दयालो हि श्रूयतां ननु मद्वचः ॥८९

शूरसेन ने हाथ जोड़ कर अपने भाई को कहा– आपकी यह उदासीनता असमय की है। इसका क्या कारण है ? ८४

अग्रसेन ने तब कहा– वैश्यों का कर्तव्य निश्चय ही पशुओं की रक्षा और पालन करना है। हिंसा करना महापाप है। वैश्यों के लिये उस का प्रतिषेध किया गया है। मैंने बड़ा भारी भ्रम किया, कि जो यज्ञ में पशु हिंसन किया। न जाने, इसका क्या फल मुझे मिलेगा ? न जाने कितने जन्मों तक मुझे नरक में रहना होगा ! अब इस हिंसामय यज्ञ का अन्त हो– इसी में श्रेय है। ८५-८८

अपने भाई के इन वचनों को सुनकर शूरसेन बोला– हे दुःखितों के प्रति दयालु ! मेरे वचनों को सुनिये। ८९

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एको यागो हि शेषोऽस्ति सो हि पूर्णो विधीयताम्
पुनर्नहि विधातव्यमित्येतद्वचनं मम ॥६०
गन्तव्यं ननु यागस्य समयो ह्यतिवर्तते ।
पुरोहितजनास्तावदेवमेव वदन्ति वै ॥६१
सुधीर्भूत्वा भवानेवं कथं मां वै प्रभाषते ।
अग्रसेन उवाचेदं तातवाक्यं विचार्यताम् ॥६२
यावत् पापकर्मभ्यो मनुष्यस्तु पृथग्भवेत् ।
तावदेव महच्छ्रेय एषा हि सम्मतिर्मम ॥६३
पशूनां हिंसनं पापं हि त्वयापि प्रतिरुध्यताम् ।
इयं प्रतिज्ञा कर्तव्या मद्वचस्तु हि मन्यताम् ॥६४
अस्मद्वंशे तु कश्चित् वै हिंसनं न समाचरेत् ।

अब केवल एक यज्ञ बाकी रह गया है, उसे पूर्ण कर लेना चाहिये। फिर कभी नहीं करना चाहिये, मेरी भी यही सम्मति है। अब आपको चलना चाहिये, क्योंकि यज्ञ का समय बीत रहा है। पुरोहित लोग सब यही बात कहते हैं। ९०–९१

इस पर अग्रसेन ने कहा—आप समझदार होकर भी मुझे ऐसी बात कहते हो। हे वत्स! इस बात पर विचार करो, कि मनुष्य पाप कर्म से जितना भी बचे, उतना ही अधिक अच्छा है। मेरी तो यही सम्मति है। पशुओं का वध करना पाप है, वह तुम्हें भी रुकवा देना

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शूरसेनोऽग्रसेनस्य सम्मतिं धर्मानुगाम् ॥९५
श्रुत्वा वै तस्य मनसि हिंसातो ग्लानिरुत्थिता ॥९६
सहोदरौ राजप्रासादात् यज्ञभूमिं समागतौ।
दर्शकानामृषीणाञ्च विदुषां यत्र वृन्दकः ॥९७
अग्रसेन आयाते मंडपो हि जयध्वनैः।
गुञ्जायमानो ह्यभवत् सर्वे हर्षं प्रचक्रिरे ॥९८
पण्डितानां समादेशात् राजा पीठमुपाविशत् ॥९९
अग्रसेनेन भोः शिष्य शूरसेनेन वै पुनः
कन्याश्चैव सुताश्चैव यागे प्रस्थापिताः स्वयम्॥ १००

चाहिये। मेरा वचन तुम्हें मानना चाहिये, और यह प्रतिज्ञा करनी चाहिये, कि हमारे वंश में कोई भी हिंसा कर्म न करे। ९२–९५

अग्रसेन की धर्मानुकूल सम्मति सुन कर शूरसेन के मन में भी हिंसा के प्रति ग्लानि हो गई। दोनों भाई राजमहल से यज्ञभूमि को आये। वहां दर्शक, ऋषि, मुनि और विद्वानों का बड़ा भारी समूह उपस्थित था। ९६–९७

अग्रसेन के आने पर सारा यज्ञ मण्डप जय ध्वनिओं से गूंज उठा। सब लोगों ने हर्ष प्रगट किया। ९८

पण्डितों के निर्देश पर राजा पीठ पर बैठ गया। ९९

हे शिष्य ! तब अग्रसेन और शूरसेन ने अपनी सब कन्याओं तथा पुत्रों को यज्ञ में बुलाये। १००

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यज्ञे पशुवधो जातस्ततो मे हृदि घृणाभवत् ।
उचितं नैव मन्येऽहम् अधुना पशुहिंसनम् ॥१०१
अहं स्वभ्रातॄन् पुत्रांश्च तथा कन्याः कुटुम्बिनः
इदमेवोपदिशामि न कश्चिद्वधमाचरेत् ॥१०२
सार्धसप्तदशान् यागानग्रसेनो ह्यपूरयत् ॥१०३
भो विद्याधर, तेषां तु यागानामेव नामतः
भ्रात्रोः द्वयोः सन्ततीनां गोत्राणि निश्चितानि वै ॥१०४
येन पुत्रेण दीक्षा तु गृहीता सवने यदा
तस्य गोत्रं हि तन्नाम्ना प्रसिद्धिमगमत् तदा ॥१०५
अग्रसेनस्य वंश्यानां गोत्राण्येतानि सन्ति वै
गर्गो वै गोयलश्चैव गावालः कांसिलादयः ॥१०६

(और उन्हें संबोधन करके कहा) यज्ञ में पशु हिंसा होती है, अतः मेरे हृदय में उससे घृणा हो गई है । अब मैं पशु हिंसा को उचित नहीं समझता हूँ । मैं अपने सब भाइयों, पुत्रों, कन्याओं तथा कुटुम्बियों को यही उपदेश करता हूँ, कि कोई भी हिंसा न करे । १०१–१०२

साढ़े सतरह यज्ञों को अग्रसेन ने पूरा किया । १०३

हे विद्याधर ! इन्हीं यज्ञों के नाम से दोनों भाइयों की सन्तति के गोत्र निश्चित हुवे हैं । जिस पुत्र ने जिस यज्ञ में दीक्षा ग्रहण की, उसका गोत्र उसी के नाम से प्रसिद्ध हुवा । १०४–१०५

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गवनो ह्यष्टादशतमो·······इति स्मृतः ।
शूरसेनस्य गोत्राणां वृत्तान्तं श्रूयतामथ ॥१०७
शूरसेनस्य द्वाभ्यां वै नारिभ्यां दशपुत्रकाः ।
सुपात्रायास्तु पुत्राणां गर्गगावाल गोयलाः ॥१०८
माद्रयास्तु........सप्तगोत्राणि सन्ति हि
सिंहलात् ढिंगलान्तं हि निश्चितमिदमुच्यते ॥१०९
यज्ञकार्य समाप्तिस्तु यदा जाता तदैव हि
अभ्यागताः प्रेषिताः स्वयं तु विधिपूर्वकम् ॥११०
देशे निवसतौ तौ हि भ्रातरौ सुखपूर्वकम्
किञ्चित्कालस्य पश्चात् वै भो विद्याधर श्रूयताम् ॥१११

अग्रसेन के वंशजों के गोत्र निम्ननिलित हैं—गर्ग, गोयल, गावाल, कांसिल आदि जिनमें अठारहवां गवन कहा गया है । १०६

अब शूरसेन के गोत्रों के नाम सुनो । शूरसेन के दो स्त्रियों से दस पुत्र हुवे । सुपात्रा के पुत्रों के गोत्र गर्ग, गावाल और गोयल हैं । माद्री के पुत्रों के सात गोत्र हैं—सिंहल से लेकर ढिंगल तक ऐसा निश्चित समझना चाहिये । १०७–१०९

जब यज्ञ कार्य समाप्त हो गया, तो सब अभ्यागत लोग विधिपूर्वक विदा कर दिये गये । ११०

वे दोनों भाई देश में सुख पूर्वक निवास करते रहे । कुछ काल के बाद, हे विद्याधर ! यह सुनो कि शूरसेन के हृदय में तीर्थयात्रा की इच्छा उत्पन्न हुई । १११-११२

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शूरसेनस्य हृदये तीर्थयात्रेषणाऽभवत् ॥११२

भ्रातुराज्ञां परिगृह्य समहिष्योऽगमत्तदा

दशनागास्तु प्रोच्यन्ते द्विपञ्चाशततुरङ्गमाः ॥११३

पञ्चाशीतिर्हि शकटाः मानुषाणां शतद्वयम्

बहुद्रव्यं समादाय........... ॥११४

माघशुक्लपञ्चम्यां सोऽगमत् शूरसेनकः ॥११५

[इसके अनन्तर 'उरुचरितम्' का अग्रवाल—इतिहास से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है। इसलिये उसे उद्धृत करने की हम कोई आवश्यकता नहीं समझते। आगे संक्षेप में कथा इस प्रकार है, कि शूरसेन विविध जंगलों, पर्वतों तथा नगरों की यात्रा करता हुवा दस मास के बाद वापिस हुवा। लौटते हुवे रास्ते में मथुरा में पड़ाव डाला। उन दिनों मथुरा में चन्द्रवंश के सम्राट उरु का राज्य था। जब महाराज उरु को अग्रसेन के छोटे भाई शूरसेन के पधारने का समाचार मिला, तो वह बड़ा प्रसन्न हुवा। उसने अपने अतिथि का बड़े समारोह से स्वागत किया और उसे अपनी राजसभा में आमन्त्रित किया। शूरसेन ने महाराज उरु की राजसभा की जब दशा देखी, तो बड़ा दुखी हुवा।

भाई की आज्ञा लेकर अपनी रानियों के साथ शूरसेन ने तीर्थयात्रा शुरू की। उसने दस हाथी, सौ घौड़े, पचासी गाड़ियां तथा दो सौ मनुष्य साथ लिए। बहुत सा धन भी साथ लिया, और माघ शुक्ला पंचमी को यात्रा प्रारम्भ की। ११३-११५

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

राजसभा जब जीर्ण होगई थी, राजकर्मचारी सब उदासीस हो रहे थे। कारण यही था, कि राजा ने 'प्रयाण' बिलकुल छोड़ दिया था।

कुछ समय पीछे, जब महाराज उरु सभा में आये, तो शूरसेन ने अपनी यात्रा का सब समाचार सुनाकर उसके राज्य की दुर्दशा का कारण पूछा। उसने उत्तर दिया—इसका कारण सचिवों की उदासीनता ही है। राज्य के मन्त्री सर्वथा अयोग्य हैं, उनके असामर्थ्य को देखकर मेरा हृदय बड़ा खिन्न होता है। राज्य के महल सब टूट गये हैं। हमारी भुजाओं में पहले जैसी शक्ति नहीं रही है। महाराज उस समय गहरा सांस लेकर चुप हो गये।

कुछ देर ठहर कर फिर राजा ने उससे कहा—राज्य में सर्वत्र अशान्ति मची हुई है। राज्य के दक्षिणी प्रदेशों पर शत्रुओं के आक्रमण हो रहे हैं। हमारे यहां कोई योग्य सचिव नहीं है। सब दुर्दशा का यही कारण है। मेरा अनुरोध यह है, कि आप कुछ दिन तक यहीं निवास करें, और सचिव का कार्य सम्भाल कर राजकार्य को देखें। तभी इस राज्य के उद्धार की आशा है।

शूरसेन ने महाराज उरु के अनुरोध को स्वीकार कर लिया। धीरे धीरे उसने सारा राज्य प्रबन्ध सम्भाल लिया। राजमहलों की मरम्मत कराई गई, भिक्षुओं के लिये अन्न सत्र खुले, विद्यार्थियों के लिए विद्यापीठों की व्यवस्था हुई। नये न्यायाधीश और गुप्तचर नियत किये गये। सेना का नये सिरे से संगठन हुवा। कुछ ही दिनों बाद एक अच्छी शक्तिशाली सेना एकत्रित होगई। इस चतुरंगिणी सेना को लेकर शूरसेन ने दक्षिण की ओर आक्रमण किया और शत्रुओं को परास्त कर

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अपने वश किया। दक्षिणी सीमा पर राज्य की रक्षा के लिये दुर्ग बनाये गये।

जब सब व्यवस्था ठीक हो गई, तो राजा उरु और शूरसेन मथुरा वापिस आये। वहां उनका बड़ी धूमधाम के साथ स्वागत हुवा। विजय के उपलक्ष में बड़ी भारी सभा की गई, जिसमें ब्राह्मण तथा अन्य बड़े लोग इकट्ठे हुवे। उरु ने शूरसेन के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकाशित करने के लिये मथुरा का दूसरा नाम 'शौरसेन' रखा। इस तरह शूरसेन की सहायता से महाराज उरु के राज्य का पुनरुद्धार हुवा।

हमें 'उरुचरित' की जो प्रतिलिपि मिली है, वह यहां समाप्त हो जाती है। पर इसमें संदेह नहीं, कि यह प्रतिलिपि पूर्ण नहीं है। इसका अन्तिम श्लोक यह है—

इदानीं शूरसेनस्य संवादः श्रावयिष्यते।
शिष्य राज्य...... उरुणा सह योऽ भवत् ॥

(हे शिष्य ! अब वह सम्वाद कहेंगे, जो शूरसेन का उरु के साथ राज्य (के विषय में) हुवा था।

इसमें संदेह नहीं, कि उरुचरितम् का राजा अग्रसेन विषयक जो वृत्तान्त है, वह अग्रवाल इतिहास की दृष्टि में बहुत ही उपयोगी है।]

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

टिप्पणियां

(१)

राजा अग्रसेन ने जिस प्रदेश में अपना नया राज्य पृथक् रूप से स्थापित किया, उसे 'उरु चरितम्' में गौड़ देश कहा गया है। इस गौड़ देश की परिभाषा इस ढंग से की गई है— "हे शिष्य ! इस गौड देश के ऊपर हिमालय है, और इसमें गंगा यमुना नदियां बहती हैं" आजकल गौड देश का अभिप्राय सामान्यतया बंगाल समझा जाता है। पर प्राचीन समय में इस प्रदेश को भी गौड़ देश कहते थे, जिसमें आजकल मेरठ और अम्बाला की कमिश्नरियां हैं। पश्चिमी संयुक्तप्रान्त और पूर्वी पंजाब की संज्ञा 'गौड़' देश भी रही है। इस नाम की स्मृति आज कल के गौड़ ब्राह्मणों में है। मेरठ और अम्बाला कमिश्नरी के ब्राह्मण अब तक भी गौड़ कहाते हैं। जिस तरह सरस्वती नदी के समीप

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बसने वाले ब्राह्मण सारस्वत, मिथिला के ब्राह्मण मैथिल, कन्नौज के ब्राह्मण कन्नौजिये और द्राविड़ देश के ब्राह्मण द्रविड़ कहाते हैं, वैसे ही गौड़देश के निवासी ब्राह्मण गौड़ कहाते हैं। अग्रवालों के पुरोहित गौड़ ब्राह्मण ही होते हैं। उरुचरितम् में जिस हरिहर ने अपने को राजा अग्रसेन के वंश का पुरोहित कहा है, उसे गौड़ ही लिखा गया है। बंगाल का नाम जो गौड़ पड़ा, उसमें एक हेतु यह भी बताया जाता है, कि इस गौड़ देश से कुछ ब्राह्मण वहां जाकर बसे थे और उन्हीं के कारण वह गौड़ कहाया जाने लगा था।

(२)

उरु चरितम् के अनुसार राजा अग्रसेन के भाई शूरसेन के नाम से ही मथुरा के समीपवर्ती प्रदेश का नाम शौरसेन पड़ा। इस बात में सत्यता का अंश कहां तक है, यह निश्चित कर सकना बड़ा कठिन है। पर यह ध्यान देने योग्य है, कि शूरसेनी नाम की एक जाति मथुरा के आसपास के प्रदेशों में रहती है। ये शूरसेनी लोग वैश्य समझे जाते हैं। कोई आश्चर्य नहीं, कि जिस प्रकार राजा अग्रसेन ने आग्रेय राज्य की स्थापना की, उसी तरह से शूरसेन ने अपने नाम से शौरसेन गण की स्थापना की हो, और आगे चलकर यह शौरसेन गण ही शूरसेनी वैश्यों के रूप में परिवर्तित हो गया हो। शौरसेन देश का उल्लेख महाभारत, पुराण आदि प्राचीन ग्रन्थों में सर्वत्र पाया जाता है।

इस सम्बन्ध में यह निर्देश कर देना भी अनुपयुक्त न होगा, कि पौराणिक अनुश्रुति में अन्धक वृष्णि संघ के मुख्य (मुखिया = राजा) श्री कृष्ण के ज्ञातियों का वर्णन करते हुवे उग्रसेन और शूरसेन का जिक्र

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

किया गया है। अन्धकवृष्णिसंघ में अनेक गणराज्य सम्मिलित थे। कई लोग उग्रसेन और अग्रसेन को एक ही समझते हैं। यद्यपि इन दोनों नामों की एकता को प्रदर्शित करने के लिये कोई प्रमाण नहीं है, पर मथुरा के समीपवर्ती प्रदेश में अग्रसेन और शूरसेन की सत्ता इस कल्पना को प्रोत्साहित अवश्य करती है, कि उग्रसेन और अग्रसेन को एक ही मान लिया जाय। अन्धकवृष्णिसंघ में सम्मिलित गणराज्य भी संभवतः वार्ताशस्त्रोपजीवि व वैश्य थे। शायद इसीलिये भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने अपनी 'अग्रवालों की उत्पत्ति' में श्री कृष्ण को वैश्य बताया है।

(३)

उरु चरितम् में जिस चन्द्रवंशी महाराज उरु का उल्लेख है, उस का पौराणिक वंशावलियों में कहीं पता नहीं चलता। पुराणों में उरु नाम के एक राजा का वर्णन अवश्य आता है, पर मथुरा के साथ उसका कोई सम्बन्ध नहीं है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तीसरा परिशिष्ट

भाटों के गीत

छत्रवान अग्रवाल धनवान पुत्रवान सावरी बेल कल्याणवान
राजा वासुक के दोहातमान अगर के शर तपे महा सुघर
वन मांह शहर जो कहिये अग्रोहा बसिया ताके नाम शहर
बसाया अग्रोहा जामे चार वर्ण सुख पाय सत्रा पुत्र भये ऋषिराई।

जाको सहसनाग घर व्याही सहसनाग के घर
व्याह के किये वचन इक सार
बांसुक वाचा कर चले दीनीं बुद्धि अपार
ताकी सेवा अंश ते भये वंश उद्योत

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अग्रोहे उत्पत भयं साढ़े सत्रह गोत्र
साढ़े सत्रा गोत्र पवित्र नर अग्रवाल सुयश बसो
अग्रवाल के वंश को जानत सकल जहान
तापे चंवर ढुले छत्र फिरे देत बड़े रे दान
अग्रवाल भूपाल दान दे मान बढ़ावै
अग्रवाल भूपाल कीर्ति कुल जस कुमावै
अग्रवाले वंश में गढ़ अग्रोहा स्थान
करो काम सब धर्म का सदा बधो कल्याण
पीताम्बर धोती बनी केशर तिलक चढ़ाय
पोते अग्रसेन के बैठे चंवर ढुलाय
एक लख निशान पदम दश रावल राणी
पंदरसो पखरेत भयो अकाश वाणी।
नाभ कमल के कमल कमल के केश मंह तल
वेद पुराण समर्थ समझ लियो दोय जात
ब्रह्मा रचि श्री अग्रवाल उत्पत है
एक वन ओंकार दोय धरति धर अम्बर
तीन कहुँ त्रिलोक चार जस वेद भनन्तर
पांच रचे ब्रह्माण्ड छटे दर्शन के मन्दिर
सिपत कमन के रिषन सर वर योगीन्द्र
दश कहुँ अवतार एक ध्रुव अग्यारह इन्द्र

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बारहमी भान रक्षा करे तेरवां रतन चौदगां तूं राजेश्वर
पंद्रसौ पखरेत सोलहवीं कला जलन्धर सिंहासन सत्तरा तुरी
अठारह भार वनस्पति उनीसा पर बीश हो राजा अग्रसेन को प्रकाश।

अग्रसेन के द्वादश पंत्र पुत्र घर बासक ब्याहन आये
किरोड़ सजे गजराज किरोड़ लख चले पैदल
राजा बांसुक घर मांडवा वाग्या शीश न छाबिये
अग्रसेन के वंश ने किये पूज्ये भाट बभूतिये
वार शनिश्चर पञ्चमी पहला पक्ष
शहर जो कहिये अग्रोहा जाती सूरज भरत है सक्ष
वाय बनी चौबीस ताल छतीस बंधाये
कूप एकसौ आठ तासु फिरत दुहाई
च्यार किल्ले चौफेर बने बारह दरवाजे
हाट बीस हजार बजे छत्तीसो बाजे
दातार इते दुनिया में सात करोड़ दतब दिया
जिन पूज्या भाट बभूतिया
मङ्गल विन्दल गोत्र ढेलण सिंहल सर्व देशा
जित्तल मित्तल गोत्र तुंगल तायल धर्मधारी
मङ्गल गोत्री मोहना सिंहल गोत्र सपूत
गर्ग गोत्री घोड़ा देवे मलकन जात

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मंडन नागल जिन्दल गोत्र पंच मन देह बड़ाई
ऐरण से ठेरण पति साढ़े सत्रह गोत्र
पवित्र नर अग्रवाल सुयश बसो
अग्रसेन शुभ नाम अग्रकुल कियो उजागर
अग्रवाल भूपाल वैश्य कुल कीर्ति कलाधर
शौर्य दया की मूर्ति दीपति बल वैभव के घर
पुत्रवान धनवान रहे गोपाल निरन्तर
क्षत्रीगण के बीच वैश्य राज स्थापित किया
बनियों में वीरता यह जग को दिखला दिया
रहे सदा नवनिध उनके पुन्य प्रताप से
होय इतिहास प्रसिद्ध अग्रवाल वंश फूले फले
बाय बनी चौबीस पात्र छत्तीस बंधाये
कूप तेरा सौ साठ ता ऊपर फिरत दुहाई
चार किले चौफेर बने षोडस दरबाजे
हाट छप्पन हजार बजे छत्तीसों बाजे
सवा लाख घर शहर में बसतां ऊपर स्थिर रहे
राजा अग्र बसायो अग्रोहा एता काम श्रेता किया

अग्रोहा से निकल कर अठारा बास बसाये
प्रथम बास हिसार शहर हांसी बसायो

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तीन गांव तोशाम तासु पर फिरे दुहाई
सिरसा शहर सुहावना नारनोल नामी तखत
पंच गांव पंच भावना सातों शहर सुथान
मध्य रोहतक भी जानो पानीपत करनाल जिंद
कैथल बखानो मंठ दिल्ली दिय डिंप सुनाम
बुडियो नगर चढ़ती कला सहारनपुर जगाधरी
अठारह बास अग्रवाल का महादेव रक्षा करी
और कांटी कानुड़ घरी सुधक तपे धर्णी
माता जिलो पाटण जोर समर्थ यों भवर विधाता
नामल और अमृतसर अलवर पुण्य दान कीजै एता
उदयपुर आमोर सांभर कुचामण मेडतो पाली श्रीयो
को सौभाग्य साह डिडवाणों डका बजे

(ब्रह्मानन्द ब्रह्मचारी द्वारा संकलित)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

टिप्पणी

भाटों के इन गीतों में एक बात महत्व की है। इनमें उन अठारह बस्तियों का उल्लेख है, जिन्हें अगरोहा छोड़कर अग्रवालों ने बसाया था। अगरोहा से चलकर अग्रवाल लोग बहुत दिन तक इन तोशाम, महिम, सिरसा आदि अठारह बस्तियों में बसते रहे। वहां से फिर वे अन्य स्थानों पर गये। यही कारण है, कि आजकल बहुत से अग्रवाल परिवारों को यह स्मरण नहीं है, कि उनका आदिम निवास स्थान अगरोहा है। अपने आदि निवास स्थान के विषय में पूछने पर वे महिम, तोशाम आदि किसी बस्ती को बताते हैं। यह स्वाभाविक भी है। अगरोहा छोड़कर देर तक अन्य स्थान पर बसे रहने के कारण वे उसे ही अपना आदिम निवास समझने लगे। भाटों के गीतों में जिन अठारह बस्तियों का उल्लेख है, उनमें अब भी अग्रवालों की संख्या बहुत अधिक है। अग्रवालों की अनुश्रुति में यहां फिर 'अठारह' अंक का महत्त्व है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अठारह गोत्रों के समान इन बस्तियों की संख्या भी अठारह ही है। सम्भवतः, अग्रवालों के अठारह गोत्रों का इन अठारह बस्तियों के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। इन बस्तियों के बसने से पूर्व भी अग्रवालों में अठारह गोत्र थे।

भाटों के ये गीत, अगरोहा उजड़ने के बाद अग्रवालों ने जो बस्तियां बसाई, उन्हीं का उल्लेख करते हैं। अत्यन्त प्राचीन काल में आगरा, आगर (मध्य भारत) आदि में उन्होंने जो उपनिवेश व बस्तियां बसाई थी, उनका इनमें जिक्र नहीं।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चौथा परिशिष्ट

भारतीय इतिहास के वैश्य राजा

भारत के प्राचीन इतिहास में बहुत से राजा हुवे हैं, जिन्हें स्पष्ट रूप से वैश्य लिखा गया है। पुराणों की वंशावलियों में केवल वैशालक वंश ही ऐसा है, जिसे वैश्य वंश कहा जा सकता है। पर बाद के इतिहास में अनेक ऐसे वंश आते हैं, जिन्हें विविध लेखकों ने वैश्य लिखा है। इनमें मुख्य मगध का गुप्त वंश, स्थाण्वीश्वर (थानेसर) का वर्धन वंश और चम्पावती का नाग वंश हैं।

मंजुश्रीमूल कल्प नामक जो बौद्ध ऐतिहासिक ग्रन्थ उपलब्ध हुवा है, उसमें विविध राजाओं की जाति साथ में दी गई है। उसके कुछ उद्धरण हम यहां देते हैं—

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

"उस समय दो बहुत धनी आदमी थे, जो विष्णु के पुत्र थे। उनमें से एक का नाम भ से शुरू होता था। वे दोनों मुख्य मन्त्री थे। वे दोनों अत्यन्य धनी, श्रीमान्, प्रसिद्ध और शासन कार्य में रत थे। ....आगे चल कर वे स्वयं स्वामी (मनुजेश्वर) हो गये, और उनमें से एक राजा (भूपाल) हो गया।

तदनन्तर, ७८ वर्ष तक तीन राजाओं ने राज्य किया। वे श्रीकण्ठ के निवासी थे। एक का नाम आदित्य था, वह वैश्य था और स्थाण्वीश्वर में रहता था। अन्त में ह (हर्ष वर्धन) नाम का राजा सब देशों का चक्रवर्ती राजा (सर्वभूमिनराधिपः) हो गया।[1]"

इस उद्धरण में थानेसर के वर्धन राजाओं का हाल दिया गया है। इन्हें स्पष्ट रूप से वैश्य लिखा है। इस वंश का प्रारम्भ आदित्य या आदित्यवर्धन से माना है, जिसकी वंशावली यह है—

आदित्यवर्धन
|
प्रभाकरवर्धन
|
राज्यवर्धन — हर्षवर्धन

1. विष्णु प्रभवौ तत्र महाभोगौ धनिनौ तदा। ६१४
मध्यमात् तौ भकाराद्यौ मन्त्रिमुख्यौ उभौ तदा।
धनिनौ श्रीमतौ ख्यातौ शासनेऽस्मिं हिते रतौ ॥६१५
ततः परेण मंत्री भूपालौ जातौ मनुजेश्वरौ ॥१६६

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हर्षवर्धन का शासनकाल ६०६ ईस्वी से ६४७ ईस्वी तक है। इस वंश ने कुल ७८ वर्ष (या दक्षिणी भारत में प्राप्त मंजुश्रीमूल कल्प की प्रति के अनुसार ११५ वर्ष) तक राज्य किया। प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्यूनत्सांग ने भी, जो महाराज हर्षवर्धन की राजसभा में देर तक रहा था, इन राजाओं को वैश्य लिखा है। राज्यवर्धन और हर्षवर्धन के सम्बन्ध में मंजु श्री मूलकल्प की निम्नलिखित पंक्तियां उल्लेख योग्य हैं—

"उस समय मध्यदेश में र (राज्यवर्धन) नाम का राजा अत्यन्त प्रसिद्ध होगा। वह वैश्य जाति का होगा। वह शासन कार्य में अत्यन्त समर्थ तथा सोम नाम के राजा के समान ही होगा। उसका छोटा भाई ह (हर्षवर्धन) एक ही वीर होगा। उसकी सेना बहुत बड़ी होगी। वह शूर, पराक्रमी तथा बड़ा प्रसिद्ध होगा। सोम (शशांक) राजा के विरुद्ध आक्रमण कर वह वैश्य राजा (हर्षवर्धन) उसे परास्त करेगा।[1]"

सप्त्यष्टौ तथा त्रीणि श्रीकण्ठावासिनस्तदा।

आदित्यनामा वैश्यास्तु स्थानमीश्वरवासिनः ॥६१७

भविष्यति न सन्देहो अन्ते सर्वत्र भूपतिः

हकाराख्यो नामतः प्रोक्तो सर्वभूमिनराधिपः ॥६१८

मंजुश्रीमूलकल्प पृष्ठ ४५

I. भविष्यते च तदाकाले मध्यदेशे नृपो वरः।

रकाराख्यस्तु विद्यात्मा वैश्य वृत्तिमचञ्चलः ॥ ७१९

शासनेऽस्मिं तथा शक्त सोमाख्य ससमो नृपः। ७२०

तस्याप्यनुजो हकाराख्य एकवीरो भविष्यति

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यह बात महत्व की है, कि थानेसर के जिन राजाओं का भारतीय इतिहास में इतना महत्व है, और जिन्होंने कुछ समय के लिये प्रायः सारे उत्तरी भारत को अपने आधीन कर लिया था, वे वैश्य थे। थानेसर करनाल जिले में है, करनाल और थानेसर हिसार व अगरोहा से दूर नहीं हैं। भाटों के गीतों के अनुसार अगरोहा छोड़कर अग्रवालों ने जो प्रारम्भिक बस्तियां बसाई थीं, उनमें ये स्थान अन्तर्गत थे। कोई आश्चर्य नहीं, कि स्थाण्वीश्वर के वैश्य राजाओं का—जो उरु चरितम् के शूरसेन की तरह एक अन्य राजा के मन्त्री बन कर फिर स्वयं सर्वेसर्वा हो गये थे—अगरोहा के वैश्य आग्रेय गण के साथ कोई सम्बन्ध हो।

मंजुश्री मूल कल्प ने नाग वंश को भी वैश्य लिखा है। भारतीय इतिहास में नाग वंश का बड़ा महत्व है। जायसवाल जी ने इनकी प्रसिद्ध भारशिव वंश से एकता स्थापित की है। नागों का वर्णन इस प्रकार किया गया है—

"तब फिर वैश्य वंश का राजा शिशु राज्य करेगा। फिर नागराज नाम का राजा गौड देश का शासन करेगा। उसके समीप ब्राह्मण और वैश्य रहेंगे। नाग राजा स्वयं भी वैश्य होंगे और वैश्यों से ही घिरे रहेंगे।[1]"

महासैन्य समायुक्तः शूरः क्रान्तविक्रमः ।। ७२१

निर्घास्ये हकाराख्यो नृपतिं सामं विश्रुतम्

वैश्यवृत्तिस्ततो राजा महासैन्यो महाबलः ।। ७७२

पराजयामास सोमाख्यम्………… ७१५

मंजुश्रीमूलकल्प पृष्ठ ५३—५४

1. वैश्यवर्णशिशुस्तदा ।।७४६

नागराजसमाह्वयो गौडराजा भविष्यति

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इन वैश्य नागों का इतिहास हमें लिखने की आवश्यकता नहीं। श्री काशीप्रसाद जी ने इस बात पर आश्चर्य प्रगट किया है, कि इन नाग राजाओं को वैश्य क्यों लिखा गया है। पर हमें इसमें कोई आश्चर्य प्रतीत नहीं होता। नाग राजाओं का वैश्य अग्रवंश से प्राचीन सम्बन्ध है। उनको भी यदि वैश्य जातियों में सम्मिलित किया गया हो, तो यह सर्वथा सम्भव है।

वर्धन तथा नाग वंश के अतिरिक्त भारतीय इतिहास के सुप्रसिद्ध गुप्त वंश को भी मंजुश्री मूल कल्प ने वैश्य लिखा है। इसी गुप्त वंश में चन्द्रगुप्त प्रथम, समुद्रगुप्त, चन्द्रगुप्त द्वितीय (विक्रमादित्य), कुमारगुप्त और स्कन्दगुप्त जैसे प्रसिद्ध सम्राट् हुवे। इस सम्बन्ध में भी मंजुश्री मूल कल्प की निम्नलिखित बातें उल्लेख योग्य हैं—

"निःसन्देह उस देश में तब एक राजा होगा, जो मधुरा (मथुरा) का उत्पन्न हुवा होगा, और जिसकी माता वैशाली की होगी। वह वणिक् (वैश्य) जाति का होगा। वह मगध देश का राजा हो जावेगा।"

अन्ते तस्य नृपे तिष्ठं जयाद्यावर्णनद्विशौ ॥७५०

वैश्यैः परिवृता वैश्यं नागाह्वयो समन्ततः ॥७५१

मंजुश्रीमूलकल्प पृ० ५५-५६

1. भविष्यन्ति न सन्देहः तस्मिं दशे नराधिपाः

मथुराजातो वैशाल्या वणिक् पूर्वी नृपो वरः

सोऽपि पूजितमूर्तिस्तु मागधानां नृपो भवेत् ॥७६०

मंजुश्रीमूलकल्प पृ० ५६

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यह वर्णन गुप्तवंश के एक राजा के सम्बन्ध में किया गया है। इससे तीन बातें स्पष्ट हैं—गुप्तवंश के राजा वैश्य जाति के थे। उनका उद्भव मथुरा में हुवा था और उनका वैशाली के साथ सम्बन्ध था। मथुरा उस प्रदेश में है, जहां से वैश्य आग्रेयगण दूर नहीं है। स्वयं मथुरा का घनिष्ठ सम्बन्ध राजा अग्रसेन के भाई वैश्य शूरसेन के साथ जोड़ा गया है। उरुचरितम् के अनुसार तो शौरसेन देश जो मथुरा कहाने लगा, उसका कारण यह वैश्य शूरसेन ही था। वैशाली के प्राचीन राजवंश वैशालक वंश का उद्भव वैश्य भलन्दन तथा वात्सप्री से हुवा था, राजा विशाल की कन्याओं से राजा धनपाल के पुत्रों का विवाह हुवा था। इस प्रकार वैशाली के वंश का वैश्यों के साथ गहरा सम्बन्ध है, और गुप्तों का वैश्य होना सर्वथा संगत है।

गुप्तवंशी सम्राट वैश्य थे, यह जहां मंजुश्रीमूलकल्प से सूचित होता है, वहां इन राजाओं का अपने नामों के साथ 'गुप्त' लगाना भी इसी बात का द्योतक है। 'गुप्त' लगाने की परम्परा वैश्यों में ही है, और धर्मग्रन्थों ने भी इसका विधान किया है। पर श्री काशीप्रसाद जायसवाल ने अपने ग्रन्थ A Political History of India में गुप्तों को जाट सिद्ध किया है। उनकी मुख्य युक्तियां निम्नलिखित हैं—

(१) गुप्त सम्राटों का गोत्र धारण था। एक शिलालेख में गुप्त राजकुमारी प्रभाकरगुप्ता को 'धारण गोत्रीया' लिखा गया है। उसके पति का गोत्र 'विष्णुवृद्ध' था। प्रभाकर गुप्ता का अपना गोत्र धारण था। यह धारण गोत्र जाटों में है। क्योंकि उनकी एक उपजाति धेनृ (Dhenri) हैं, जो अमृतसर जिले में पाई जाती है। ये धेनृ जाट

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सम्भवतः धारण गोत्री गुप्तों के प्रतिनिधि हैं। श्री जायसवाल जी के बाद श्रीयुत दशरथ शर्मा ने बिहार एएड उड़ीसा रिसर्च सोसाइटी के मुखपत्र में एक लेख द्वारा प्रगट किया है, कि बीकानेर रियासत के जाटों में एक भेद धारणिया है। अतः गुप्त सम्राटों का प्रतिनिधि बीकानेर के इन धारणिया जाटों को समझना अधिक उपयुक्त है, अमृतसर के धेनृ जाटों को नहीं।

(२) कौमुदी महोत्सव नामक संस्कृत नाटक में एक राजा चण्डसेन का वृतान्त है, जिसने कि मगध को जीत कर अपने आधीन कर लिया था। उसने पश्चिम की तरफ से पाटलीपुत्र पर आक्रमण किया था। इस चण्डसेन को कारस्कर लिखा गया है। कारस्कर नाम की एक जाति पंजाब में रहती थी, जो पंजाब के निवासी वाहीकों व जात्रिकों (जाटों) की एक शाखा थी। श्री० जायसवाल जी के अनुसार कौमुदी महोत्सव का चण्डसेन और गुप्तवंश का चन्द्रगुप्त एक ही हैं। अतः चन्द्रगुप्त की जाति कारस्कर हुई, और उसका पंजाब की तरफ से आक्रमण कर मगध पर अधिकार करना सूचित होता है।

(३) गुप्त सम्राट् अपनी जाति कहीं भी प्रगट नहीं करते। इससे अनुमान होता है, कि वे उच्च जाति के नहीं थे। सम्भवतः उन्होंने जान बूझ कर अपनी जाति को छिपाया है।

श्री० जायसवाल जी की इस युक्ति परम्परा पर विचार करने की आवश्यकता है। गुप्त सम्राटों की जाति को निश्चित करने का एक अच्छा साधन कुमारी प्रभाकर गुप्ता का धारण गोत्र है। यह धारण गोत्र दैरण (धैरण) की शकल में वैश्य अग्रवालों में भी पाया जाता है। इसके

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लिए अमृतसर की सर्वथा अप्रसिद्ध धेनृ जाति या बीकानेर की धारणिया जाति को खोजने की आवश्यकता नहीं है। धारण-गोत्रीया प्रभाकर गुप्ता का विवाह जिस कुमार से हुवा था, उसके वंश को भी वैश्य कहा गया है, उसका वैश्य धारण गोत्र की कुमारी से विवाह होना अधिक संगत है, छोटी जाति की कुमारी से नहीं।

गुप्त सम्राटों ने अपनी जाति को छिपाया है, यह कहना शायद उचित नहीं है। सम्भवतः, अपने वंश के सम्बन्ध में सब से अधिक स्पष्ट रूप से उन्होंने ही सूचना दी है। धर्म ग्रन्थों के आदेश 'गुप्तेति वैश्यस्य' का अनुसरण करते हुवे उन्होंने 'गुप्त' शब्द का अपने नामों के साथ प्रयोग किया है। धर्मस्मृतियों के निर्माण का समय भी ऐतिहासिक लोग प्रायः गुप्त काल को मानते हैं। जिस काल के धर्मशास्त्र प्रणेता यह व्यवस्था कर रहे हों, कि वैश्य लोग अपने नाम के साथ गुप्त लगावें, उसी काल के परम धार्मिक वैष्णव सम्राट् 'जाट' होकर अपने साथ 'गुप्त' प्रयुक्त करें, यह कुछ असंगत प्रतीत होता है।

कौमुदी महोत्सव के चण्डसेन की चन्द्रगुप्त से एकता कहां तक उचित है, यह भी संदेहास्पद है। पर इसे मान भी लें, तो चण्डसेन का जाट होना इस ग्रन्थ से सूचित नहीं होता। 'कारस्कर' शब्द का प्रयोग कौमुदी महोत्सव में घृणा को सूचित करने के लिए हुवा है, ठीक उसी तरह जैसे उसी ग्रन्थ में लिच्छवियों को म्लेच्छ कहा गया है। क्या हम यह समझें, कि लिच्छवी लोग म्लेच्छ थे, क्योंकि कौमुदी महोत्सव ने उन्हें घृणार्थ में म्लेच्छ कहलाया है? इसी तरह केवल कारस्कर कह देने से ही चण्डसेन का उस जाति का होना सूचित नहीं

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होता। यह ठीक है, कि कारस्कर पंजाब की तरफ के रहने वाले थे। पर पंजाब में जाटों के अतिरिक्त अन्य भी बहुत सी जातियां बसती थीं। कारस्कर जाट थे, यह सिद्ध करने में जायसवाल जी को सफलता नहीं मिली। वैश्य आग्रेय लोग भी पंजाब के निवासी थे। कारस्कर शब्द का प्रयोग कौमुदी महोत्सव ने पश्चिम की तरफ के लोगों के लिये घृणार्थ में किया है। इस दृष्टि से वैश्य आग्रेयों के लिये भी इस शब्द का प्रयोग हो सकता है।

जाट लोग अपने को क्षत्रिय कहते हैं। वे नीच जाति के हैं, और इसीलिये गुप्त सम्राट् अपने वंश को बताने में संकोच करते थे, इसे जाट लोग कभी स्वीकार न करेंगे।

मंजुश्रीमूलकल्प में 'मथुराजातः' का अर्थ मथुरा का जाट समझना भी कुछ उचित नहीं है, क्योंकि अगला ही शब्द 'वणिक्' है। यदि लेखक का मथुराजातः से अभिप्राय मथुरा का जाट होता, तो वह अगला ही शब्द 'वणिक्' न लिखता। मथुराजातः का अर्थ मथुरा में पैदा हुवा ही है। मंजुश्रीमूलकल्प के लेखक को, जैसा कि जायसवाल जी ने लिखा है, गुप्त शब्द से भ्रम नहीं हो गया था। इसी शब्द के कारण भ्रमवश उसने चन्द्रगुप्त, समुद्रगुप्त आदि को वैश्य नहीं लिख दिया है। हम समझते हैं, उसने सच्ची ऐतहासिक अनुश्रुति के आधार पर ही यह बात लिखी है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पांचवां परिशिष्ट

मध्यकाल में अग्रवाल जाति

अग्रवालों के प्राचीन इतिहास पर हम विस्तार से विचार कर चुके हैं। अग्रवाल जाति की उत्पत्ति किस प्रकार हुई, महाराज अग्रसेन कौन थे, उनका वंश कौनसा था, अगरोहा पर किन विदेशियों के आक्रमण हुवे—आदि सभी महत्वपूर्ण प्रश्नों की हमने विशदरूप से विवेचना की है। अगरोहा के पतन के बाद वहां के निवासी अग्रवाल लोग धीरे धीरे अन्य स्थानों पर बसने लगे। पहले उन्होंने अगरोहा के समीप ही अठारह बस्तियां बसाई, फिर वहां से भी अन्यत्र जाकर बसने शुरू हुवे, और धीरे धीरे उत्तरी भारत के प्रायः सभी प्रदेशों में फैल गये।

अग्रवालों का राजनीतिक इतिहास तो तभी समाप्त हो गया था, जब आग्रेय गण भारत के साम्राज्यवादी नरेशों के अधीन हुवा था। इसके

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बाद इस गण के लोग एक पृथक् जाति के रूप में परिवर्तित हो गये— यह भी हम पहले प्रदर्शित कर चुके हैं। इस समय से इस गण या जाति का अपना कोई इतिहास नहीं है, पर इसके कुछ प्रमुख मनुष्यों ने अपनी प्रतिभा तथा प्रताप से जो उन्नति की, उसका कुछ कुछ परिचय अवश्य मिलता है। हम पिछले परिशिष्ट में यह सम्भावना प्रकट कर चुके हैं, कि गुप्तवंशी सम्राट वैश्य आग्रेय थे। अन्य भी अनेक राजाओं व सम्राटों का वैश्य होना हम प्रदर्शित कर चुके हैं। यह सर्वथा सम्भव है, कि आग्रेय गण के कुछ प्रतापी वैश्य कुमारों ने अपनी शक्ति और प्रतिभा द्वारा इन वैश्य वंशों का प्रारम्भ किया हो।

भारतीय इतिहास में आठवीं सदी एक अत्यन्त महत्वपूर्ण परिवर्तन की सदी है। इस काल में भारत की राजनीतिक शक्ति प्रधानतया उन जातियों के हाथ में चली गई, जिन्हें आजकल राजपूत कहा जाता है। भारत के पुराने राजवंशों व राजनीतिक शक्तियों का इस समय प्रायः लोप हो गया। पुराने मौर्य, शुंग, पञ्चाल, अन्धक, वृष्णि, क्षत्रिय, भोज आदि राज कुलों का नाम अब सर्वथा लुप्त हो गया, और उनके स्थान पर चौहान, राठौर, प्रमार, राष्ट्रकूट आदि नये राजकुलों की शक्ति प्रगट हुई। पुराने राजकुलों के साथ ही आग्रेय कुल की शक्ति तथा कीर्ति भी मन्द पड़ गई। यही कारण है, कि इस काल में आग्रेय व अग्रवालों के सम्बन्ध में कुछ भी परिचय प्राप्त नहीं होता।

दसवीं सदी में भारत पर तुर्कों के आक्रमण शुरू हुवे। पश्चिम की तरफ के इन विविध मुसलमान आक्रान्ताओं—तुर्क, पठान और मुगलों—

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

के आक्रमण कई सदियों तक जारी रहे। धीरे धीरे राजपूतों की शक्ति भी मन्द पड़ने लगी, और भारत का बड़ा भाग विविध मुसलमान कुलों के अधीन हो गया। इस काल तक भारत के प्राचीन गणराज्य पूर्णतया जाति के रूप में परिवर्तित हो चुके थे। वार्ताशस्त्रोपजीवि गणों की शस्त्रोपजीविता सर्वथा नष्ट हो चुकी थी, वार्ता (कृषि, पशुपालन और वाणिज्य) में ही उन्होंने विशेष उन्नति कर ली थी। अगरोहा के ध्वंस के बाद अग्रवाल लोग जब अन्य स्थानों पर बस रहे थे, तो स्वाभाविक रूप से उनका संसर्ग उस समय की राजनीतिक शक्तियों के साथ हुवा। यही कारण है, कि कुछ अग्रवाल अपनी प्रतिभा और योग्यता के कारण ऊँचे ऊँचे राजकीय पदों पर अधिष्ठित हुवे। सौभाग्यवश, इनका कुछ कुछ परिचय इस समय भी प्राप्त किया जा सकता है। यद्यपि अग्रवालों के प्राचीन इतिहास के साथ इनका कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है, पर अग्रवाल जाति के इतिहास में इनका उल्लेख किया जाना उपयोगी है। इसी दृष्टि से यहां हम कुछ ऐसे प्रतापी अग्रवालों का संक्षिप्त परिचय देने का प्रयत्न करेंगे, जिन्होंने अपनी शक्ति व योग्यता से मध्यकालीन भारतीय इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया।

इस सम्बन्ध में जो भी परिचय हम यहां दे रहे हैं, उसका मुख्य आधार बृटिश सरकार द्वारा प्रकाशित डिस्ट्रिक्ट गेजेटियर हैं। सरकार द्वारा प्रकाशित गेजेटियरों में प्रत्येक जिले के मुख्य मुख्य परिवारों का परिचय दिया गया है। स्वाभाविक रूप से इनमें वर्तमान प्रमुख परिवारों के उन पूर्वजों का भी जिक्र है, जिन्होंने कोई असाधारण कार्य कर कीर्ति को प्राप्त किया था। डिस्ट्रिक्ट गेजेटियरों के अतिरिक्त, अन्य भी कुछ

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ऐतिहासिक पुस्तकों का प्रयोग इस विवरण के लिये किया गया है। इन पुस्तकों का उल्लेख साथ साथ ही कर दिया गया है।

यद्यपि यह मध्यकाल के अग्रवालों का क्रमबद्ध इतिहास नहीं है, तथापि इसकी उपयोगिता में सन्देह नहीं किया जा सकता।

(१)

पटियाला का दीवान नन्नूमल

सन् १७६५ में महाराज अमरसिंह पटियाला की राजगद्दी पर बैठे। उनका दीवान लाला नन्नूमल था। राजा अमरसिंह के युद्धों में दीवान नन्नूमल ने बड़ा महत्वपूर्ण भाग लिया। राजा अमरसिंह अपने समीपवर्ती मुगल दुर्गों को जीत कर उन पर अपना अधिकार स्थापित कर रहा था। फतहाबाद और सिरसा पर वह अपना अधिकार जमा चुका था। फिर उसने रानिया पर हमला किया। इसी बीच में दिल्ली के मुगल सम्राट् की आज्ञा से हांसी के सूबेदार रहीमदाद खां ने जींद पर हमला किया। इस समाचार को सुनकर अमरसिंह ने जींद की रक्षार्थ दीवान नन्नूमल को भेजा। दीवान नन्नूमल बड़ा कुशल सेनापति था। उसने कैथल और जींद की सेनाओं के साथ बड़ी सफलता से अपना सम्बन्ध स्थापित किया, और तीनों सेनाओं (जींद, कैथल और पटियाला) ने मिलकर वीरता के साथ मुगल सेनापति का मुकाबला किया। मुगल सेना परास्त हुई और रहीमदाद खां वापिस लौट गया।

इसके बाद दीवान नन्नूमल ने हांसी और हिसार के ऊपर हमला किया। इन दोनों जिलों की मुगल सेनाओं को परास्त कर दीवान

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नन्नूमल ने वहां पटियाला का आधिपत्य स्थापित किया। इसी बीच में सरदार हरिसिंह ने पटियाला के महाराज अमरसिंह के विरुद्ध बग़ावत की। इसे दबाने के लिये दीवान नन्नूमल गया और सफलता पूर्वक हरिसिंह को परास्त किया।

दिल्ली के बादशाह का प्रधान मन्त्री इन दिनों नवाब मजदुद्दौला अब्दुल अहद था। वह बड़ा महत्त्वाकांक्षी था। उसने दिल्ली की बादशाहत की शक्ति की पुनः स्थापना के लिये पटियाला राज्य पर आक्रमण किया। पटियाला से १६ मील की दूरी पर घराम नामक गांव में दीवान नन्नूमल ने उसका सामना किया और अपने राज्य की दिल्ली की बादशाहत से रक्षा की।

सन् १७८१ में पटियाला के महाराज अमरसिंह की मृत्यु हो गई। उनका लड़का साहिबसिंह केवल ६ वर्ष की आयु का था। पटियाला के सिक्ख राज्य की स्थापना जिन परिस्थितियों में हुई थी, उनमें राज्य को संभाल सकना किसी बहुत ही योग्य व्यक्ति का काम था। रानी हुक्मां की प्रेरणा से इस समय दीवान नन्नूमल पटियाला का प्रधान मन्त्री (वजीर) बना। निःसन्देह, उससे अधिक योग्य और कुशल व्यक्ति पटियाला राज्य में अन्य कोई न था। साहिबसिंह के गद्दी पर बैठते ही चारों तरफ विद्रोह की ज्वालायें भड़क उठीं। इनमें तीन विद्रोह बड़े प्रसिद्ध हैं। पहला विद्रोह भवानीगढ़ के सूबेदार सरदार महानसिंह के नेतृत्व में हुवा। इसे दीवान नन्नूमल ने बड़ी वीरता के साथ दमन किया। दूसरा विद्रोह कोट सुमेर में शुरू हुवा। अभी नन्नूमल इसे दमन करने में लगा था, कि सरदार आलासिंह के नेतृत्व में तीसरा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

विद्रोह भीखे में शुरू होगया। सरदार आलासिंह राजा अमरसिंह की दूसरी विधवा रानी खेमकौर का भाई था। राजदरबार में स्वाभाविक रूप से उसका बड़ा प्रभाव था। इस तीसरे विद्रोह ने बड़ा विकट रूप धारण किया। पर दीवान नन्नूमल जरा भी विचलित नहीं हुवा। उसने एक बड़ी भारी सेना एकत्रित की, जिसमें पटियाला, जींद, नाभा, मलेरकोटला, भदौड़ और रामघरिया राज्यों की फौजें शामिल थीं। दीवान नन्नूमल ने इस सेना के साथ विद्रोहियों का खूब मुकाबला किया और अन्त में उन्हें परास्त किया। जब सरदार आलासिंह ने देखा, कि दीवान का मुकाबला कर सकना असम्भव है, तब एक दिन रात के समय अवसर पाकर वह भाग निकला और अपने घर तलवण्डी में जा पहुँचा। पर नन्नूमल ने वहां भी उसका पीछा किया और उसे कैद कर लिया।

इसी बीच में सन् १७८३ में उत्तरी भारत में बड़ा भारी दुर्भिक्ष पड़ा। पटियाला में भी इसका बड़ा प्रकोप हुवा। इस अवसर पर जो अव्यवस्था हुई, उससे लाभ उठाकर पटियाला के सरदारों में विद्रोह की प्रवृत्ति फिर प्रबल होने लगी। पर दीवान नन्नूमल अब भी विचलित न हुवा। वह असाधारण योग्यता का मनुष्य था—आपत्ति के समय में उसकी शक्ति और भी बढ़ जाती थी। उसने लखनऊ से खूब सीखे हुवे तोपचियों को बुलाया और ऐसे आफिसर भी नौकरी में रखे, जो पटियाला की सेना को नये यूरोपियन ढंग से संगठित कर सकें। इस सेना की मदद से उसने इन नये विद्रोहों को भी सफलता से परास्त किया। इन्हीं युद्धों में दीवान को तलवार से चोट आई और कुछ समय के लिये

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उसका जीवन ही खतरे में पड़ गया। पर कुछ समय बाद वह स्वस्थ हो गया और विद्रोहियों को परास्त करने में समर्थ हुवा।

अगले वर्ष रानी हुक्मां की मृत्यु हो गई। इससे दीवान नन्नूमल के शत्रुओं की शक्ति बढ़ गई। रानी खेमकौर की पार्टी ने उसे कैद कर लिया और कैदी के रूप में पटियाला ले आये। पर सिक्ख सरदारों में एक व्यक्ति और था, जो दीवान के वास्तविक महत्व को समझता था। यह थी, रानी राजेन्द्र कौर। उसने एक दल संगठित कर दीवान को कैद से मुक्त किया और फिर प्रधानमन्त्री के पद पर अधिष्ठित किया।

दीवान के कैद होने के समाचार से सारे राज्य में विद्रोह और अव्यवस्था मच गई थी। इस स्थिति में नन्नूमल ने अनुभव किया, कि राज्य में शान्ति स्थापित करने के लिये पटियाला के सरदारों पर निर्भर करना कठिन है। उसने मराठा सरदार धारराव के साथ बातचीत शुरू की। धारराव, उन दिनों दिल्ली तथा उसके समीपवर्ती प्रदेश पर अपना अधिकार जमा चुका था, और यमुना तथा सतलुज नदियों के बीच के प्रदेश के अनेक सिक्ख राज्य उसके साथ सन्धि कर चुके थे। धारराव की सहायता से नन्नूमल के विविध विद्रोही सरदारों को परास्त किया। धारराव तो कुछ दिनों में लौट गया, पर नन्नूमल को राज्य को व्यवस्थित व शान्त करने में असाधारण सफलता मिली। विद्रोही सरदार वश में आ गये और फिर से राजकीय कर व्यवस्थित रूप से वसूल होने लगे। महाराज अमरसिंह की मृत्यु के बाद जो विपत्तियां पटियाला राज्य पर आई, उन सब का दीवान नन्नूमल ने बड़ी सफलता से निवारण किया।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दीवान नन्नूमल सुनाम नामक गांव का निवासी था, और जाति से अग्रवाल था। ऐतिहासिक ग्रीफिथ ने उसकी वीरता, कार्य कुशलता तथा योग्यता की भूरि भूरि प्रशंसा की है। उसने लिखा है—"वह बड़ा अनुभवी तथा सच्चा मनुष्य था। उसने क्या रणक्षेत्र और क्या राजसभा—दोनों में राजा अमरसिंह के लिए बड़ा उत्तम कार्य किया।" उसके लड़के साहिबसिंह का राज्य भी जो संभाल रहा, वह नन्नूमल का ही कर्तृत्व था।

(ग्रीफिन के Panjab Rajas से संकलित)

(२)

बनारस का राय परिवार

इस परिवार के सब से प्रसिद्ध पुरुष राय रामप्रताप हुवे हैं। ये प्रसिद्ध मुगल सम्राट अकबर के समय में जनाने महल के दारोगा थे। इनकी प्रतिभा तथा योग्यता से प्रसन्न होकर अकबर ने इन्हें वंश-परम्परागत रूप से 'राय' का खिताब दिया। अबतक भी रामप्रताप के वंशज अपने नाम के साथ 'राय' लगाते हैं। साथ ही, अकबर ने रामप्रताप को 'आली खानदान' का सम्मान प्रदान किया। इसके अतिरिक्त शाही मुहर से अंकित एक बहुमूल्य नौलखा हार भी अकबर की तरफ से रामप्रताप को उपहार में मिला था, जो अब तक उनके वंशजों के पास है। अकबर बड़ा गुणग्राही सम्राट था। उसके समय में बहुत से हिन्दुओं ने अपनी योग्यता के कारण ही ऊंचे ऊंचे पद प्राप्त किये और असाधारण उन्नति की। राय रामप्रताप इनमें से एक थे।

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इसी वंश में आगे चल कर जो भी पुरुष हुवे, सब मुग़ल दरबार में कार्य करते थे। उनमें राय इन्द्रमान बहुत प्रसिद्ध हुवे। राय इन्द्रमान ने बहुत उन्नति की, और शाहजहां के समय में दीवान के महत्त्वपूर्ण पद तक पहुंच गये। मुगल बादशाह से उन्हें 'राजा' का खिताब प्राप्त हुवा।

राजा इन्द्रमन के पौत्र राय ख्यालीराम हुवे। इनके समय में मुगल बादशाहत निर्बल हो चुकी थी, और ब्रिटिश लोगों की शक्ति भारत में बढ़ रही थी। बंगाल ब्रिटिश लोगों के हाथ में आ चुका था, और साथ ही बिहार पर भी अंग्रेजों का आधिपत्य स्थापित होरहा था। राय ख्यालीराम बादशाह शाहआलम के समय में बादशाह के वकील थे, और बिहार प्रान्त के नायब दीवान सूबा हो गये थे। इनको शाहआलम बहुत मानते थे, और बादशाह के बहुत गुप्त काम इनको सौंपे जाते थे। शाहआलम के अंग्रेजों से संधि करने पर जब बिहार अंग्रेजों के हाथ में आया, तो भी ये बिहार के डिप्टी गवर्नर रहे। लार्ड क्लाइव ने इन्हें राजा बहादुर की पदवी प्रदान की थी। आगे चल कर जब ईस्ट इन्डिया कम्पनी ने बिहार प्रान्त की मालगुजारी व अन्य आमदनी को ठेके पर देना शुरू किया, तो इस सारे सूबे की राजकीय आमदनी का ठेका राजा ख्यालीराम बहादुर ने राजा कल्याणसिंह के साथ मिलकर उनतीस लाख रुपये में ले लिया। राजा ख्यालीराम के प्रबन्ध से जनता सन्तुष्ट हुई। इससे पूर्व ईस्ट ईण्डिया कम्पनी के अंग्रेज कर्मचारी मालगुजारी तथा अन्य कर वसूल करने के लिये जनता पर बड़े अत्याचार करते थे-- लोग उनसे बड़े तंग थे। पर राजा ख्यालीराम के प्रबन्ध से उन्हें संतोष हुवा, और बिहार का प्रबन्ध बड़ी शान्ति तथा

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुशलता से होने लगा। बिहार प्रान्त में आजकल डुमरांव और टीकरी की रियासतें बड़ी प्रसिद्ध हैं, इनके पूर्वज राजा ख्यालीराम के कर्मचारी ही थे। राजा ख्यालीराम के आधीन सेवा करते हुवे ही इन रियासतों के संस्थापकों ने अपनी भावी उन्नति की नींव डाली। राजा ख्यालीराम की पुराणी वंशक्रमागत जागीर इलाहाबाद जिले के महगांव परगने में थी। अंग्रेजों का पक्ष लेने मे वह जागीर मुगल बादशाह ने जब्त करली थी। लार्ड क्लाइव ने सम्राट् शाहआलम को विवश किया, कि महगांव की इस जागीर को राजा ख्यालीराम को वापिस करदे।

राजा ख्यालीराम बड़े शक्तिशाली, योग्य और चाणाक्ष पुरुष थे। बिहार में उन्होंने जो शक्ति प्राप्त की, वह वस्तुतः बड़ी अद्भुत थी। उनका वैयक्तिक जीवन बड़ा ऊंचा और धर्ममय था। एक लेखक ने उनके सम्बन्ध में एक कथा दी है, जो बड़े महत्व की है। एक बार की बात है, कि कोई मुसलमान अपने बच्चों के साथ फारस से भारत आया और आजिमाबाद में ठहरा। राजा ख्यालीराम भी तब वहीं रहते थे। वह फारसी मुसाफिर बड़ा थका हुवा था। उसके चार बच्चे भी उसके साथ में थे। रात को वह अचानक बीमार पड़ गया, और सुबह तक उसकी मृत्यु भी हो गई। बच्चे अनाथ हो गए। मुसाफिर के पास जो सम्पत्ति थी, उस पर कब्जा करने के लिये फौजदारी महकमे के आफिसर सुबह ही आ पहुँचे। उन्होंने बड़ी निर्दयता के साथ सारे माल असबाब को अपने कब्जे में कर लिया। बेचारे अनाथ बच्चे सर्वथा ही असहाय हो गए। जब यह समाचार राजा ख्यालीराम को मालूम हुवा, तो वह उन बच्चों को अपने घर ले आया, और अपने ही बच्चों के समान उनका

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भी पालन शुरू किया। क्योंकि वह बच्चे मुसलमान घर में पैदा हुवे थे, अतः उनकी शिक्षा के लिये मुसलमान मौलवी नियत किया गया। उन्हें बिलकुल अपने बच्चों की तरह से पालकर उसने बड़ा किया। इस घटना से राजा ख्यालीराम के दयापूर्ण हृदय का परिचय मिलता है।

राजा ख्यालीराम का पुत्र राय बालगोबिन्द था। इनकी भी ईस्ट इण्डिया कम्पनी में बड़ी प्रतिष्ठा थी। सन् १७७७ में वारेन हेस्टिंग्स की तरफ से इन्हें बलिया और तांडा के परगने जागीर के तौर पर प्राप्त हुवे थे। सन् १७९२ में इस जागीर की एवज में इन्हें ४००० रुपया मासिक पैंशिन दे दी गई थी। राय बालगोबिन्द की मृत्यु सन् १८१० में हुई।

राय बालगोबिन्द के दो लड़के थे—राय पटनीमल और राय बंशीधर। इनमें राय पटनीमल बड़े प्रसिद्ध हुवे हैं। इनका जन्म सन् १७१० में हुवा था। युवावस्था में ही इन्होंने ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सर्विस प्रारम्भ की, और अपनी योग्यता तथा कुशलता के कारण बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त की। सन् १८०३ में मेजर जनरल वेलेस्ली ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी की तरफ से अवध के नवाब वजीर तथा ग्वालियर के महाराज सिन्धिया के साथ जो सन्धि की, उसमें मुख्य कर्तृत्व राय पटनीमल का ही था। इसी के परिणाम स्वरूप बादशाह अकबर (द्वितीय) की तरफ से इन्हें राजा की पदवी प्रदान की गई, और गोहद के महाराज की तरफ से अतर परगने में एक जागीर मिली। इसके बाद अवध के नवाब वजीर और ईस्ट इण्डिया कम्पनी में परस्पर के अनेक विवादग्रस्त विषयों का निबटारा करने के लिये एक कमीशन लार्ड काउले की अध्यक्षता में

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नियत हुवा। इस कमीशन का दीवान पद राय पटनीमल को मिला, और इसकी सफलता के लिये इन्होंने बड़ा कार्य किया।

इसके बाद राय पटनीमल ने राजकीय कार्य छोड़कर धार्मिक जीवन बिताना प्रारम्भ किया। इन्होंने बहुत से मन्दिर, कुंवे, तालाब आदि बनवाये। हरिद्वार, मथुरा, ज्वालामुखी, गया आदि तीर्थ स्थानों में अनेक महत्वपूर्ण स्थानों का जीर्णोद्धार कराया। ये स्थान राजा पटनी मल के स्थिर स्मारक हैं, और उनके धर्म प्रेम के ज्वलन्त उदाहरण हैं।

राय पटनीमल की कृतियों (Monuments) में सबसे महत्वपूर्ण मथुरा का शिवताल है। यह कई लाख रुपयों की लागत से बनवाया गया था। इसके मुख्य द्वार पर दो शिलालेख संस्कृत और फारसी में उत्कीर्ण कराये गये हैं। उनसे सूचित होता है, कि इस ताल का निर्माण सम्वत् १८६४ (सन् १८०७ ई०) की ज्येष्ठ शुक्ला दशमी शुक्रवार के दिन हुवा था। मथुरा में राजा पटनीमल ने अन्य अनेक मन्दिर बनवाये। इनमें अचलेश्वर, दीर्घविष्णु और वीरभद्र के मन्दिर विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। मथुरा में वह मकान अब तक विद्यमान है, जहां राजा पटनीमल निवास करते थे।

सन् १८२९ में राजा पटनीमल ने बनारस जिले में नौबतपुर के पास कर्मनाशा नदी पर पत्थर का एक बहुत मजबूत और सुन्दर बांध बंधवाया था। इससे पूर्व नाना फडनवीस, रानी अहिल्याबाई आदि कई महानुभाव इस बांध को बंधवाने का प्रयत्न कर चुके थे, पर उन्हें सफलता नहीं प्राप्त हो सकी थी। राजा पटनीमल इसमें सफल हुवे, और इसके उपलक्ष में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की तरफ से लार्ड बिलियम बैंटिंक

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ने भी उन्हें राजा बहादुर का खिताब प्रदान किया। राजा पटनीमल के बहुत से स्मारक अब तक दिल्ली, मथुरा, बनारस आदि में विद्यमान हैं।

राजा पटनीमल के पुत्र राय श्रीकृष्ण और राय रामकृष्ण हुवे। इनके वंशज अंग्रेजों की निरन्तर सहायता करते रहे। सन् १८५७ के गदर के समय में इस वंश के राय नारायण दास और राय नरसिंह दास ने अंग्रेजों की मदद की। यही कारण है कि, इस कुल का वैभव अब तक भी अक्षुण्ण रूप से विद्यमान है।

(बनारस और मथुरा के डिस्ट्रिक्ट गेजेटियर तथा सैरे मुख्तरीन भाग तीन और चार के आधार पर)

(३)

दिल्ली के कुछ प्रमुख अग्रवाल कुल

क लाला राजाराम

मुगल बादशाह अकबर के समय में लाला राजाराम बड़े प्रतिष्ठित व्यक्ति हुवे हैं। उन्हें मुगल सलतनत की ओर से इस कार्य के लिये नियुक्त किया गया था, कि सहारनपुर में एक मण्डी बनवावें। यह कार्य उन्होंने बड़ी सफलता के साथ सम्पन्न किया। इसके इनाम के रूप में उन्हें अकबर की तरफ से गोलरा में एक जागीर दी गई। बादशाह शाहजहां के समय में लाला राजाराम के वंशजों ने बड़ी उन्नति की। उनका कारोबार बहुत बड़ा और मुगल बादशाहों के संरक्षण में वे

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निरन्तर उन्नति करते गये। जब दिल्ली पर अंग्रेजों का अधिकार स्थापित हुवा, तो लाला राजाराम के वंशजों का लेनदेन (बैंकिंग) का कारबार सब से बढ़ा चढ़ा था। इसीलिये १८२५ में लाला शालिगराम (जो उस समय मुखिया थे) को ब्रिटिश सरकार ने दिल्ली में सरकारी खजाञ्ची के महत्वपूर्ण पद पर नियत किया। सन १८५७ में गदर के समय में लाला शालिगराम ने सरकार की मदद की। इसके लिये उन्हें वजीरपुर नाम का ग्राम जागीर में मिला। इसका बड़ा भाग अब तक भी उनके वंशजों के पास है।

ख. तोपखानेवालों का खानदान

दिल्ली में एक अग्रवाल परिवार है, जिसे तोपखाने वाला कहा जाता है। इस परिवार का यह नाम इसलिये पड़ा, कि इनके एक पूर्वज दीवान जयसिंह हुवे, जो मुगल बादशाह शाह आलम के समय में तोपखाने के अफसर थे। दीवान जयसिंह के बाद यह पद उनके वंश में वंशक्रमानुगत रूप से रहा। आगे चलकर इस परिवार के मुखिया को राजा का खिताब भी मुगलों की तरफ से प्रदान किया गया। सन् १८५७ के गदर के समय में राजा दीनानाथ मुगलों के तोपखाने के अफसर थे। गदर में उन्होंने अंग्रेजों का पक्ष लिया, और इसीलिये बृटिश सरकार की तरफ से उन्हें बहुत इनाम दिये गये। दीवान जयसिंह अग्रवाल तथा उनके वंशजों का मुगलों के तोपखाने का अफसर होना सूचित करता है, कि मध्यकाल में अग्रवाल लोग सैनिक सेवा से संकोच न करते थे, और अपनी योग्यता के आधार पर वे सेना में ऊँचे पद प्राप्त कर सकते थे।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इस वंश के पूर्वज भी ऊँचे राजकीय पदों पर काम करते थे। सब से पहले इस कुल के पूर्वज काश्मीर स्टेट में दीवान रहे। वहां उनका बड़ा प्रभाव एवं सम्मान था। किसी कारण वश उन्हें काश्मीर छोड़कर आना पड़ा। उन्हीं के वंश में लाला हट्टीराम जी हुवे। वे जींद स्टेट में दीवान रहे। उनके पुत्र लाला डूंगरमल जी और लाला नरसिंह जी हुवे। इन दोनों भाइयों ने भी जींद स्टेट की दीवानी के पद पर कार्य किया। दीवान नरसिंह के पुत्र दीवान जयसिंह थे, जो पहले जींद में ही दीवान थे। फिर वे देहली आ गये और शाह आलम के शासन में तोपखाने के अफसर नियत हुये। इसी कारण इस खानदान का नाम तोपखाने वाला पड़ा।

ग. गुड़वालों का खानदान

दिल्ली के अग्रवाल परिवारों में गुड़वालों का खानदान भी बड़ा प्रसिद्ध है। इस खानदान का प्रारम्भ उस समय हुवा था, जब सन् १७३२ में अहमदशाह अब्दाली ने भारत पर आक्रमण किया था। दिल्ली की दशा उस समय बड़ी अस्तव्यस्त थी। उन दिनों इस परिवार के मुखिया लाला राधा किशन थे, जो बड़े प्रतापी और प्रतिभाशाली व्यक्ति थे। उन्होंने उस समय अपने कारोबार को बहुत बढ़ाया, और उनके कर्तृत्व के कारण ही अब तक यह परिवार बहुत समृद्ध तथा प्रतिष्ठित है।

घ. लाला हरसुखराय

मुगल बादशाह शाह आलम के जमाने में लाला हरसुखराय बड़े प्रतापी महानुभाव हुवे। उन्होंने दिल्ली में अपना कारोबार खूब बढ़ाया।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शाह आलम के समय की अव्यवस्था को दृष्टि में रखते हुवे उन्होंने बृटिश सरकार की मदद की, और इससे उनकी उन्नति में बड़ी सहायता मिली। दिल्ली का प्रसिद्ध जैन मन्दिर लाला हरसुखराय का ही बनवाया हुवा है। इसे बनाने में आठ लाख रुपये खर्च हुवे थे। लाला हरसुखराय का लड़का लाला सुगनचन्द था। उन्हें लार्ड लेक द्वारा तीन गांव जागीर में मिले थे। सन् १८५७ के गदर के समय में इस परिवार के मुखिया लाला गिरधारीलाल जी थे। उन्होंने गदर में बृटिश सरकार का पक्ष लिया था। इस परिवार के उत्कर्ष में इससे बड़ी सहायता मिली।

नोट—इनके अतिरिक्त दिल्ली में अन्य भी अनेक अग्रवाल परिवार हैं, जिनके पुराने इतिहास के सम्बन्ध में कुछ महत्त्वपूर्ण बातें ज्ञात होती हैं। इन परिवारों का उत्कर्ष मुगल काल में ही प्रारम्भ हुवा था, और अपने अध्यवसाय व प्रयत्न से इन्होंने अच्छी उन्नति की थी। कई परिवार जिन्होंने पिछले युग में अंग्रेजों का पक्ष न लेकर मुगलों व मराठों का पक्ष लिया, वे इस समय प्रायः नष्ट हो चुके हैं, उनका वैभव बिल्कुल क्षीण हो गया है। इसके विपरीत, जिन परिवारों ने अंग्रेजों का पक्ष लिया, स्वाभाविकरूप से उनका वैभव अब तक कायम है। दिल्ली के अतिरिक्त अन्य स्थानों पर भी जो अनेक अग्रवाल परिवार इस समय अच्छी समृद्ध दशा में हैं, उन्होंने पिछले इतिहास में अंग्रेजों का साथ दिया था। केवल अग्रवालों के विषय में ही नहीं, अन्य राजपूत, खत्री, जाट, ब्राह्मण आदि जातियों के समृद्ध कुलों के सम्बन्ध में भी यही बात कही जा सकती है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दिल्ली के अग्रवालों में लाला सीताराम का नाम भी उल्लेखनीय है। ये पिछले मुगल युग में बड़े प्रतापी पुरुष हुवे, और मुगल बादशाहत में खजानची के पद पर अधिष्ठित थे। दिल्ली का वर्तमान सीताराम बाजार इन्हीं की जीती जागती स्मृति है।

(दिल्ली डिस्ट्रिक्ट गजेटियर के आधार पर)

(४)

राजा रतनचन्द

हम इस इतिहास के अनेक अध्यायों में राजा रतनचन्द का जिक्र कर चुके हैं। हमने यह भी प्रतिपादित किया है, कि राजाशाही अग्रवालों की पृथक् बिरादरी इन्हीं राजा रतनचन्द द्वारा बनी। ये राजा रतनचन्द कौन थे, और इतिहास में इनका क्या स्थान है, इस विषय पर प्रकाश डालने की आवश्यकता है।

मुगल बादशाहत के पतन के युग में बादशाह जहांदारशाह (सन १७१२) के विरुद्ध जब फर्रुखसियर ने विद्रोह का झण्डा खड़ा किया, तो उसका साथ देने वालों में मुजफ्फरनगर (यू० पी०) जिले के सैयद बन्धु प्रमुख थे। इस काल के इतिहास में इन सैयद बन्धुओं—सैयद अब्दुल्लाखां और सैयद हुसैनअलीखां—का बड़ा महत्व है। जहांदारशाह को परास्त कर फर्रुखसियर स्वयं बादशाह बन गया, और उसके साथ ही सैयद बन्धुओं की बड़ी उन्नति हुई। धीरे धीरे वे मुगल बादशाहत के कर्ता धर्ता बन गये। वे मुगल बादशाहत को अपने इशारे पर नचाते थे। जिसे चाहते थे, राजगद्दी पर बिठाते थे, जिसे चाहते थे,

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गद्दी से उतार कर धूल में मिला देते थे। इसीलिये इतिहास में उन्हें राजाओं का भाग्य विधाता (King maker) कहा गया है।

राजा रतनचन्द मुजफ्फरनगर जिले में जानसठ के निवासी थे। सैयद बन्धु भी वहीं के रहने वाले थे। रतनचन्द की सैयदों के साथ बड़ी मित्रता थी। वे उसे बहुत मानते थे। सैयद बन्धुओं की उन्नति के साथ साथ राजा रतनचन्द की भी उन्नति होती गई, और कुछ ही समय में वह मुगल बादशाहत के भाग्य विधाताओं में हो गया।

फरुखसियर ने अपना प्रधानमन्त्री (वजीर) कुतुब-उल-मुल्क सैयद अब्दुल्ला खां को बनाया था। वजीर स्वयं तो भोग विलास में मस्त रहता था, राज्यकार्य की उसे कोई चिन्ता न थी। सारा राज्यकार्य राजा रतनचन्द के अधीन था। उसे मुगल बादशाह की तरफ से राजा का खिताब मिला था, और साथ ही दरबार में दो हजारी का दर्जा दिया गया था। कुतुब-उल-मुल्क की गफलत का परिणाम यह हुवा, कि उसके प्रतिस्पर्धी मीरजुमला की शक्ति दरबार में बढ़ने लगी। रतनचन्द इससे बहुत चिन्तित हुवा, और उसने मीरजुमला के मुकाबले में कुतुब-उल-मुल्क की हैसियत तथा अधिकारों की रक्षा के लिये बड़ा प्रयत्न किया। कुतुब-उल-मुल्क सैयद अब्दुल्ला खां और मुगल बादशाहत पर उसका कितना प्रभाव था, इसका अनुमान निम्न लिखित घटनाओं से किया जा सकता है।

सिक्खों के नेता बैरागी बन्दा की गिरफ्तारी के बाद मुगल बादशाहत की ओर से सिक्खों पर घोर अत्याचार हो रहे थे। प्रतिदिन सैकड़ों की

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संख्या में सिक्ख लोग कतल किये जाते थे। इस बात के उदाहरण मौजूद हैं, कि राजा रतनचन्द ने इसके विरुद्ध प्रयत्न किया और वजीर अब्दुल्ला खां पर उसका जो प्रभाव था, उसे इस्तेमाल कर अनेक सिक्खों की रिहाई का हुक्म प्राप्त किया।

फरुखसियर के जमाने में हिन्दुओं के ऊपर जजिया कर फिर से लगा दिया गया था। इसका प्रधान कारण इनायतुल्ला खां की नीति थी, जो सैयदों का विरोधी था। हिन्दुओं पर जजिया कर लगने से राजा रतनचन्द बहुत असन्तुष्ट हुवा। वह निरन्तर इसके विरुद्ध यत्न करता रहा, और अन्त में उसे सफलता प्राप्त हुई। सन् १७१९ में फरुखसियर के पतन के बाद जब रफी उद्दरजात मुगल बादशाह बना, तो राजा रतनचन्द के प्रयत्न से जजिया कर हटा दिया गया।

राजा रतनचन्द के प्रभाव के सम्बन्ध में एक कहानी बड़ी मनोरञ्जक है। एक बार की बात है, कि राजा रतनचन्द किसी आदमी को सैयद अब्दुल्ला खां के पास लाया, और उसे काजी के पद पर नियुक्त करने की सिफारिश की। इस पर अब्दुल्ला खां ने पास खड़े हुवे एक आदमी से हंसते हुवे कहा—"अब रतनचन्द काजियों को भी नामजद करने लग गया है।" इस पर एक दरबारी ने उत्तर दिया—"इस दुनिया में रतन चन्द जो कुछ चाहता है, उसे मिला हुवा है। अब उसे दूसरी दुनिया की फिक्र भी करनी ही चाहिये।" एक दफे शेख अब्दुल अजीज के लड़के फकरुद्दीन खां ने सैयद अब्दुल्ला खां से बातचीत में कहा था—"आजकल, तुम्हारी मेहर्बानी से रतनचन्द की वही हैसियत है, जो किसी समय हेमू बनिये की थी।"

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मुगल शासन में रतनचन्द का प्रभाव इतना बढ़ा हुवा था, कि वह जिसे चाहे सरकारी पद पर नियुक्त होने से रोक सकता था। मीर जुमला तरखान नामक एक शक्तिशाली सरदार की नियुक्ति सदर-उस-सुदूर के ऊंचे पद पर की जारही थी। राजा रतनचन्द ने इसका विरोध किया। मीर जुमला ने हज़ार कोशिश की, सादत खां जैसे उच्च पदाधिकारी से सिफारिश कराई। पर रतनचन्द के विरोध में होने के कारण उसकी एक न चली। वह सदर-उस-सुदूर के पद पर नियत नहीं हो सका।

राजा रतनचन्द ने मुगल शासन में अनेक बड़े परिवर्तन किये। उससे पहले बड़े राजपदाधिकारियों को निश्चित वेतन मिलता था, और वे वेतन पाकर राज्य का कार्य करते थे। पर रतनचन्द ने यह तरीका शुरू किया, कि राजकीय आमदनी वसूल करने का काम ठेके पर दिया जाय। जो आदमी सब से अधिक आमदनी करने का वायदा करे, उसे ही वह कार्य सौंपा जाय। यह तरीका कहां तक अच्छा है, इस पर विचार करने की यहां आवश्यकता नहीं। पर मुगल शासन में इतना भारी परिवर्तन रतनचन्द द्वारा हुवा, और यह उसके प्रभाव का बड़ा अच्छा प्रमाण है।

सैयद बन्धुओं का राजा रतनचन्द सच्चा मित्र था। फरुखसियर के शासन काल में जब सैयद हुसैनअली खां के विरुद्ध षड्यन्त्र शुरू हुवे, तो उनसे सैयदों को सावधान करने में उसने बड़ा कार्य किया। सैयद बन्धुओं में जो परस्पर मित्रता बनी रही, और वे आपस में नहीं लड़

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बैठे—इसमें भी रतनचन्द का बड़ा कर्तृत्व था। सैयद बन्धुओं में अनेक बार लड़ाई के अवसर उपस्थित हुवे, पर रतनचन्द ने उनमें फूट नहीं होने दी। सैयद बन्धुओं के सूत्र का संचालन करने वाला रतनचन्द ही था। वह उनका अपना दीवान था, और इसी पद पर रह कर उसने कुछ समय के लिये मुगल बादशाहत का संचालन किया था।

सन् १८२० में बादशाह मुहम्मदशाह के शासन काल में इलाहाबाद के सूबेदार राजा गिरधर बहादुर ने विद्रोह किया। यह विद्रोह बड़ा विकट रूप धारण करता जाता था, और आसपास के बहुत से मुगल पदाधिकारी राजा गिरधर के पक्ष में होते जाते थे। इसका उपाय करने के लिये राजा रतनचन्द को भेजा गया। रतनचन्द ने एक बड़ी सेना को साथ लेकर इलाहाबाद के लिये प्रस्थान किया। उसके साथ अनेक प्रसिद्ध मुगल सेनापति भी थे, जिनमें मुहम्मद खां बंगश और हैदरअली खां मुख्य हैं। ये इस आक्रमण में रतनचन्द के आधीन कार्य कर रहे थे। रतनचन्द अपनी नीति कुशलता से राजा गिरधर को वश में लाने में समर्थ हुवा। उसे इलाहाबाद से हटाकर अवध का सूबेदार नियत किया गया, और राजा गिरधर रतनचन्द के प्रयत्न से मुगल बादशाहत का पक्षपाती हो गया।

इस सफलता के उपलक्ष में रतनचन्द का आगरा में बड़ी धूमधाम से स्वागत हुवा। उसे दो हजारी के स्थान पर पांच हजारी का दर्जा दिया गया, और वह मुगल दरबार के सब से प्रमुख पदाधिकारियों में गिना जाने लगा। उसे इनाम के तौर पर बहुत से बहुमूल्य उपहार भी दिये गये।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बादशाह मुहम्मदशाह के शासनकाल में ही सैयद बन्धुओं का पतन हुवा। किस प्रकार सैयदों की शक्ति क्षीण हुई, और उनके शत्रु प्रबल होगये—इसका वृत्तान्त लिखने की यहां कोई आवश्यकता नहीं। सैयदों के पतन के साथ रतनचन्द का भी पतन हुवा। नये वज़ीर मुहम्मद अमीन खां की आज्ञा से उसे गिरफ़्तार किया गया और प्राण दण्ड मिला। रतनचन्द ने अन्त तक सैयदों का साथ नहीं छोड़ा। सैयदों के खज़ाने का पता लगाने के लिये उसे अनेक कष्ट दिये गये, पर वह किसी भी तरह खजाने का पता बताने के लिये तैयार न हुवा।

इसमें सन्देह नहीं, कि मुग़ल बादशाहत के काल में जिन हिन्दुओं ने उच्च पद प्राप्त किये, उनमें रतनचन्द अग्रवाल का स्थान बहुत ऊंचा है। फ़करुद्दीन खां ने उसकी तुलना जो हेमू के साथ की थी, वह ठीक ही है।

(William Irvine के Later Mughals के आधार पर)

(५)

लाला अमीचन्द

ईस्ट इन्डिया कम्पनी ने जब बंगाल में अपनी शक्ति का विस्तार शुरू किया, तो जिन भारतीयों ने उसे सहायता दी, उनमें लाला अमीचन्द का नाम अत्यन्त प्रसिद्ध है। लाला अमीचन्द के पूर्वज दिल्ली के रहने वाले थे, और मुगल बादशाहत से इनका घनिष्ट सम्बन्ध था। अब से करीब तीन सौ वर्ष पूर्व इस परिवार में राय बालकृष्ण नामक एक बड़े प्रसिद्ध पुरुष हुवे थे। राय बालकृष्ण के पुत्र लक्ष्मीराय और उनके पुत्र गिरधारीलाल हुवे। सन् १६३८ में जब बादशाह शाहजहां के पुत्र

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शाहशुजा बंगाल के सूबेदार होकर बंगाल आये, तो यह परिवार भी उन के साथ बंगाल आया और वहीं बस गया। जब बंगाल के नवाबों की राजधानी राजमहल से हट कर मुर्शिदाबाद चली गई, तब यह परिवार भी मुर्शिदाबाद जा बसा। इन दोनों स्थानों पर इस परिवार के विशाल खण्डहर अब तक विद्यमान हैं। इस परिवार में सब से प्रसिद्ध व्यक्ति लाला अमीचन्द हुवे। जब बंगाल में अंग्रेजों का प्रभुत्व फैलने लगा, तो उन्होंने अंग्रेजों की सहायता की, और बंगाल की नवाबी नष्ट करने में योग दिया। अंग्रेज लोग जो बंगाल पर अपना कब्जा कर सके, उसमें लाला अमीचन्द का भी बड़ा हाथ था।

अठारहवीं सदी के शुरू में कलकत्ता की स्थापना हुई थी। लाला अमीचन्द, जो अत्यन्त चतुर और चाणाक्ष व्यापारी थे, नये अंग्रेज व्यापारियों के साथ व्यापार करने से अधिक लाभ की सम्भावना देख कर कलकत्ते आ बसे थे। इन्होंने कलकत्ते में बड़े बड़े राजमहल बनवाये। 'इनकी अनेक प्रकार से सुसज्जित विशाल राजपुरी, पुष्प वृक्षादि से सुशोभित विख्यात उद्यान, मणिमाणिक्यादि से परिपूर्ण राज भण्डार, सशस्त्र सैनिकों से भरा हुवा सिंहद्वार तथा अनेक विभाग के असंख्य सैनिकों की भीड़ देखकर लोग इन्हें केवल व्यापारी महाजन न समझ कर राजा मानने लगे थे।' इनका सम्मान इतना था, कि इनके नौ पुत्रों में से तीन को राजा की और एक को रायबहादुर की पदवी मिली थी। अंग्रेज लोग बंगाल से अपरिचित थे, अतः उसमें आन्तरिक व्यापार बढ़ाने के लिये, अमीचन्द पर ही उन्होंने पहले पहल विश्वास किया और इन्हीं के सहयोग से गांव गांव में दादनी (अगाऊ) बांट कर कपास

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और कपड़े क्रय करते थे। नबाब के दरबार में भी अमीचन्द का मान था, और अंग्रेजों को इन्हीं के द्वारा नवाब से लिखापढ़ी करने में विशेष सुबिधा होती थी।

यह काल बंगाल के इतिहास में उथल पुथल, क्रान्ति और राज-परिवर्तन का काल था। सब ओर अशान्ति मची हुई थी। षड्यन्त्र, हत्या, कपट, विश्वासघात आदि के दृश्य उन दिनों बिलकुल मामूली बात थी। लाला अमीचन्द भी इस चक्र से न बच सके। अंग्रेजों के साथ उनका सम्बन्ध सदा मैत्री और सद्भावना का नहीं रहा। यद्यपि अंग्रेजों के साथ उनका बाहरी मेल था, पर भीतर ही भीतर उनमें परस्पर चिढ़ तथा विरोध का भाव बढ़ रहा था। बंगाल के नये नबाब सिराजुद्दौला का अंग्रेजों से विरोध था। उसने किन कारणों से अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध की ठानी और कलकत्ता पर आक्रमण किया, इस पर यहां विचार करने की आवश्यकता नहीं। पर अंग्रेजों ने समझा, कि लाला अमीचन्द सिराजुद्दौला से मिले हुवे हैं, और उसके आक्रमण में उनका भी हाथ है। अंग्रेजों ने अमीचन्द को गिरफ्तार कर लिया और उसके मकान पर आक्रमण किया। अमीचन्द के पास अपनी बहुत सी अङ्ग-रक्षक सेना थी, उसने अंग्रेजों का बड़ी वीरता के साथ मुकाबला किया। इस सेना का मुखिया जगन्नाथसिंह था। जब उसने देखा, कि अमीचन्द के सैनिक सब एक एक करके मारे जा रहे हैं, और ईस्ट इण्डिया कम्पनी के सिपाही अन्तःपुर में प्रविष्ट हुवा चाहते हैं, तो उसका रक्त खौल उठा। 'उसके स्वामी के पवित्र कुल की कुल बधुओं पर परपुरुष की छाया पड़े और उनके निष्कलंक शरीर यवनों के स्पर्श से कलंकित

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हों, ऐसा विचार ही उस स्वामी भक्त क्षत्रिय वीर के लिए असह्य हो उठा। उसने यह झट निश्चय कर लिया कि वह उस अंतःपुर तथा उन अंतःपुर निवासियों ही को न रहने देगा। उसने तुरन्त प्राचीन हिन्दू गौरव नीति के अनुसार एक बड़ी चिता जला दी, और स्वामी के परिवार की तेरह कुलबधुओं के सिरों को धड़ों से अलग कर चिता में डाल दिया। अनुकूल वायु पाकर चिता भभक उठी और सिंहद्वार तक का भवन अग्नि की लपट में भस्म हो गया।'

उधर नवाब सिराजुद्दौला को कलकत्ता के आक्रमण में सफलता हुई। नवाबी सेना ने कलकत्ता को जीतकर अपने अधिकार में कर लिया। अंग्रेज सब पकड़े गये। नवाब के दरबार में लाला अमीचन्द भी हाजिर किये गये। नवाब ने उनसे आदरपूर्ण व्यवहार किया। इसके अनन्तर वह घटना घटी, जो 'काल कोठरी' के नाम से इतिहास में प्रसिद्ध है। इस कहानी को पहले पहल कहने वाले हौलवेल ने अमीचन्द पर ही यह दोष लगाया था, कि इन्होंने अंग्रेजों द्वारा अपने पर किये गये निर्दय व्यवहार का बदला लेने के लिये राजा मानिकचन्द से कह कर अंग्रेजों की यह दुर्गति कराई थी।

परन्तु इन भयंकर दुर्घटनाओं के बाद भी सेठ अमीचन्द और अंग्रेजों की मित्रता का अन्त नहीं हुवा। जब लार्ड क्लाइव ने सिराजुद्दौला के खिलाफ ९०० गोरे और १५०० देशी सिपाही लेकर आक्रमण की तैयारी की, तो लाला अमीचन्द ने एक पत्र में उन्हें लिखा—"मैं जैसा सदा से था, वैसा ही अंग्रेजों का भला चाहने वाला अब भी हूँ। आप लोग राजा बल्लभ, राजा मानिकचन्द, जगत सेठ आदि जिनसे भी पत्र

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

व्यवहार करना चाहें, उसकी व्यवस्था मैं करवा सकता हूँ।" सिराजुद्दौला के शासन से उसके बहुत से पदाधिकारी असंतुष्ट थे। उन्हें अंग्रेजों के पक्ष में करने लिये अमीचन्द ने बड़ा प्रयत्न किया। मानिकचन्द, राय दुर्लभ, महताबराय, स्वरूपचन्द, मीर जाफर आदि प्रधान सरदार गण इस षड्यन्त्र में शामिल हुवे, और उन्होंने लार्ड क्लाइव से मिलकर यह तय किया, कि सिराजुद्दौला को राजगद्दी से उतार कर मीरजाफर को नवाब बनाया जावे। मीरजाफर के नवाब बनने पर किसको कितना बंगाल के खजाने से दिया जाय, यह भी निश्चित कर लिया गया। मानिक राय, राय दुर्लभ आदि सरदार अमीचन्द से द्वेष रखते थे। उनकी इच्छा थी, कि इस षड्यन्त्र से उसे कोई लाभ न होवे। इसी लिये लार्ड क्लाइव से मिलकर उन्होंने दो सन्धिपत्र तैयार कराये। एक लाल कागज पर और दूसरा सफेद कागज पर। असली सन्धिपत्र सफेद कागज पर था। इस में अमीचन्द को रुपया मिलने की बात नहीं लिखी गई। पर लाल कागज के नकली सन्धिपत्र में अमीचन्द को ३० लाख रुपया देने की बात लिखी गई। अमीचन्द को अंग्रेजों की सत्य प्रियता पर इतना विश्वास था, कि उन्हें जरा भी सन्देह नहीं हुवा।

अमीचन्द की मदद से अंग्रेज सिरोजुद्दौला को राजगद्दी से च्युत कर मीर जाफर को बंगाल का नवाब बनाने में सफल हुवे। मीरजाफर के नवाब बनने पर जब लूट का माल षड़यन्त्रकारियों में बांटा गया, तब अमीचन्द को कुछ भी न मिला। उस समय उन्हें जाली सन्धि-पत्र की बात मालूम हुई। इससे उन्हें बड़ा धक्का लगा, उनका अन्तिम जीवन बड़े दुःख और निराशा में व्यतीत हुवा।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इतिहास में लाला अमीचन्द के चरित्र को बड़ा कलुषित प्रगट किया जाता है। यह ठीक भी है, पर यदि उस काल के प्रमुख व्यक्तियों के जीवन पर दृष्टि डाली जाय, तो षड़यन्त्र, कपट आदि बिलकुल साधारण बातें प्रतीत होती हैं। लार्ड क्लाइव, सिराजुद्दौला आदि इस काल के सभी प्रमुख मनुष्य इस प्रकार की धोखेबाजी और षड्यन्त्रों को बिल्कुल सामान्य बात समझते थे, और स्वयं इनका प्रयोग करते थे। अमीचन्द इसी श्रेणि के मनुष्य थे। समय को देखते हुवे उन्हें एक अत्यन्त प्रभावशाली, कुशल और चाणाक्ष नीतिज्ञ पुरुष ही कहना होगा। जिस समय में वे हुवे, अपनी शक्तियों का उपयोग वे इसी ढंग से कर सके।

लाला अमीचन्द की मृत्यु सन् १७५८ में हुई। उनके पुत्र फतेहचन्द थे। उनका विवाह काशी के एक अत्यन्त प्रसिद्ध नगर सेठ गोकुलचन्द जी की कन्या से हुवा था। सेठ गोकुलचन्द के पूर्वज ने अन्य नगर सेठों तथा सरदारों का साथ देकर काशी के वर्तमान राजवंश को यह राज्य दिलाने में बहुत उद्योग किया था, इसी कारण वे इस राज्य के महाजन नियुक्त हुवे थे और उन्हें प्रतिष्ठापूर्ण नौ-पति की पदवी प्रदान की गई थी। लाला अमीचन्द के देहान्त के पश्चात् उदासीन होकर श्री फतेहचन्द अपने ससुराल में बनारस आ गये। इनके ससुर की दूसरी सन्तान नहीं थी, अतः श्री फतेहचन्द जी ही उनके उत्तराधिकारी हुवे। इस समय से लाला अमीचन्द के वंशज काशी में ही रहने लगे।

आगे चलकर इसी कुल में भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र का जन्म हुवा। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का यहां परिचय देने की कोई आवश्यकता नहीं। वे वर्तमान हिन्दी साहित्य के जन्मदाता हैं। हिन्दी संसार में उनका

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्थान अद्वितीय है। अग्रवाल जाति को यह सौभाग्य प्राप्त है, कि उसमें भारतेन्दु जैसे प्रतिभाशाली कवि और लेखक उत्पन्न हुए। यदि लाला अमीचन्द से भारत का कुछ अपकार हुवा, तो उसकी क्षतिपूर्ति उनके वंशज भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने पूर्णतया कर दी है। इस कुल का सम्पूर्ण कलंक भारतेन्दु जी ने धो दिया है।

(श्रीयुत् ब्रजरत्नदास कृत भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के आधार पर)

(६)

चौधरी चोखराज

मेरठ में वर्तमान समय में कानूनगो नाम का एक अग्रवाल परिवार है, जो अत्यन्त प्रतिष्ठित और समृद्ध है। लगभग ३०० वर्ष से इस परिवार का सिलसिले वार इतिहास उपलब्ध होता है। इस काल के पूर्व पुरुष लाला चोखराज जी चौधरी थे। इनकी मुगल बादशाह औरङ्गजेब के दरबार में बड़ी प्रतिष्ठा थी। इनकी प्रतिभा और योग्यता से प्रसन्न होकर औरङ्गजेब ने इन्हें कानूनगो का खिताब दिया था, और इसके लिये सन् १६५८ में एक शाही फरमान इनायत किया था। चौधरी चोखराज के एक पूर्वज को भी बादशाह जहांगीर द्वारा जब्तुल अनामिल का खिताब प्राप्त हुआ था। औरङ्गजेब के पश्चात भी इस परिवार का मुगल दरबार से सम्बन्ध बना रहा। चौधरी लेखराज के कई पीढ़ियों बाद लाला दलपत राय जी हुए। इनकी बादशाह शाह आलम के दरबार में बड़ी प्रतिष्ठा थी। इनकी सेवाओं से प्रसन्न होकर शाह आलम ने सन् १७७६ में एक शाही फरमान जारी किया, जिसमें कि औरङ्गजेब के समय

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

में मिले हुवे क़ानूनगो के खिताब का अनुमोदन किया गया, और उसे उनके वंश में स्थिर कर दिया गया।

इसी कुल से अग्रवालों के उन प्रसिद्ध परिवारों का उद्भव हुवा है, जो मेरठ में आजकल कानूनगो, पत्थरवाला, लालावाला और बांकेराय वाला आदि नामों से जाने जाते हैं।

(श्री० चन्द्रराज भण्डारी कृत अग्रवाल जाति का इतिहास के आधार पर)

शाह गोविन्द चन्द

शाह गोबिन्दचन्द के पूर्वज लाला भवानीदास और लाला ताराचंद थे, जो देहली में व्यापार करते थे। जब नादिरशाह ने दिल्ली पर आक्रमण कर उसे लूटा, तो इन्हें भी बहुत नुकसान पहुँचा, और इनकी सम्पत्ति नादिरशाह के हाथ लगी। इसके बाद इस कुल के लोग फर्रुखाबाद आये और वहां अपनी बिगड़ी हुई स्थिति को फिर संभाला। पीछे से इस परिवार के लाला रामलाल फर्रुखाबाद से लखनऊ चले गये और वहां के नबाबों के दरबार में उन्होंने बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त की।

इस काल के सब से प्रसिद्ध पुरुष गोबिन्दराम हुवे। ये अवध के दरबार में स्टेट ज्यूएलर नियत किये गये। अवध का सुप्रसिद्ध मयूर सिंहासन इन्हीं के द्वारा बनवाया गया था। इनके कार्य से प्रसन्न होकर नवाब ने इन्हें खिल्लत और शाह का खिताब प्रदान किया। यह खिताब इनके कुल में वंश परम्परागत रूप से अब तक चला आता है।

(श्री चन्द्रराज भण्डारी के अग्रवाल-इतिहास के आधार पर)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(८)

नशीपुर का राजवंश

बंगाल प्रान्त में नशीपुर एक प्रतिष्ठित रियासत है, जिसके राजा अग्रवाल जाति के हैं। इस राजवंश के मूल संस्थापक महाराजा देवीसिंह थे। इनके पूर्वज महाराजा तरवा बीजापुर के राजा थे। इस कुल में अनेक ऐसे प्रतिभाशाली और योग्य व्यक्ति हुवे, कि उन्हें देहली के मुगल बादशाहों ने बड़े जिम्मेवारी के पदों पर नियत किया। इनमें से एक बाबू शम्भूनाथ मुगल काल में सहारनपुर से लेकर मेरठ तक के सारे इलाके के नाजिम रहे। एक अन्य व्यक्ति बाबू बद्रीदास बड़े वीर तथा साहसी थे। उन्होंने शामली की लड़ाई में कर्नल बर्न का वीरतापूर्वक साथ दिया, और ईस्ट इण्डिया कम्पनी से बीस हजार रुपया मासिक वेतन प्राप्त किया।

इसी काल के महाराजा देवीसिंह ने प्लासी के युद्ध के समय लार्ड क्लाइव की बड़ी सहायता की। बंगाल पर अंग्रेजों का कब्जा हो जाने पर इन्हें पूर्व बंगाल तथा उड़ीसा की दीवानी का पद दिया गया। लार्ड कार्नवालिस ने इन्हें 'महाराजा बहादुर' की उपाधि प्रदान की। इस कुल के अन्य लोग भी इसी प्रकार अंग्रेजी शासन में ऊँचे ऊँचे पदों पर नियत रहे। इस समय इस कुल की गिनती बंगाल के अग्रगण्य कुलों में की जाती है।

(चन्द्रराज भण्डारी के अग्रवाल-इतिहास के आधार पर)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

छठा परिशिष्ट

फुटकर टिप्पणियां

(१)

"अग्रवाल" शब्द

अग्रवाल शब्द का क्या अभिप्राय है, और इस नाम का उद्भव किस प्रकार हुवा, इस विषय पर मतभेद है। हम पहले प्रदर्शित कर चुके हैं, कि इस शब्द का सम्बन्ध राजा अग्रसेन के साथ में है, जिसने कि अगरोहा की स्थापना की थी। जिस प्रकार उसके नाम से अगरोहा शहर का नाम पड़ा, इसी तरह उसका वंश अग्रवंश या अग्रवाल कहाया।

पर इस व्याख्या के अतिरिक्त अन्य भी कई मत प्रचलित हैं। कई लोगों का विचार है, कि अग्रवाल लोग पहले अगर (संस्कृत अगरू)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नाम के सुगन्धित काष्ठ का व्यापार करते थे, इसीलिये वे अगरवाल या अग्रवाल कहाये। पर इस बात का कोई प्रमाण नहीं है, कि अग्रवालों में अगर का व्यापार कभी विशेष रूप से रहा है। इस समय तो उनका अगर के व्यापार से कोई भी खास सम्बन्ध नहीं है।

एक अन्य मत यह है, कि प्राचीन समय में काश्मीर में अग्निहोत्री ब्राह्मणों के बहुत से घर थे। यज्ञ के लिये अगर की आवश्यकता होती थी, और इस सुगन्धित काष्ठ को यज्ञार्थ देने का कार्य वैश्यों की एक विशेष जाति करती थी, जो इसी कारण अगरवाल कहाती थी। जब सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण किया, तो उसने काश्मीर के अग्निहोत्री ब्राह्मणों के यज्ञ कुण्ड नष्ट कर दिये, और अगरवाल वैश्य काश्मीर छोड कर आगरा के आसपास के प्रदेश में चले आये। इस मत में कई कठिनाइयां हैं। प्रथम अग्रवालों का काश्मीर से कभी कोई सम्बन्ध रहा हो, इस का कोई प्रमाण नहीं। यह ठीक है, कि राजा अग्रसेन का पूर्वज राजा धनपाल प्रतापनगर का राजा था, और कल्हण की राजतरङ्गिणी के अनुसार प्रतापनगर नाम का एक नगर काश्मीर में विद्यमान था। काश्मीर के प्रतापनगर के अतिरिक्त इस नाम के किसी अन्य नगर का उल्लेख प्राचीन संस्कृत साहित्य में नहीं मिलता। इसलिये यह विचार अवश्य संभव हो सकता है, कि शायद धनपाल का राज्य काश्मीर में ही हो। पर जिस अनुश्रुति के अनुसार धनपाल प्रतापनगर का राजा था, वही उसे दक्षिण की ओर के किसी प्रदेश का राजा बताती है। इसलिये धनपाल वाले प्रतापनगर को काश्मीर में कहीं मानना बहुत युक्तिसंगत नहीं जंचता। वह तो राजपूताना में ही होना

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चाहिये। दूसरी बात यह है, कि सिकन्दर ने अपने भारतीय आक्रमण में काश्मीर पर हमला नहीं किया था। इसलिये जो मत सिकन्दर के काश्मीर में जाकर यज्ञ कुण्डों को ध्वंस करने की बात कहता है, उसकी प्रामाणिकता में सन्देह होना स्वाभाविक ही है।

अग्रवाल शब्द पर विचार करते हुवे हमें यह ध्यान रखना चाहिये, कि अन्य भी बहुत सी जातियों के नाम के पीछे 'वाल' शब्द का प्रत्यय आता है। उदाहरणार्थ, ओसवाल, खण्डेलवाल, वर्णवाल, पालीवाल आदि विविध जातियों के नाम हैं। ओसवालों में यह अनुश्रुति है, कि उनका प्रादुर्भाव मारवाड़ के अन्तर्गत ओसनगर के एक राजा से हुवा है। ओसवाल इसीलिये कहाते हैं, क्योंकि उनका ओसनगर या औसिता के साथ सम्बन्ध है। खण्डेलवालों की उत्पत्ति जयपुर राज्य के खण्डेलनगर से हुई है। वर्णवालों का नाम यह इसलिये पड़ा, क्योंकि उनका प्रादुर्भाव वर्ण नाम के राजा से हुवा, तो राजा समाधि के वंश में था। पालीवालों का जोधपुर के पल्लीनगर के साथ सम्बन्ध है। 'वाल' प्रत्यय हिन्दी का है, और इसका अर्थ 'का' है। यह प्रत्यय सम्बन्ध-वाचक है। अग्रवालों का यह नाम इसलिये पड़ा, क्योंकि वे 'अग्र' के हैं, उनका 'अग्र' के साथ सम्बन्ध है। अग्रवाल और आग्रेय—दोनों का बिलकुल एक ही अभिप्राय है। आग्रेय संस्कृत शब्द है, और अग्रवाल हिन्दी। दोनों का अर्थ बिलकुल एक ही है। जिस राजा अग्रसेन के नाम से आग्रेय राज्य स्थापित हुवा, अगरोहा शहर का नाम पड़ा, उसी से उस राज्य के कुलीन लोग (जिनका और राजा अग्रसेन का एक ही कुल व अभिजन था) आग्रेय, अग्रवंशी या अग्रवाल कहाये।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(२)

गूगा पीर

अग्रवाल जाति का गूगा पीर के साथ विशेष सम्बन्ध है। प्रायः सभी प्रान्तों के अग्रवाल गूगा को मानते हैं, और भाद्रपद के महीने में जब गूगा का मेला लगता है, तो उसमें बड़े उत्साह के साथ शामिल होते हैं। जो लोग इस अवसर पर गूगा की समाध पर पूजा करने के लिये जा सकते हैं, वे वहां जाते हैं। जो समाध पर लगे मेले में शामिल नहीं हो सकते, वे अपने यहां ही गूगा का सम्मान करते हैं। गूगा की पूजा के तरीके सब स्थानों पर अलग अलग हैं। मध्य प्रान्त के नीमार नामक स्थान पर गूगा की पूजा के लिये तीस हाथ लम्बा एक डण्डा लेकर इस पर कपड़े और नारियल बांधे जाते हैं। श्रावण भाद्रपद में प्रायः प्रतिदिन भंगी लोग इस डण्डे का जलूस शहर में निकालते हैं। लोग उसके सम्मुख नारियल भेंट करते हैं। अनेक अग्रवाल उसकी पूजा के लिये सिन्दूर आदि भी देते हैं। कुछ उसे अपने घर पर विशेष रूप से निमन्त्रित करते हैं, और रात भर अपने पास रखते हैं। सुबह होने पर अनेक भेंट उपहार के साथ उसे विदा दी जाती है। संयुक्तप्रान्त, बिहार, पंजाब आदि में भी गूगा की पूजा के लिये इससे मिलती जुलती पद्धति प्रचलितहै।

यह गूगा कौन था ? इस सम्बन्ध में बहुत सी किम्वदन्तियां प्रचलित हैं। एक किम्वदन्ती के अनुसार उसके पिता का नाम वचा था। वचा जाति से चौहान राजपूत था। कुछ का ख्याल है, कि उसके पिता का नाम वचा नहीं, अपितु जेवर था। पिता की मृत्यु के बाद वह स्वयं राजा बना। उसका राज्य हांसी से गर्रा तक विस्तृत था। उसकी

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

राजधानी महेरा थी, जो गग्गरा नदी के तट पर स्थित थी। कहते हैं, कि एक झगड़े में गूगा ने अपने दो भाइयों को कतल कर दिया। इससे उसकी माता बड़ी क्रुद्ध हुई। माता के क्रोध से बचने के लिये वह जंगल में भाग गया। वहां उसने चाहा, कि जमीन फट जावे, ताकि वह उसमें समा जावे। पर इसी बीच में आकाश वाणी हुई—'जब तुम कलमा पढ़कर मुसलमान हो जाओगे, तभी तुम्हारी इच्छा पूर्ण होगी।' गूगा कलमा पढ़कर मुसलमान हो गया। उसके कलमा पढ़ते ही जमीन फट गई, और वह उसमें समा गया।

कुछ की सम्मति में गूगा पृथिवीराज का समकालीन था। जब मुहम्मद गौरी ने भारत पर आक्रमण किये, तो उसने उसका वीरता पूर्वक सामना किया। पर पंजाब में प्रचलित गीतों के अनुसार उसे महमूद गजनवी का समकालीन मानना अधिक उपयुक्त होगा। इन गीतों में बड़े विस्तार के साथ यह गाया जाता है, कि किस तरह गूगा अपने पैंतालीस लड़कों और साठ भतीजों के साथ महमूद गजनवी से लड़ते हुवे युद्ध में मारा गया। यह युद्ध गग्गरा नदी के तट पर हुवा था। वहीं पर गूगा की समाध भी पाई जाती है। यह समाध हिसार के दक्षिण पश्चिम में ददरेरा नामक स्थान से बीस मील की दूरी पर स्थित है। यहीं पर गूगा की पूजा के लिये भाद्रपद मास में मेला लगता है। दूर दूर से लोग इकट्ठे होते हैं। अग्रवाल लोग गूगा को बहुत मानते हैं, इसलिये वे विशेष उत्साह से इस मेले में सम्मिलित होते हैं।

गूगा हिन्दू और मुसलमान—दोनों के लिये समान रूप से पूज्य है। भारत में ऐसे देवी देवता बहुत कम हैं, जिन्हें हिन्दू और मुसलमान

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दोनों मानते हों। गूगा इनमें मुख्य है। हिन्दू उसे नागराज का अवतार मान कर उसकी पूजा करते हैं, और मुसलमान जाहिर पीर समझकर उसे मानते हैं। इतिहास में गूगा का क्या स्थान है—यह निश्चित कर सकना बहुत कठिन है, उससे सम्बद्ध किम्बदन्तियां एक दूसरे से बहुत ही भिन्न हैं। पर अग्रवालों में जो उसका इतना अधिक सम्मान है, उसके दो कारण हो सकते हैं। पहला यह, कि अग्रवालों में नाग पूजा प्रचलित है। नागों का अग्रवालों के साथ घनिष्ट सम्बन्ध है। नाग पूजा की परम्परा मध्यकाल में अनेक भिन्न धाराओं में प्रचलित हुई। इनमें से एक लोकप्रिय धारा गूगा की पूजा के रूप में है। सम्भवतः, गूगा की अग्रवालों में जो पूजा होती है, इसका कारण यह है कि गूगा नागराज का मध्यकालीन रूपान्तर है। दूसरा कारण यह हो सकता है, कि जैसा हम ऊपर लिख चुके हैं, गूगा एक चौहान राजा था, जो हिसार के समीप महेरा में राज्य करता था। महमूद गजनवी के साथ वह बड़ी वीरता से लड़ा, और जनता में एक वीर के समान पूजा जाने लगा। अग्रवाल लोग उसी प्रदेश के निवासी थे, अतः उनमें गूगा की वीरता की स्मृति बड़े प्रबल रूप में कायम रही—और जब गूगा का रूप केवल एक वीर राजा का न रहकर दैवी हो गया, तो अग्रवाल लोग भी उसे देवता के समान पूजने लगे।[1]

---

1. गूगा के सम्बन्ध में अधिक जानने के लिये निम्नलिखित पुस्तकों को देखिये—

1. L. Ibbotson, Panjab Castes.
2. R. V. Russel, Tribes and Castes of the Central Provines.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(३)

अग्रहारी जाति

मध्य प्रान्त और बनारस में अग्रहारी नाम की एक वैश्य जाति पाई जाती है, जो आजकल अग्रवालों से पृथक् है। पर इस अग्रहारी जाति के लोग भी अपना निवास अगरोहा और आगरा से बताते हैं। इनके और अग्रवालों के गोत्रों में भी समता है। इसलिये श्रीयुत नेस्फील्ड[1] और श्रीयुत रसेल[2] ने कल्पना की है, कि इन अग्रहारी वैश्यों का अग्रवालों से घनिष्ट सम्बन्ध है। किसी समय ये दोनों एक थे, पर बाद में किसी बात पर मतभेद होने से अग्रहारियों की पृथक् बिरादरी बन गई। इनका खानपान आदि सब शुद्ध है, और व्यवहार भी प्रायः अग्रवाल वैश्यों के सदृश ही है।

वर्ण विवेक चन्द्रिका में एक श्लोक आता है, जिसके अनुसार इन अग्रहारियों में वर्ण संकरता सूचित होती है। वहां लिखा है, कि अग्रवाल पिता और ब्राह्मण माता से जो सन्तान हुई, उससे अग्रहारी, कसवानी

---

3. H. M. Elliot, Races of the North-Western Provinces of India.

4. H. A. Rose, A Glossary of the Tribes and Castes of the Panjab and North-Western Frontier Province, Vol. I.

1. J. C. Nesfield, Brief view of the Caste System of the North-Western Provinces.

2. R. V. Russel, Tribes and Castes of the Central Provinces

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और माहुरी वैश्यों की उत्पत्ति हुई ।[1] इस बात में सत्य का अंश कहां तक है, यह जानना सम्भव नहीं है । पुराने स्मृतिकारों ने विविध जातियों की उत्पत्ति की व्याख्या इसी प्रकार की वर्ण संकरता से की है । मनुस्मृति में इसी ढंग के वर्ण संकरों की एक लम्बी सूचि दी गई है । पर हमारी सम्मति में इसमें सत्यता नहीं है । हमारा विचार है, कि अग्रवाल जाति में से ही पृथक् होकर इन बिरादरियों की स्थापना हुई, वर्ण संकर के कारण नहीं । अग्रहारी वैश्यों का अग्रवालों से घनिष्ट सम्बन्ध है, यह बात निश्चित है ।

(४)

गहोई जाति

यह वैश्य जाति बुन्देलखण्ड में विशेषरूप से पाई जाती है । संयुक्त प्रान्त में मुरादाबाद आदि के समीपवर्ती जिलों में भी इस जाति के बहुत से वैश्य हैं । इस जाति में बारह गोत्र हैं, और इनके प्रायः सभी गोत्र अग्रवालों में भी हैं । इससे प्रतीत होता है, कि इस जाति का भी अग्रवालों से घनिष्ट सम्बन्ध है । सम्भव है, कि जिस प्रकार प्रसिद्ध वैशालक वंश से वर्णवाल और अग्रवाल जातियों का विकास हुवा, वैसे ही इस गहोई जाति का भी वैशालक वंश से ही विकास हुवा हो । गोत्रों की समता की व्याख्या इसी आधार पर की जा सकती है ।

---

1. अग्रवालस्य वीर्येण संजाता विप्रयोषिति
   अग्रहारी कसवानी माहुरी संप्रतिष्ठिताः ।।
   (जातिभास्कर पृष्ठ २६३)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(५)
बंक और अल्ल

अठारह गोत्रों के अतिरिक्त अग्रवालों में बहुत से बंक व अल्ल भी पाये जाते हैं, जो विविध परिवारों को सूचित करते हैं। केडिया, कानूनगो, कानोडिया, गोयनका आदि विशेषण न किसी पृथक् जाति का बोध कराते हैं, और न ही किसी पृथक् गोत्र का। ये विशेषण, जिन्हें बंक व अल्ल कहते हैं, विशेष परिवारों के सूचक हैं। ये बंक व अल्ल किसी प्रतापी पूर्वज व किसी स्थान विशेष के नाम से पड़े हैं। उदाहरण के तौर पर केडिया बंक को लीजिये। यह नाम केड़ नामक गांव से पड़ा, जिसके सम्बन्ध में निम्नलिखित कथा उल्लेखनीय है।

बारहवीं सदी में मुंडल जी नाम के एक प्रसिद्ध पुरुष हुवे। ये मंडल नामक स्थान पर जाकर बसे, जो भिवानी से तेरह मील की दूरी पर था। इनकी बारहवीं पीढ़ी में सेठ गोपीराम जी हुवे। उनके पाहुराम जी और भोलाराम जी नामक दो पुत्र हुवे। इन भाइयों की मंडल के शासक से कुछ अनबन होगई और इसी लिये इन्होंने मंडल को छोड़ दिया। उस समय भारत की राजनीतिक दशा बड़ी खराब थी। तैमूरलंग का आक्रमण अभी होकर ही चुका था। ऐसे विकट समय में जब ये दोनों भाई अपने पूर्वजों के घर को छोड़ कर किसी अज्ञात स्थान की ओर पश्चिम में चले जारहे थे, तो मार्ग में उस समय के प्रसिद्ध डाकू जबरदीखां से इनकी भेंट हुई। जबरदीखां ने इनकी सम्पत्ति को लूटना चाहा। मगर इन भाइयों ने अपनी बुद्धिमत्तापूर्ण बातों से उस डाकू के मन पर बहुत अच्छा प्रभाव

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

डाला, और उसे अपना मित्र बना लिया। उन्होंने उसकी सहायता से एक नया गांव बसाने की योजना बनाई। जबरदीखां के साथ बुधराम नाम का एक जाट था। वह भी बड़ा वीर था। इन दोनों भाइयों ने जबरदीखां और बुधराम के साथ मिलकर एक उपयुक्त स्थान ढूंढा और वहीं पर पन्द्रहवीं सदी के अन्त में कड़े नाम का गांव बसाया। जबरदीखां इस गांव का नवाब बना, और राज्य का सञ्चालन पाहुराम और भोलाराम करने लगे। इस केड़ गांव के नाम से ही इन भाइयों की सन्तान का बंक केड़िया हो गया। यदि यही घटना उस युग में होती; जब भारत में गणराज्यों का युग था और अग्रवालों की शस्त्रोपजीविता अभी नष्ट न हुई होती, तो ये दोनों भाई स्वयं ही इस राज्य के स्वामी होते, और इन से एक नये वंश का प्रारम्भ हुवा होता। ये भी 'पृथक् वंशकर्त्ता' कहाते। पर समय के परिवर्तन से ये किसी नये वंश के प्रवर्तक न बन कर, केवल नये वंक के ही प्रवर्तक बने।

इसी तरह सेठ तुलसीराम जी से तुलस्यान, सेठ जालीराम जी से जालान और सेठ भोजराज जी से भोजान वंशों का प्रारम्भ हुवा। इस तरह के बहुत से उदाहरण यहां एकत्र किये जा सकते हैं, पर वंकों व अल्लों का स्वरूप स्पष्ट करने के लिये इतने ही पर्याप्त हैं।

For Private and Personal Use Only

सातवां परिशिष्ठ

राजा अग्रसेन का वंशवृत्त

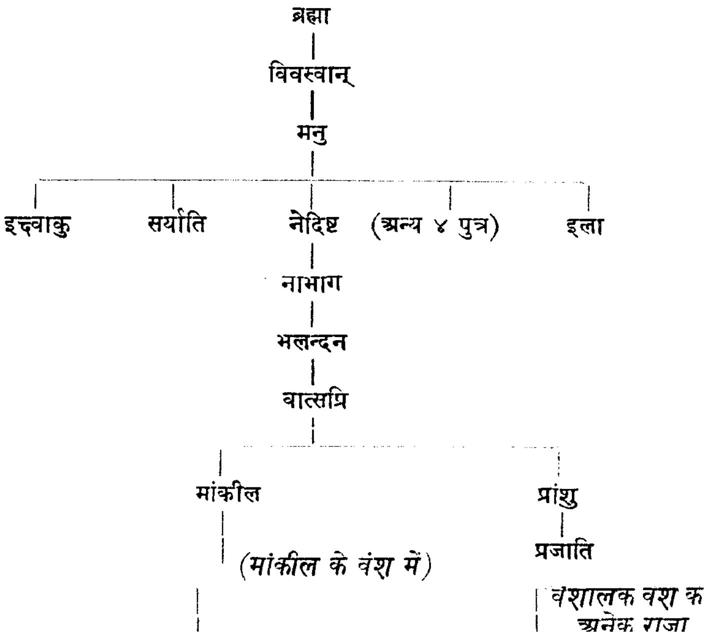

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

(मोकील के वंश में)

प्रजापति

वैशालक वंश के अनेक राजा

धनपाल

विशाल

(आठ कन्यायें, जो धनपाल के आठ पुत्रों से ब्याही गईं)

शिव नल नन्द कुमुद अनल वल्लभ कुन्द शेखर

आनन्द

अय

विश्य

(वंश में)

सुदर्शन

धुरन्धर

नन्दिवर्धन

अशोक

समाधि

गुणधी मोहन

For Private and Personal Use Only

वर्ण
(वर्णवाल वैश्यों का वंश)

(प्रौपत्र)
नेमिनाथ
- **बृन्द**
  - **गुर्जर**
    - (वंश में)
    - **रंग** (तथा अन्य ६६ पुत्र)
      - **विशोक**
        - **मधु**
          - (वंश में)
          - **महीधर**
            - **वल्लभ**
              - **अग्रसेन**
                - **विभु**
                  - **नेमिनाथ**
                - (तथा अन्य लड़के)
              - **शूरसेन**

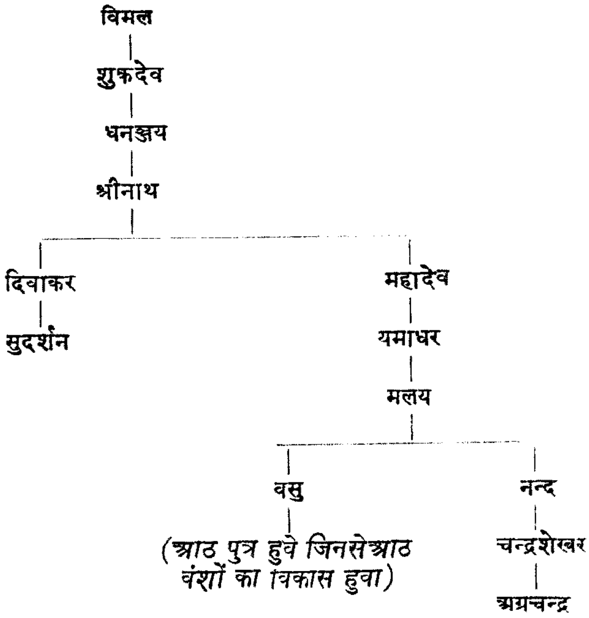
विमल
शुकदेव
धनञ्जय
श्रीनाथ
दिवाकर
सुदर्शन
महादेव
यमाधर
मलय
वसु
(आठ पुत्र हुवे जिनसे आठ वंशों का विकास हुवा)
नन्द
चन्द्रशेखर
अग्रचन्द्र

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सहायक पुस्तकों की सूचि

(क) जाति भेद विषयक ग्रन्थ

1. Atkinson (E. T.) . Statistical, Descriptive and Historical account of the North-West Provinces of India. 14 Vols. Allahabad 1874-84.
2. Baines (Sir A.), Ethnography (Castes and tribes), Strassburg 1912.
3. Bower (Rev. H.) An Essay on Hindu caste Calcutta 1851.
4. Buchanan. Eastern India, 2 Vols.
5. Crooke (W.) The Natives of Northern India 1907.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

6. Crooke (W.) The North Western Provinces of India, their history, ethnology and administration. London 1897.
7. Crooke (W.) An Ethnographical Hand Book for the North Western Provinces and Oudh. Allahabad 1890.
8. Crooke (W.) The tribes and castes of North Western Provinces and Oudh, Allahabad 1940.
9. Crooke (W.) Introduction to the popular religion and folklore of Northern India. Allahabad 1894.
10. Dalton (E. T.) Descriptive Ethnology of Bengal. 1872.
11. Das (A. C.) the Vaisya Caste, Calcutta 1903.
12. Denie (J.) Panjab, North West Frontier Province, and Kashmir. Cambridge. 1916.
13. Elliot (H. M.) Memoirs on the History, folklore and distribution of the races of the North Western Provinces of India, being an amplified edition of the supplementary Glossary of Indian terms. Revised by J. Beans. 2 Vols. London 1864.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

14. Enthovan (R. E.) Tribes and castes of Bombay 1922.

15. Enthovan (R. E.) Notes for a lecture on the Tribes and castes of Bombay. 1907.

16. Ibbotson (D. ch. J.) Outlines of Punjab ethnography, being exracts from the Punjab census report of 1881, treating of religion, language and caste, Calcutta 1893.

17. Irving (B. A.) Theory and practice of caste in India. London 1833.

18. Kitts (E. J.) A compandium of the castes and Tribes found in India compiled from the census reports for the various provinces (excluding Burma) and native states of the empire. Bombay 1885.

19. Mepes (M.) The people of India. London. 1910.

20. Nesfield (J. C.) Brief view of the caste system of the North Western Provinces and Oudh, togather with an examination of the names and figures shown in the census report 1822. Allahabad 1682.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

21. Pramatha Nath Mallik, History of the Vaisyas of Bengal. Calcutta 1903.

22. Risley (H. H.) The People of India, with 8 Appendices, Calcutta 1908.

23. Risley (H. H.) The Tribes and castes of Bengal, North Western Provinces and Punjab. I. Anthropometic data. II. Ethnographic glossary. 4 Vols. Calcutta 1861-2.

24. Rose (H. A.) A Glossary of the tribes and castes of the Punjab and the N. W. F. Province.

25. Russell (K. V.) Tribes and castes of the Central Provinces, 1916.

26. Senart (E.) Les castes dans L' Inde, les faits et les systemes. Paris 1896.

27. Sherring (M. A.) Hindu Tribes and castes. 3 vols. Calcutta, Bombay and London 1872-81.

28. Sherring (M. A.) The Sacred city of the Hindus, an account of Benaras in ancient and modern times, with an introduction by F. Hall. London 1868.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

29. Watson (J. F.) The People of India, London 1868-75.

ख. अग्रवाल-इतिहास सम्बन्धी पुस्तकें

१. भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र—अग्रवालों की उत्पत्ति (वैंकटेश्वर प्रेस, बम्बई)

२. लाला रामचन्द्र—अग्रवाल उत्पत्ति (अग्रवाल सभा अजमेर)

३. ब्रह्मानन्द ब्रह्मचारी—श्री विष्णु अग्रसेन वंश पुराण (अगरोहा, जिला हिसार)

४. ब्रह्मानन्द ब्रह्मचारी—सचित्र इतिहास अग्रवंश कुल भूषण (लाला दौलतराम अग्रवाल, हाता सवाईसिंह कानपुर)

५. लाला मुंशीराम—अग्रवाल मीमांसा (मार्तण्ड प्रेस, दिल्ली)

६. बालचन्द मोदी—अग्रवाल इतिहास परिचय (वणिक् प्रेस, कलकत्ता)

७. वैश्य अग्रवाल इतिहास (अग्रवाल राजवंश सभा मेरठ)

८. सुखानन्द मालवी—अग्रवाल वंश कौमुदी

९. मुंशी अनूपसिंह—संक्षेप वृत्तान्त

१०. मुख्तसिर हालात महाराजा अग्रसेन (जफर प्रेस, मुरादाबाद)

११. मुंशी रघुवीरसिंह—जीवनी अग्रसेन महाराज

१२. श्री बिहारीलाल जैन—अग्रवाल इतिहास (चैतन्य प्रेस, बिजनौर)

१३. बाबू सुमेरचन्द अग्रवाल—अगरवाल वंशावली

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

१४. बाबू रामचन्द्र गुप्ता—अग्रवंश अर्थात् अग्रवाल जाति का इतिहास

१५. वक्षीराम पुत्र शिवप्रताप—राजा अग्रसेन का जीवन-चरित्र (इन्दौर)

१६. हीरालाल शास्त्री—अग्रवालवैश्योत्कर्ष (बम्बई)

१७. श्री चन्द्रराज भण्डारी—अग्रवाल जाति का इतिहास

ग. जाति भेद विषयक अन्य पुस्तकें

१. श्री० ज्वालाप्रसाद मिश्र—जाति भास्कर

२. पंडित छोटेलाल—जाति अन्वेषण

घ. संस्कृत ग्रन्थ

१. अग्रवैश्यवंशानुकीर्तनम् (महालक्ष्मी व्रत कथा)

२. उरु चरितम्

३. महाभारत (कलकत्ता तथा निर्णय सागर प्रेस, बम्बई से प्रकाशित)

४. कौटलीय अर्थशास्त्र (शाम शास्त्री, माइसूर १९१९)

५. वायु पुराण (आनन्दाश्रम)

६. ब्रह्माण्ड पुराण (श्री वैंकटेश्वर)

७. ब्रह्म पुराण (आनन्दाश्रम)

८. हरिवंश पुराण (कलकत्ता)

९. पद्म पुराण (आनन्दाश्रम)

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

१०. मार्कण्डेय पुराण (पार्जीटर)
११. विष्णु पुराण (विल्सन)
१२. प्रवर मंजरी—गोत्र प्रवर निबन्ध कदम्बकम् (श्री वैंकटेश्वर, बम्बई)
१३. अग्नि पुराण (जीवानन्द विद्यासागर)
१४. भागवत पुराण (गणपत कृष्ण जी)
१५. पाणिनीयाष्टकम्
१६. महाभाष्यम् (कील्हॉर्न)
१७. मनुस्मृति (निर्णय सागर)
१८. याज्ञवल्क्य स्मृति (निर्णय सागर)
१९. महावंशो (W. Geiger)
२०. बुद्धचर्या (राहुल सांकृत्यायन)
२१. बौधायन धर्मशास्त्र
२२. पाराशर स्मृति
२३. धर्मशास्त्र संग्रह (जीवानन्द विद्यागर)
२४. वर्ण विवेकचन्द्रिका (श्री वैंकटेश्वर प्रेस, बम्बई)
२५. राजतरङ्गिणी कल्हण कृत
२६. श्रुतावतार कथा (बम्बई)
२७. मंजुश्रीमूलकल्प (जायसवाल)
२८. A Catalogue of the Sanskrit and prakrit Manuscripts in the India Institute Library, Oxford.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

२१. रविषेण पद्मचरित (कीथ)

ङ. मर्दुमशुमारी की रिपोर्टें

मर्दुमशुमारी की विविध रिपोर्टें जाति विषय के अध्ययन के लिये बहुत उपयोगी हैं। इनकी सभी रिपोर्टों में Caste तथा Tribe विषयक अध्यायों में बहुत सी ऐसी सामग्री रहती है, जो जातीय इतिहासों के लिये बड़े महत्व की है।

च. गेजेटियर

1. The Imperial Gazateer of India 3rd. ed. 26 Vols. Oxford 1607-9. (Vol. I. Chapter VI. Ethnography and Caste)
2. The Imperial Gagateer of India, Provincial Series. 1907.
3. The District Gagateers of India.

[विशेषतया हिसार (पंजाब), रोहतक (पंजाब), करनाल (पंजाब), शिमला (पंजाब), बिजनौर (यू० पी०), इटावा (यू० पी), बनारस (यू० पी०), आगरा (यू० पी०), मुजफ्फरनगर (यू० पी०), अलाहाबाद (यू० पी०), मेरठ (यू० पी०), बुलन्दशहर (यू० पी०) और छत्तीस गढ़ (मध्य प्रान्त) के गेजेटियर।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

4. The Panjab and Rajputana State Gazateers.

छ. विविध ऐतिहासिक ग्रन्थ

1. Bernaulli, Description historique et Ge'ographique de L'Inde.
2. Renell (J.). Memoir of a map of Hindostan, or, the Mogul Empire; and a map of the countries between the Indian rivers and Caspian, account of the Ganges and Barrampooter rivers etc London 1788.
3. McCrindle (J. W.), Ancient India as described by Megasthenes and Arrian. Bombay 1877.
4. McCrindle (J. W.) Ancient India as described by Ptolemy. Bombay, 1885.
5. McCrindle (J. W.). The Invasion of India by Alexender the Great as described by Arrian, Q. Curtius, Plutarch, Justin, and other classical authors. London-Westminster 1893.
6. Smith (V. A.), The Early History of India. Oxford 1924.
7. Rapson (E. J.), The Cambridge History of India, Vol. I. 1922.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

8. Rhys Davids (J. W.), Buddhist India. London 1903,

9. Tod (J.), Annals and Antiquities of Rajasthan or the Central and Eastern States of India, 2 Vols. Calcutta.

10. Pargiter (F. E.), Ancient Indian Historical Tradition. London 1922

11. Pargiter (F. E.), Dynasties of the Kali Age, London 1913.

12. Le′vi (S.) Le Ne′pal. E′tude historique d′un Royaume Hindou, 3 Tomes. Paris, 1905-1908 (Annales du Muse′e Guimet, Bibliothe′que d′ E′tudes, t. XVII-XIX)

13. Griffin (L. H.), The Rajas of the Panjab, being. the History of the principal states in the Panjab and their political relations with the British Government. Lahore 1870.

14. Vaidya (C. V.), Hisrory of Medieval Hindu India,3 Vols. Poona.

15. Jayaswal (K. P.), Hindu Polity, 2 Parts.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

16. Jayaswal (K. P.), An Imperial History of India. Lahore.

17. Jayaswal (K. P.), The Political History of India.

18. Rockhill, Life of Buddha.

19. Rodgers (C. J.), The Revised list of objects of Archeological interests in Panjab.

20. Elliot (Sir H. M.) and Dowson (Prof. John) The Histoty of India as told by its own Historians. Trïibner and Co. 1867-77.

21. Cunningham (A.), The Ancient Geography of India. London 1871.

22. Rayachaudhary (H.) Political history of Ancint India. Calcutta 1927.

23. Bhandarkar (D. R.) Lectures on the Ancient History of India. Calcutta 1919.

24. Kennedy (J.) The Pauranic Histories of the early Aryas. J. R. A. S. 1915.

25. Dey (N. L.) Geographical Dictionary of Ancient and Mediaeval India. Calcutta 1899.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

26. Smith (V. A.), Autonomous Tribes of the Panjab, conquered by Alexander the great. J. R. A. S. 1930.

27. Watters (T.), On Yuan Chwang. London. 1904-5.

28. Senart (E.), Les Inscriptions de Piyadasi. Paris 1881, 1886.

29. Fleet, Inscriptions of the early Gupta kings.

30. Sitaram Kohli—Zafarnama Ranjit Sinha.

31. Shamlal's Diary of Ranjit Sinha.

32. Temple (R. C.), The Legends of Panjab.

33. Munshi Shev Shankar Singh and Pandit Shri Gunananda. History of Nepal (Translated from the Parbatiya) edited by Daniel Wright. Cambridge University Press.

३४. सत्यकेतु विद्यालंकार—मौर्य साम्राज्य का इतिहास (इण्डियन प्रेस इलाहाबाद)

३५. जयचन्द्र विद्यालंकार—भारतीय इतिहास की रूप रेखा (हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाहाबाद)

36. Law (B. C.), Some Kshatriya Tribes of Ancient India. Calcutta 1924.

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

37. A Collection of Sanskrit and Prakrit Inscriptions of Kattyawar, published by order of H. H. the Maharaja of Bhawanagar,

38. Cowell (E. B.) Jataks. Cambridge 1895-1913.

39. Hultzsch, The Inscriptions of Asoka (Corpus Inscriptionum Indicarum)

40. Haig (Sir W.) The Cambridge History of India Vol. III. (Turks and Afghans) Cambridge 1928.

४१. व्रजरत्नदास—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ।

For Private and Personal Use Only

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शब्दानुक्रमणिका

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शब्दानुक्रमणिका

(यहां केवल मुख्य ग्रन्थ के शब्दों की ही अनुक्रमणिका दी गई है, परिशिष्ट की नहीं। मुख्य ग्रन्थ के भी केवल महत्वपूर्ण-शब्द ही दिये गये हैं। यह यत्न नहीं किया गया, कि एक शब्द जहां जहां आया है, उन सब स्थानों की पृष्ठ संख्या दी जाय। केवल वही पृष्ठ संख्या दी गई है, जहां उस शब्द का विशेष महत्व है।)

अकबर मुगल बादशाह ५१
अगर वंश ६१
अगलस्सि राज्य ४४, १४३, १४४
अगस्त्य गोत्र १३०
अगारा नगर ४४, ५५, ५६
अगरोहा अग्रवालों का मूल निवास स्थान २०, २२, ३९, ४१; का सेठ हरवंशसहाय ४०; की खुदाई ४१; का वर्णन

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

४७—४९; का किला ४८; का खेड़ा ४८; की प्राचीनता ५२—५७; का बर्नार्यी द्वारा उल्लेख ५३; के खण्डहरों का हिसार के निर्माण में उपयोग ५४; की तुगलक वंश के शासन में स्थिति ५४; का टॉल्मी द्वारा उल्लेख ५५; की अगारा से एकता ५५—५६; की कुशान साम्राज्य में स्थिति ५६; के समीप अन्य प्राचीन स्थान ५५, ५७; में प्राप्त सिक्के ५६; पर विदेशी आक्रमण १४२; का पतन और अन्त १४९—१५२

अग्र ६०, ६१

अग्र वंश ६१, ११६

अग्र पुराण ३९

अग्रवैश्यवंशानुकीर्त्तनम् परिचय ३४—३५

अग्रवाल जाति १७; अग्रवालों की जनसंख्या १२—२०; का उपनाम 'गुप्त' १८; की आबादी का विविध स्थानों पर अनुपात १९- २०; के भेद २०—२८; की आजीविका २८; में शिक्षितों की संख्या २९; की सामाजिक दशा ३०—३१; में सतियों की पूजा ५७; अग्रवाल जाति की उत्पत्ति ५८—५९; की राजपूतों से उत्पत्ति का मत ८४; में पुरानी राजसत्ता के चिह्न ८७; की आठ मातृकायें १८०; का जैन धर्म में दीक्षित होना ११७; का नागों से सम्बन्ध १२०; में नाग पूजा २२१; के गोत्र १२५—१३५; के प्रवर, गोत्र व शाखा १२८

अग्रवाल इतिहास की सामग्री ३३

अग्रवाल महासभा अखिल भारतीय ३१

अग्रचन्द राजा ११८

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अग्रसेन राजा, नागकन्या से विवाह ८९; के राज्य की सीमा तथा क्षेत्र ९०; का इन्द्र के साथ विरोध ९२; का महालक्ष्मी की उपासना कर उसे संतुष्ट करना ९१; कोलपुर के नागराज की कन्या से स्वयंवर ९१—९२; इन्द्र के साथ मैत्री ९२; पुनः महालक्ष्मी की आराधना ९२—९३; अग्रा नगरी की स्थापना ९३; साढ़े सतरह यज्ञ ९४—९६; मांस भक्षण तथा हिंसा का निषेध ९५—९६; राज्य का परित्याग ९७; अग्रवाल जाति में अग्रसेन का महत्व ९८; पृथक् वंशकर्त्ता ९८; अग्रसेन का वंश १००; के पूर्वज १००—१०९; का काल ११०—११३; के उत्तराधिकारी ११५—११९, के पुत्रों का नाग कन्याओं से विवाह १२०

अग्रोहा (अगरोहा) ५६

अनल राजा ५०

अभिजन ७०

अनन्तरापत्य १३२, १३३

अनुभाग राजा १०५

अमरसिंह राजा ५०

अवधबिहारीलाल लाला ३१

अरायन जाति ८०

अरट्रियोई जाति ८१

अरोड़ा जाति ८९

अम्बाला डिविजन में अग्रवालों की संख्या ११

अवत्सार १४१

अय राजा १०३

अयोध्या १०१

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अत्रि गोत्र १२२, १३०
अहि नगर १२०
अश्वमेध यज्ञ १२२
आगरा नगर ५१, ५२, ५५, ५६; में अग्रवालों की संख्या २०
आग्रायण ६०, ६१
अग्नि ६०
आग्रेय गण ४३, ५८, ५९, ६१, ६८, ८१
आभीर गण ८०
आन्ध्र वंश ७३, ७४
आनन्द राजा १०३
आनर्त राज्य १०१
आरट्ट देश ८१
आर्जुनायन गण ८१, १४४
आस्तीक मुनि १२१
इक्ष्वाकु राजा १०१, १०९
इबट्सन ४५
इटावा ४६
इडविडा १०८
इन्दौर ३९
इन्द्र ८९, ९०
इण्डिया इन्स्टिट्यूट लायब्रेरी ६१
इलाहाबाद ८०
ईलियट ४५, ५३, ८५
उरु राजा चन्द्रवंशी ३६
उरु चरितम् परिचय ३६—३७
उज्जैन ५१

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एकराज ६३
एच्वाकव वंश १०१
एन्थोवन ४५
एरण गोत्र १२६, १२९
ओसनगर ८४
ओसवाल ८४, ८५
अंगिरा गोत्र १३५
कपिलवस्तु ६६
कर्ण दिग्विजय ५९
कर्ण राजा ५९
कदीमी अग्रवालों का एक भेद २५
कम्बोडिया देश ५२
कम्बोज गण ७२, ७३
कम्बोह जाति ८२
कलियुग संवत् १११; का काल
कल्माशपाद राजा ११२
कान्ती ८९
कासिल (कौशिक) गोत्र १२६
काश्यप गोत्र १३०
कारिन्थ राज्य ८६
कार्थेज नगर ८६
काइयां अग्रवालों का एक भेद १२
कुबेर (धनद) २०९, अगरोहा में प्राप्त मूर्ति १०९
कुमुद राजा ८९, १०३
कुन्द राजा ८९, १०३
कुकुर गण ७२

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुरु गण ७२
कुशन (कुशान) युग ४१; काल के सिक्के ५६; राजा ५६, ७३, १२२
कृष्ण २३
कैडफिसस विम ५६, १२३
कोशल राज्य ६६
कोलपुर नगर ८९, ११५
कौटल्य (चाणक्य) ७८
कौटलीय अर्थशास्त्र १७, ४५, ७०, ७१, ७८, ८६
खत्री जाति ७८, १०६
खनित्र राजा १०२
खण्डेल नगर ८४
खण्डेवाल जाति ८४
गण ५९, ६६ ,६९, ७०; गण राज्यों का जातियों में परिवर्तन ६४, ६५; गणों का अभिप्राय ६२; गणों के वर्तमान प्रतिनिधि ७७--८३
गर्ग मुनि ९४; गोत्र १२६, १२९
गरवाल (गावाल, गौतम) गोत्र १२६, १२९
गवन गोत्र १२६, १२९
गङ्गाराम सर ३१
गावाल गोत्र १२६, १२९
गाथायें पुरातन ३३
गिंदौड़िया दस्सा अग्रवालों का एक भेद २५
गुजरात ५१, ५२, ८९
गुड़ाकुर दस्सा अग्रवालों का एक भेद २५
गुप्त अग्रवालों का उपनाम १८; साम्राज्य ७६; वंश १०८
गुणधी राजा १३९

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गुर्जर राजा ८९, १०१
गूगा पीर १२१
गेजेटियर ४६, ५०
गोकुलचन्द १४२
गोभिल गोत्र १२६, १२९
गोत्र ४५; अग्रवालों के गोत्र १२६-- १२८ गोत्र सम्बन्धी प्राचीन मत १३०; मूल आठ गोत्र १३०; पाणिनीय व्याकरण के अनुसार गोत्र १३२--१३३; चार मूल गोत्र १३५;गोत्रों का असंख्य होना १३६, लेखक का गोत्र सम्बन्धी मत १३७--१४१
गोत्रापत्य ६०, १३२--१३४
गोत्रकृत् १३७
गौतम गोत्र १३०
गौड़ देश १४९
ग्राम्य गीत ४०--४१
ग्रीक आक्राता ६४; यात्री ४४; लोग ५५
ग्रीस ५५
घनश्याम भट्ट ३९
चक्रवर्ती सम्राट ६३
चरा अग्रसेन की रानी ११५; १७३
चन्द्रगुप्त मौर्य्य सम्राट ११७
चन्द्रशेखर राजा ११८
चाणक्य आचार्य ७०; ७२
चातुर्वर्ण्य ८५
जगींद अग्रवालों का एक भेद २५
जन (tribe) ६३, ६५, ६६
जनपद ६२, ६३, ६६

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जनमेजय राजा १२१
जम्बू द्वीप १०३
जयपुर राज्य ८४
जसपुर ३९
जसराज भट्ट ३९
जानपद सभा ६२, ६३
जानसठ २६
जियाउद्दीन बारनी ५४
जैन अग्रवाल २२; जैन अग्रवालों की संख्या २३; का अन्य अग्र-
वालों से सम्बन्ध २३, २४, अग्रवालों का जैन होना ११७
जैन साहित्य ३३
जोहिया राजपूत जाति ८२, ८३
टाड ८५
टालमी ४४, ५५
टैम्पल ४०
डिवाई २५
ढिंगल गोत्र १२६
ढेलन गोत्र १२६
तक्षक नागराजा १२१
तायल (धान्याश) गोत्र १२३, १२९
तिब्बती अनुश्रुति ३९
तित्तिल (ताण्डेय) गोत्र १२३, १२९
तुन्दल गोत्र १२६, १२९
तुगलक वंश १४, ५३, ५४
तुलाराम भट्ट ३९
तृण बिन्दु १०८, १०९

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दर्भ ६०

दस्सा अग्रवाल २४, अन्य जातियों में दस्सा का भेद २५, दस्सा अग्रवालों के भेद २५

दशानन ४३

दार्भायण ६०

दार्भिः १०

दिलवालिये दस्सा अग्रवालों का एक भेद २५

दिष्ट राजा १०१

दिवाकर राजा ११६, जैनधर्म स्वीकार ११७, का काल ११८

दिंगल (तिंगल) गोत्र १२६

धनद राजा १०८, १०९

धनपाल राजा ८८, ८९, १००, १०२, ११२

धनञ्जय राजा ११६

धर्म केतु राजा ११२

धृष्ट १०१

धैरण गोत्र १२९

नन्द वंश ६४, राजा ८९, १०३

नन्नूमल दीवान ५०

नल सन्यासी ८९, १०३

नामपंक्ति ७३

नाभक ७३

नाग वंश और जाति ४५, १०८; राजा ११५, १२०; कन्या ३९, ९१—९३, ११५, १२३; कुमारी ४२, १०२; राज ११५, १२०; लोक ८९

नेमिनाथ ८९, १०३; विभु का लड़का ११६

पञ्चाल गण ६६, ७३

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पछाइये अग्रवाल २१
पसेनदी (प्रसेनजित्) राजा ६६, ६८
पाण्डय देश ५२
पाटलिपुत्र ७९
पाणिनि मुनि ४४, ६०, ७०
पिप्पलिवन ७९
पुर ६२, ६६; पौर सभा ६२
पुरबिये अग्रवाल २१
फतेहाबाद तहसील ४७
फर्रुखसियर मुगल बादशाह २६,४३
फणीन्द्र सुता १२३
फिनीशिया ८६
फीरोजशाह तुगलक ५६, ५४
बर्नोय्यी ५२, ५६
बनिया जाति, राजपूतों से उद्भव ८४
बीसा अग्रवाल २४; अन्य जातियों में बीसा का भेद २५; बीसा और दस्सा का भेद २५, ४३
बांगड़ २२; बांगड़ी २१
बालविवाह अग्रवालों में ३०;का परिणाम ३१
बिम्बिसार राजा ८०
बिन्दल गोत्र १२६
बेन्स १८
बैक्ट्रियन आक्रान्ता ७३
बौद्ध साहित्य ४५, ८२
ब्रह्मानन्द ब्रह्मचारी ३९
भनन्दन (भलन्दन) वैश्य 'प्रवर' ३७, १०२, १०५, १०७

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भट्ट (भाट) ३९; वाणी मूल ३९
भद्र गण ५८, ५९
भविष्य पुराण ३४; भविष्योत्तर पुराण ३२१
भव्यका १०८
भद्रबाहु स्वामी श्रुतकेवलि ११६
भवानी अग्रसेन की रानी ११५, १७३
भाट सूतों के वर्तमान प्रतिनिधि ३८; भाटों के गीत ३७; के संग्रह ३९—४०; से प्राप्त अनुश्रुति ४१
भारशिव वंश १२२, १२४
भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ३४
मगध ६३, ६१
मदुरा (पाण्ड्य देश की राजधानी) ५२
मधुरा (कम्बोडिया की राजधानी) ५२
मथुरा (शौरसेन देश की राजधानी) २०, ८०, ५२
मर्दुमशुमारी १८—२०, २२, २४, २९, ४५
मद्र ७०; मद्रक ७२
मरुभूमि ७७
मधु राजा १०४
मनु राजा १०० १०१ १०३ १०५
महमिये अग्रवालों का एक भेद २१,२२
मल्ल राज्य ६६
महानाम शाक्य ६८
महालक्ष्मी ३४, ९१—९३; व्रतकथा
महाभारत युद्ध ११४
महीधर राजा ८९, १०४
महीरथ राजा ९१

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मारवाड़ २०, २१; मारवाड़ी अग्रवाल २१;
मालती ८९, १०८
माधवी नागकन्या ८९, अग्रसेन की रानी ११५, १७३
मित्तल गोत्र १२६
मित्रा अग्रसेन की रानी ११५, १३३
मुरारीदास अगरवंशी ६१
मुकुटा ८९
मेवाड़ी अग्रवालों का एक भेद २२
मैसिडोन ४४, ५५, ६३
मोरिय गण ७९, ६६
मोरई जति ७९
मोद १०६
मोतीचन्द डाक्टर ३४
मौर्य ६४, ७१—७४, ७९
मंगलदेव पंडित ३६
मंगल (मुङ्गल) गोत्र १२६
मांकील (सांकील) वैश्य 'प्रवर' ३७, १०३, १०५
यमाधर राजा ११८
याज्ञवल्क्य मुनि १०४
युवापत्य १३२, १३६
यूनानी लोग ५५
यूरोप ८६; में जाति भेद विकसित न होने का कारण ८६—८७
यौधेय गण ७३, ७६, ८२ ११९
रजा विशाल की कन्या ८९, १०८; अग्रसेन की रानी ११५, १७३
रतनचन्द राजा २६—२७, १४०
रथीतर वंश १०१

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रम्भा अग्रसेन की रानी ११५, १७३
रसेल ८४,८५
राकहिल ६९
राजर्स ४८
राजवंशी २६, ४२
राजा की बिरादरी (राजाशाही) २६, ४२
रिसले ४५, १२५
रिसालू (राजा रिसाल) ४०, ५६, ५७; रिसालू खेड़ा ५७
रुद्रदामन शक ८२
रोहतक नगर ५९, १९, ८१
रोहितक गण ५८, ५९, ८१
रोहतगी (रस्तौगी) जाति ८१
रौनियार जाति १०६
रंग (रंग जी) राजा १०४, ८९
लक्ष्मीराम पुत्र शिव प्रताप ३९
लिच्छवि ६९; लिक्छविक ७२
लोहागढ़ २२
लोहाचार्य स्वामी ११७
लोहिये अग्रवालों का एक भेद २१
वत्सिल (बांसल) गोत्र १२६
वर्धन वंश १०७
वर्णवाल जाति १३८, १३९
वल्लभ ८९, १०३
वसु राजा ११८
वार्ता का लक्षण १७, वार्तोपजीवि १८, वार्ताशस्त्रोपजीवि ७२,
७८—८०,८६, १०७

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वात्सप्रि (वात्सप्रिय) वैश्य 'प्रवर' ३७, १०२, १०३, १०७
वासुकि नागराज १२१
विदेह ६६, १०१
विम कैडफिसस ५६
विजगीषु ७०
विभु राजा ९७, १११, ११६
विमल राजा ११६
विशाल राजा ८९, १०८, १०९
विष्णुराज ८९
वृजि ७०, ७१, वृजिक ७०, ७२
वैशाली ६९, १०१
वैशालक वंश ३७, ४३, ९८, १०१
वंशकृत् १३७
शक ६४, ७४
शर्याति १०१
शची अग्रसेन की रानी ११५, १७३
शम्सा ए—सिराज अफीफ ५३
शाक्य ६६—६९, ७१
शिव राजा ८८, ८९, १०३
शिवि गण ७३
शीलो (शीलादेवी) ४०, ५६, ५७
शुकदेव राजा ११६
शुंग वंश ७३, ७४
शूरसेन अग्रसेन का भाई ३६, ९४—९६, १०४
शेखर राजा १०३
शैशुनाग वंश ६४, ६५

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शैरिंग ४५, १२५
श्रावस्ती (सावट्ठी) ६३
श्रेणिय विम्बिसार ८०
श्रेणि गण ७२, ७९
समाधि राजा ८९, १०२
समुद्रगुप्त प्रशस्ति ८०, ८२
संथागार (सभाभवन) ६७
सहरालिये अग्रवालों का एक भेद २१
सामन्तभद्र स्वामी ११७
सिकन्दर मैसिडोन का राजा ४४, ४५, ६४, १४३
सियालकोट ४०, ५६
सुभगा ८९
सुदर्शन राजा ८९, १०२
सूत ३७, ३८
सैयद बन्धु २६
संघ ६९, ७०, ७२
सांकील (मांकील) वैश्य 'प्रवर' ३७
हरभज शाह (हरवंशसहाय) ५७
हरि राजा ८९
हरिहर राजा १०१
हरियानिये अग्रवालों का एक भेद २२
हर्षवर्धन महाराज २३
हस्तिनापुर ५९
हाल के अग्रवालों का एक भेद २५

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चित्र-परिचय

इस पुस्तक के मुख-पृष्ठ पर जो चित्र है, वह कुबेर का है। यह मूर्ति अगरोहा की खुदाई में मिली थी। सन् १८८९ में सरकार के पुरातत्व-विभाग की ओर से अगरोहा की जो खुदाई शुरू हुई थी, उसमें अनेक महत्वपूर्ण मूर्तियां व अन्य कृतियां उपलब्ध हुईं थीं—यह मूर्ति उनमें से एक है। अगरोहा के ये अवशेष लाहौर के म्यूजियम में सुरक्षित हैं। कुबेर की इस मूर्ति के सिर पर नाग का चिह्न है। अग्रवंश का नागों के साथ विशेष सम्बन्ध था। कुबेर (धनद) की इस मूर्ति पर नाग का चिह्न होना भी महत्व की बात है।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लेखक की अन्य पुस्तकें

१. **मौर्यसाम्राज्य का इतिहास**—इस पुस्तक पर लेखक को हिन्दी साहित्य सम्मेलन इलाहाबाद से १२००) रु० का मंगलाप्रसाद पारितोषिक मिला है। हिन्दू यूनिवर्सिटी काशी ने इसे इतिहास के एम. ए. के कोर्स में नियत किया है। मूल्य ५)

२. **बौद्धकाल का राजनीतिक इतिहास।** मूल्य १॥)

३. **भारतवर्ष का इतिहास** (प्रथम भाग) स्कूलों के लिये। मूल्य १)

४. **अपने देश की कथा**—छोटे बच्चों के लिए सरलभाषा में लिखा हुआ भारतवर्ष का इतिहास। मूल्य ॥)

५. **वसीयतनामा**—फ़्रांस के सुप्रसिद्ध कहानी लेखक मोपासां की कहानियों का अनुवाद। मूल्य १)

६. **अग्रवाल जाति की उत्पत्ति तथा प्राचीन इतिहास**—(फ्रेंच भाषा में)। मूल्य ३)

७. **यूरोप का आधुनिक इतिहास** (छप रहा है)
पहला भाग—**फ़्रांस की राज्यक्रान्ति।**
दूसरा भाग—**उन्नीसवीं सदी।**
तीसरा भाग—**वर्तमान यूरोप।**
तीनों भागों का मूल्य ५)

इतिहास सदन
कनाट सर्कस, नई दिल्ली।

For Private and Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

देश-विदेश

(बिलकुल नये ढंग का सचित्र मासिक पत्र)

सम्पादक—**प्रोफेसर सत्यकेतु विद्यालंकार डी० लिट०**

यह पत्र एक जनवरी सन् १९३९ से भारत की राजधानी नई दिल्ली से प्रकाशित हो रहा है। इसमें निम्नलिखित विषय रहेंगे।

(१) भारत तथा अन्य देशों की राजनीतिक, आर्थिक सामाजिक व अन्य समस्याओं पर निष्पक्षपात तथा वैज्ञानिक दृष्टि से विचार।

(२) महीने भर की सब महत्त्वपूर्ण घटनाओं पर लेख।

(३) अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का सरल रीति से विवेचन।

(४) भारत के विविध प्रांतों तथा रियासतों की प्रगति का दिग्दर्शन।

(५) इतिहास तथा राजनीति सम्बन्धी नवीन साहित्य की समालोचना।

इस ढँग का कोई भी मसिक पत्र अबतक हिन्दी में नहीं है। देश-विदेश की आधुनिक समस्याओं को समझने के लिये इस पत्र को अवश्य पढ़िये।

वार्षिक मूल्य ५॥) **एक अंक का मूल्य ॥)**

इतिहास सदन की नई पुस्तकें

(शीघ्र प्रकाशित हो रही हैं)

(१) यूरोप का आधुनिक इतिहास—लेखक सत्यकेतु विद्यालंकार डी. लिट.

पहला भाग—**फ्रांस की राज्यक्रान्ति**

दूसरा भाग—**उन्नीसवीं सदी**

तीसरा भाग—**वर्तमान यूरोप**

प्रत्येक भाग में २५० पृ

तीनों भाग एक साथ ले

(२) पैरिस की सैर—ले ... ास्त्री।

श्रीमती सुशीला दे ... मी भारत लौटी हैं।

एक महिला की दृ ... जये। **मूल्य केवल १)**

मिलने का पता—**इतिहास सदन**

चमनलाल बिल्डिंग, कनाट सर्कस, नई दिल्ली।

Serving JinShasan
044560
gyanmandir@kobatirth.org

For Private and Personal Use Only